परिप्रेक्ष्य

शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक-आर्थिक संदर्भ

वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय
17-बी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

500 प्रतियां

© राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय, 2010
(भारत सरकार द्वारा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अधिनियम 1956 की धारा 3 के अंतर्गत घोषित)

इस पत्रिका का प्रकाशन प्रति वर्ष अप्रैल, अगस्त और दिसंबर माह में किया जाता है। इसकी प्रतियां चुनिंदा और इच्छुक व्यक्तियों तथा संस्थानों को नि:शुल्क भेजी जाती हैं। यह न्यूपा की वेबसाइट: www.nuepa.org पर नि:शुल्क उपलब्ध है। इसे प्राप्त करने के इच्छुक व्यक्ति और संस्थान निम्निलिखित पते पर आवेदन करें :

अकादमिक संपादक

परिप्रेक्ष्य

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय (न्यूपा)
17-बी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय (न्यूपा) के लिए कुलसचिव, न्यूपा द्वारा प्रकाशित तथा बच्चन सिंह, बी-275, अवन्तिका, रोहिणी सेक्टर 1, नई दिल्ली द्वारा लेजर टाइपसेट होकर बृजबासी आर्ट प्रेस लिमिटेड, नौएडा, उत्तर प्रदेश में न्यूपा के प्रकाशन विभाग द्वारा मुद्रित।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

विषय सूची

आलेख

एन.वी. वर्गीज
भूमंडलीकरण, आर्थिक संकट और उच्च शिक्षा का विकास 1

कमलेश गुप्ता
भारत में उच्च शिक्षा में समसामयिक सुधार एवं नीतिगत क्रियान्वयन 29

महेश कुमार मुछाल और सतीश चन्द
प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति की समीक्षा 49

जितेन्द्र कुमार लोढ़ा
शिक्षा के माध्यम को लेकर गांधीजी के विमर्श की सम-सामयिकता 65

शोध टिप्पणी / संवाद

अश्वनी कुमार गौड़
स्ववित्त पोषित अध्यापक-संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण-अभिवृत्ति, आत्म प्रत्यय एवं जीवन मूल्यों पर अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रभाव 75

दीपा मेहता और अरुण कुमार
विद्यालयी हिंसा का सम्प्रत्यात्मक विश्लेषण एवं अपेक्षित समाधान 91

नृपेन्द्र वीर सिंह और रेनू राय
भारतीय परिप्रेक्ष्य में शांति शिक्षा का स्वरूप 103

सौम्या नैयर
छत्तीसगढ़ के भुंजिया एवं कमार जनजाति समुदाय के बालक-बालिकाओं की सामाजिक स्थिति का अध्ययन 113

दस्तावेज़

वी.के. राय
मैकाले का शिक्षा पर विवरण पत्र 121

चिंतक और चिंतन

संजीव शुक्ला
भारतीय शैक्षिक पुनर्जागरण में स्वामी विवेकानन्द का योगदान 135

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

भूमंडलीकरण, आर्थिक संकट और उच्च शिक्षा का विकास#

एन.वी. वर्गीज*

सार-संक्षेप

पिछले गत वर्षों में उच्च शिक्षा में जबरदस्त विस्तार हुआ है। इसके विस्तार की वजह उभरते हुये रोजगार अवसर तथा विश्व बाजार में प्रतिस्पर्द्धा हेतु कौशल की बढ़ी हुई आवश्यकताओं की मांग है। विश्व बाजार में कौशल की मांग ने विश्व के देशों में उच्च कौशल श्रम की मांग में प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ाया है। विकासशील देशों के श्रम बाजार में विदेशी डिग्री की प्राथमिकता तथा विकसित देशों में स्थानीय डिग्री की प्राथमिकता ने नि:संदेह उच्च शिक्षा के अंतर्राष्ट्रीयकरण को बढ़ाया है। इस पत्र में उच्च शिक्षा के अंतर्राष्ट्रीयकरण के तीन अलग-अलग पहलुओं को दर्शाया गया है- संस्थानों, छात्रों तथा अध्यापकों की गतिशीलता के रूप में। शिक्षा संस्थान विकसित देशों से कम विकसित देशों की तरफ रुख करते हैं, जबकि छात्र विकासशील देशों से विकसित देशों की ओर कदम बढ़ाते हैं। छात्रों के लिये संयुक्त राज्य अमेरिका सबसे पसंदीदा गंतव्य है और लगभग तीन-चौथाई सीमा पार छात्र दस ओ.ई.सी.डी. कहे जाने वाले देशों में पढ़ रहे हैं। इनमें से कुछ देश सीमा पार शिक्षा से बिलियन डॉलर कमा रहे हैं। वर्तमान संकट, जो विकसित देशों के वित्तीय प्रणाली के कारण प्रारंभ हुआ, अपनी पहुंच में वैश्विक है क्योंकि यह मध्यम तथा कम आय वाले दोनों देशों को प्रभावित कर रहा है। शुरूआती

भूमंडलीकरण तथा स्थानीय चुनौतियां: उच्च शिक्षा के नये आयाम, विषय पर क्षेत्रीय सम्मेलन में प्रस्तुत पत्र का संशोधित तथा लघु रूप, यह सम्मेलन संयुक्त रूप से भारतीय राष्ट्रीय सहयोग आयोग, यूनेस्को, भारत सरकार, राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय (न्यूपा), नई दिल्ली तथा यूनेस्को कार्यालय, नई दिल्ली, भारत के सहयोग से दिनांक 25 से 26 फरवरी 2009, नई दिल्ली, यूनेस्को कार्यालय में आयोजित किया गया। लेखक दो अज्ञात विशेषज्ञों का आभारी है जिन्होंने आलेख की समीक्षा की और महत्वपूर्ण सुझाव दिये।

* अंतर्राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान (आईआईईपी) 7-9 रियू यूगेन-डेलाक्योयक, 75116, पेरिस

संकेत है कि इस संकट के कारण परिवारों में रोजगार और आय स्तर में भारी गिरावट आयेगी तथा शिक्षा में उनके निवेश को भी प्रतिकूल रूप में प्रभावित करेगा, परिणामस्वरूप यह सार्वजनिक उच्च शिक्षा से अधिक निजी तथा सीमा-पार क्षेत्र को प्रभावित कर रहा है। कई विश्वविद्यालयों जिन्होंने विदेशों के बैंकों में पैसा निवेश किया है, पहले से ही अपना निवेश खो चुके हैं। छात्र समर्थन प्रणाली, छात्रवृत्ति, छात्रऋण गंभीर रूप से प्रभावित होंगे। सभी उदाहरणों में सार्वजनिक नीतियां तथा वित्तीय सहायता शिक्षा, व्यवस्था के पुनरुत्थान हेतु आवश्यक है। सुधार योजना हेतु शिक्षा क्षेत्र के लिए प्रावधान आवश्यक है।

यह संकट हमें बाजार के संचालन विनियमन की याद दिलाता है। यह पत्र उच्च शिक्षा में राज्य के सक्रिय हस्तक्षेप की वकालत करता है जिससे कि उच्च शिक्षा के विकास हेतु एकीकृत और समग्र कार्यक्रम विकसित हों जिसमें नीति तथा सीमा पार संस्थानों के विकास हेतु नियम, गुणवत्ता के लिए तंत्र, समता के लिए नियम जब राज्य द्वारा शिक्षा के लिए पर्याप्त राशि देने की स्थिति में ना हों। हालांकि वर्तमान आर्थिक संकट के दौरान राज्य को अतिरिक्त वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति द्वारा इस क्षेत्र को इस संकट के प्रभावों से बचाना चाहिए।

प्रस्तावना

विश्वभर में शिक्षा व्यवस्था का विस्तार हो रहा है। पहले की अपेक्षा अब शिक्षा पर लोग अधिक निवेश कर रहे हैं। यद्यपि शिक्षा के सभी स्तरों पर विकास हो रहा है मगर शायद उच्च शिक्षा स्तर पर विकास अधिकतम है। 1991-2006 के दौरान विश्वभर में उच्च शिक्षा संस्थानों में दाखिला 68 मिलियन से बढ़कर तकरीबन दोगुना 143.9 मिलियन हो गया (यू.आई.एस. 2008)। यूनेस्को सांख्यिकी संस्थान के अनुसार इस दौरान सकल नामांकन अनुपात (जीईआर) 13.8% से बढ़कर 25% हो गया। हालांकि सभी क्षेत्रों में उच्च शिक्षा का विस्तार हुआ है मगर इस विस्तार में क्षेत्रीय असमानता देखी गई है। 1990 से 2005 के बीच अरब क्षेत्र में सकल नामांकन अनुपात लगभग दो गुना (11% से बढ़कर 22%), दक्षिण और पश्चिम एशिया में 6% से बढ़कर 11% और पूर्व एशिया तथा प्रशांत क्षेत्र में यह तिगुना से भी अधिक बढ़ा (7% से बढ़कर 25%), लैटिन अमरीका में भी 17% से 31% की अप्रत्याशित बढ़ोत्तरी दर्ज की गई। हालांकि अफ्रीका में उच्च शिक्षा में विस्तार दर धीमी रही। वहां सकल नामांकन अनुपात 3% से बढ़कर 5% तक पहुंचा। उच्च शिक्षा में विस्तार के कई कारण हैं। पहला, स्कूल स्तर की शिक्षा

के विस्तार का दबाव था। सबके लिए शिक्षा हेतु किए जा रहे प्रयास के कारण माध्यमिक और माध्यमिकेतर स्तर की शिक्षा की मांग बढ़ी। दूसरा कारण है– भूमंडलीकरण के दौर में अधिकतम आर्थिक विकास का लाभ उठाने की क्षमता में सुधार हेतु तेजी से प्रौद्योगिकीय तथा तकनीकी कौशल को बढ़ावा देने के उद्देश्य से उच्च शिक्षा का विकास एक अनिवार्य शर्त बन गया (विश्व बैंक 2002)। इन परिस्थितियों में अधिकांश देश विशेषकर अफ्रीकी देश उच्च शिक्षा का त्वरित गति से विकास करने हेतु प्रयास कर रहे हैं (विश्व बैंक 2009)। तीसरा और प्रमुख कारण है– भूमंडलीकरण के दौर में विश्वविद्यालय स्नातकों के बढ़ते रोजगार के अवसर जिसके लिए अभिभावक भी उच्च शिक्षा पर निवेश के लिए तत्पर हुए। इससे उच्च शिक्षा में निजी और सीमा–पार संस्थानों के लिए रास्ते खुलने शुरु हो गए।

इस पृष्ठभूमि में रोजगार बाजार में विकसित देशों में घरेलू तथा विकासशील देशों में विदेशी डिग्री की मांग है। यह आलेख स्पष्ट करता है कि नियोक्ताओं द्वारा सीमा पार की डिग्री को प्राथमिकता तथा उच्च वेतन एवं उच्च शिक्षा में निवेश से लाभ सीमा पार शिक्षा को बढ़ावा देता है। व्यक्ति निवेश करके लाभ प्राप्त करना चाहता है तथा निजी संस्था सीमा पार शिक्षा सेवाएं प्रदान करना चाहती हैं। इस बुनियादी मुद्दे के कुछ तथ्य परिवर्तित हो सकते हैं। मौजूदा वित्तीय संकट के कारण भूमंडलीय बाजार में उच्च कौशल के श्रम की मांग घट सकती है तथा उच्च शिक्षा के लिए बुनियादी लक्ष्य वर्ग के पास संस्थानों की कमी हो सकती है और सीमा–पार शिक्षा में निवेश की इच्छा कम हो सकती है। ऐसे प्रभाव का स्वरूप सरकारों द्वारा अपनाई गई रणनीतियों के अनुसार और शिक्षा में सुधार योजनाओं की प्राथमिकता के आधार पर होगा। यह आलेख इस तरह संगठित है; अगले भाग में विश्व श्रम बाजार में उच्च कौशल के लिए बढ़ती मांग पर चर्चा, भाग–3 संस्थानों की सीमा–पार गतिशीलता के विशेष संदर्भ में उच्च शिक्षा के भूमंडलीकरण का विश्लेषण करता है। भाग–4 में वैश्विकरण और उच्च शिक्षा के विकास के लिए मौजूदा आर्थिक संकट के प्रभाव पर चर्चा है। भाग–5 राष्ट्रीय रणनीतियों के साथ उच्च शिक्षा के विकास का अध्ययन करता है तथा अंतिम भाग में आलेख से प्राप्त विश्लेषण का निष्कर्ष है।

अति–कुशल व्यक्तियों के लिए अवसर

वर्तमान संदर्भ में ज्ञान अर्थव्यवस्था विकास के केन्द्र में है। ज्ञान अर्थव्यवस्था तेजी से बढ़ी है और उनमें से कई अर्थव्यवस्थाओं ने पिछले दशकों में विकास की गति को

बनाये रखा है। ज्ञान अर्थव्यवस्था में कौशल आवश्यकताएं पारंपरिक विनिर्माण क्षेत्र से अलग हैं। बल्कि कौशल के स्तर की आवश्यकता और नौकरी के लिए प्रवेश योग्यता भी उच्च है तथा बढ़ रही हैं। अध्ययन बताते हैं कि कनाडा जैसे देश में 70 प्रतिशत नई नौकरियों में उत्तरोत्तर माध्यमिक स्तर की शिक्षा आवश्यक है (आई.एल.ओ., 2004)। उच्च कौशल वाले रोजगारों की मांग विकासशील देशों में तथा बाहर बढ़ रही है। विकसित देशों में जहां उत्पादन ज्ञान आधारित है। अमेरिका जैसे देशों में जहां उच्च संस्थानों का नेटवर्क सबसे अधिक है वहां उच्च कुशल श्रमिकों का उत्पादन अपनी घरेलू मांग को पूरा करने के लिए कम है। इसने विकसित देशों में विकासशील देशों से उच्च कौशल श्रमिकों की मांग में, प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ावा दिया है। कभी-कभी इसे दिमाग का युद्ध'' की संज्ञा भी दी गई है (चंदा 2000)। या फिर प्रतिभा के लिए विश्वव्यापी खोज (कपूर तथा मैकाले 2005) की संज्ञा भी दी गई है। दूसरे शब्दों में अत्यधिक कुशल श्रमिकों के प्रवास के विस्तार के लिए तथा एक ज्ञान अर्थव्यवस्था की कौशल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उनमें तकनीक और आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा में बढ़त बनाये रखने के लिए प्रोत्साहित किया गया था।

विकसित देशों में विकासशील देशों से कुशल कामगारों तथा आईसीटी कामगारों को आकर्षित करने के लिए वीजा नियमों में बदलाव किया। उदाहरण के लिए अमेरिका में वीजा में नियमों में बदलाव ने एशियाई देशों के कई कामगारों को आकर्षित किया। वर्ष 2002-03 में अमेरिका में दस लाख उच्च कौशल कामगारों ने प्रवेश किया। यूरोपीय संघ विकसित देशों में कुशल कामगारों को आकर्षित करने के लिए ब्लू कार्ड वीजा जारी कर रहा है। आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड तथा यू.के. उदाहरण के तौर पर अंक आधारित अप्रभावी नीति अपना रही हैं जो उच्च योग्यता वाले प्रार्थी को प्राथमिकता प्रदान करती हैं।

आउटसोर्सिंग पर बल देने वाली कम्पनियों समेत घरेलू कम्पनियों के विकास ने तथा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में बढ़ोत्तरी ने घरेलू रोजगार विकल्पों को बढ़ावा दिया है। दूसरा पक्ष यह है कि, भूमंडलीकरण के संदर्भ में घरेलू रोजगार अवसरों में भी बढ़ोत्तरी हुई है। भूमंडलीकरण के संदर्भ में उदारीकरण नीतियों ने प्रत्यक्ष विदेशी निवेश तथा विदेश में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को बढ़ावा दिया और उच्च कौशल के कामगारों की मांग को बढ़ाया। वास्तव में विदेशी सीधे निवेश तथा आउटसोर्सिंग गतिविधियों में बढ़ोत्तरी का कारण लाभार्थी देशों में उच्च कौशल कामगारों की उपलब्धता थी। विदेशी प्रत्यक्ष

निवेश के कारण प्रत्यक्ष रोजगार सृजन के आंकलन बताते हैं कि 2001, में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआई) मिलियन डॉलर तक पहुंच गया था और 2.87 मिलियन नौकरियों का सृजन हुआ था। (तालिका–1)

तालिका–1

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफ.डी.आई.) तथा रोजगार सृजन के आकलन 2007

क्षेत्र	निवेश (बिलियन डॉलर में)	रोजगार (बिलियन में)
एशिया पैसिफिक	395.2	1.20
यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका	345.1	1.16
लैटिन अमेरिका	58.3	0.27
मिडल ईस्ट	55.9	0.09
अफ्रीका	92.0	0.15
कुल	**946.8**	**2.87**

स्रोत: द अर्थ टाइम्स, 4 मार्च 2008

संयुक्त राज्य अमेरिका प्रत्यक्ष निवेश का सबसे बड़ा विदेशी निवेश का प्राप्तकर्त्ता है। 2007 में अमेरिका को कुल 237 अरब डालर प्रत्यक्ष निवेश से प्राप्त हुये और निजी क्षेत्र में पांच लाख श्रमिकों को जो कि कुल प्रतिशत का 4.3% था, को रोजगार मिला। अमेरिका को 2006 में लगभग 80 प्रतिशत निवेश यूरोप तथा जापान से प्राप्त हुआ

तालिका–2

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफ.डी.आई.) तथा चुनिंदा देशों में रोजगार सृजन 2007

देश	निवेश (बिलियन डॉलर में)	रोजगार (बिलियन में)
यू.एस.ए.*	237.0	5.00
चीन	90.4	0.37
भारत	52.5	0.25
रूस	45.1	0.16
वियतनाम	40.2	0.19

स्रोत : *यूएसडीसी, 2008 तथा अन्य, द अर्थ टाइम्स, 4 मार्च, 2008

(यू.एस.डी.सी. 2008)। यू.के. का अमेरिका में सबसे अधिक निवेश था। चीन और भारत ने वर्ष 2007 में अपनी भूमिका निवेश स्रोत के रूप में अमेरिका में पक्की की और ये देश अब विदेशी निवेश से सृजित छह प्रतिशत नौकरियों का भाग है जबकि वर्ष 2006 में यह चार प्रतिशत था। (आईबीएम जीबीएम 2008)।

साफ्टवेयर क्षेत्र का विकास भारत में भूमंडलीकरण के लाभ का एक स्पष्ट संकेत हैं। निर्यात में साफ्टवेयर का भाग 1997 में 4.9 प्रतिशत से बढ़कर 2002-03 में 20.4 प्रतिशत हो गया है। इसने वर्ष 2004-05 में अमेरिका में 28.5 बिलियन डालर सृजित किये। भविष्य में यह क्षेत्र और चार मिलियन रोजगार का सृजन करेगा। चीन, भारत, रूस और वियतनाम जैसे देशों को प्रत्यक्ष विदेशी निवेश और रोजगार सृजन का सबसे अधिक लाभ हुआ। हालांकि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश से उत्पन्न रोजगार राष्ट्रीय रोजगार का एक बड़ा हिस्सा नहीं हो सकता।

इन नौकरियों के लिये उच्च स्तरीय कौशल और योग्यता की आवश्यकता है। घरेलू-निजी क्षेत्र में पिछले दो दशकों में-आउटसोर्सिंग तथा आय मे ं बहुत ही तीव्रता से वृद्धि हुइ है। निजी क्षेत्र में कंपनियों ने नई तकनीक अपनाई, ज्ञान आधारित उत्पादन तथा भूमंडलीकरण प्रक्रिया के साथ ज्ञान गहन घरेलू उद्यमों में कौशल आवश्यकतायें देश में बहुराष्ट्रीय कंपनियों की कौशल आवश्यकताओं या फिर विदेशी फर्मों की कौशल आवश्यकताओं के समान ही थीं। इन कंपनियों ने रोजगार का सृजन किया जिसके लिये उच्च कौशल की आवश्यकतायें थीं तथा उच्च शैक्षिक योग्यताओं की भी आवश्यकता थी। प्रत्यक्ष निवेश आकर्षित करने के लिये एक महत्वपूर्ण कारण अत्यधिक कुशल श्रमिकों की आसान उपलब्धता थी। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिये अमेरिका एक आकर्षक देश है। क्योंकि यहां का कार्य बल सबसे अधिक शिक्षित, सबसे अधिक उत्पादन करने वाला तथा सबसे अधिक अभिनव माना जाता है। अमेरिका की उच्च शिक्षा व्यवस्था विश्व में सबसे बेहतरीन है। (यू.एस.डी.सी 2008. पृष्ठ 4) प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के मामले में दूसरे देशों में प्रवाह इसी समान है। उदाहरण के लिए विदेशी प्रत्यक्ष निवेश और सॉफ्टवेयर क्षेत्र के तेजी से विस्तार का श्रेय तकनीकी युवा लोगों तथा अंग्रेजी बोलने वाले वैज्ञानिक पेशेवरों को जाता है। (इकानमी वॉच इम्पलाईमेंट रिपोर्ट, 2008)।

अंत में विकसित देशों में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों तथा निजी उद्यमों में रोजगार अवसरों ने श्रम बाजार में उच्च योग्यता प्राप्त श्रमिकों की मांग को बढ़ाया और इसके परिणामस्वरूप उच्च शिक्षा की मांग बढ़ी। हालांकि विकासशील देशों के विश्वविद्यालयों

द्वारा निकले स्नातकों की गुणवत्ता कभी-कभी भूमंडलीकरण मानदण्डों को पूरा करने में असमर्थ होती है। बहुत हद तक अर्थव्यवस्था के इस क्षेत्र में विदेशी विश्वविद्यालय के स्नातकों का आधिपत्य है।

उच्च शिक्षा का भूमंडलीकरण

उत्पादन का भूमंडलीकरण करने के लिए मानदण्डों की स्थापना जरूरी है तथा तुलनीय उत्पादों की प्रक्रिया का आश्वासन यह एक ऐसे कार्यबल की मांग करता है जो वैश्विक मानदंडों को पूरा करे। कई देशों ने, विशेष रूप से भूमंडलीकरण की प्रक्रिया से लाभार्थियों ने फिर से अपनी वैश्विक श्रम बाजार की आवश्यकताओं की मांग हेतु उच्च शिक्षा कार्यक्रमों का अभिविन्यास प्रारंभ कर दिया। अभिविन्यास में यह बदलाव उच्च शिक्षा की भाषा और तत्व क्षेत्रों में नजर आता है। विश्वविद्यालयों में पारंपरिक विषय क्षेत्रों से हटकर प्रबंधन, इंजीनियरिंग और आई.टी. क्षेत्रों से संबंधित अध्ययन उच्च शिक्षा प्रणाली द्वारा रोजगार बाजार के अनुसार अपने को स्थापित करने का प्रयास है।

अन्य संकेतक अंग्रेजी भाषा में पाठ्यक्रम और अध्ययन कार्यक्रमों का अंग्रेजी में उपलब्धता है। देशों ने अंग्रेजी भाषा की महत्ता को वैश्वीकरण के संदर्भ में समझा है और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसकी महत्ता का अहसास हुआ। नवीनतम ओ.ई.सी.डी. रिपोर्ट के अनुसार व्यापारियों तथा व्यावसायकर्त्ताओं की प्रमुख भाषा अंग्रेजी है तथा अकादमिक प्रकाशनों, विज्ञान तथा अनुसंधान की यह वैश्विक भाषा है (ओ.ई.सी.डी., 2008, पृ. 20)। कई विकासशील देश अफ्रीकी, फ्रेंच देश तथा विकसित गैर-अंग्रेजी भाषी देश अपने कार्यबल को विश्व बाजार के लिए तथा अन्य देशों के छात्रों को अपने देश के उच्च संस्थानों में प्रवेश हेतु अंग्रेजी में चयनित विषय क्षेत्रों में पाठ्यक्रमों की पेशकश कर रहे हैं।

हालांकि विकासशील देशों ने अपने यहां की शैक्षिक व्यवस्था को सुधारने की कोशिश की परंतु संसाधनों की कमी आड़े आयी। इसलिए राज्यों ने लोक संस्थानों में लागत वसूली तरीकों को अपनाया तथा उच्च शिक्षा संस्थान स्थापित करने हेतु निजी क्षेत्र को बढ़ावा दिया। यह उच्च शिक्षा में सक्रिय बाजार का प्रवेश था तथा सीमा-पार संस्थानों को स्थापित तथा पाठ्यक्रम चलाने के लिये इसने मार्ग प्रशस्त किया। उच्च शिक्षा के लिए बढ़ती हुई मांग को देखते हुए, यह निवेश तथा व्यापार के लिए आकर्षक क्षेत्र बन गया। यहां अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक लाभ प्राप्त होने लगा। यह उभरते हुए एकीकृत शक्ति के रूप में राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक गतिविधियों को जोड़ रहा था। परिणामस्वरूप, वैश्वीकरण के संदर्भ में शिक्षा एक लाभकारी उद्यम के

रूप में नज़र आई, सांस्कृतिक गतिविधियां व्यावसायिक उत्पाद बनी तथा जनता ग्राहक बने, विश्वविद्यालय प्रदाता बने तथा शिक्षार्थी ग्राहक या सेवाओं का खरीदार बना और अंतत: शिक्षा एक अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापार योग्य वस्तु बन गई है। (यांग 2005)।

सेवाओं में आम सहमति (गैट्स) के अंतर्गत शिक्षा के सीमा पार व्यापार चार प्रकार के रूप में प्रचलित है, (नाईट 2002)। ये हैं:

(अ) सेवाओं की सीमा-पार आपूर्ति

(ब) विदेशों में उपभोग-विदेश में अध्ययन कार्यक्रम

(स) किसी अन्य देश में प्रदाता की वाणिज्यिक उपस्थिति : सीमा-पार संस्थान

(द) किसी अन्य देश में सेवा प्रदान करने हेतु व्यक्ति की उपस्थिति : स्टाफ की सीमा-पार आवाजाही

निम्नांकित अनुच्छेदों में संस्थानों, अध्यापकों तथा छात्रों की सीमा पार आवाजाही से उत्पन्न शिक्षा के स्वरूप पर चर्चा करेंगे।

सीमा-पार संस्थानों की गतिशीलता

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संस्थानों की गतिशीलता संस्थागत गतिशीलता की रूप लेता है- शाखा परिसरों, फ्रैंचाईजी या ट्विनिंग व्यवस्था के रूप में। शाखा परिसर पूरी तरह से विदेशी संस्था द्वारा कार्यक्रमों के निरूपण को परिलक्षित करते हैं फ्रैंचाइजी देश में एक प्राधिकृत घेरलू संस्था द्वारा वितरण तथा टिविंग घरेलू और मेजबान देशों में संयुक्त स्वामित्व तथा वितरण को परिलक्षित करता है। हालांकि फ्रैंचाइजी तथा टिविंग, शाखा परिसर की तुलना में कम नज़र आते हैं परन्तु वे संस्थागत गतिशीलता के बड़े क्षेत्र हैं। (मार्टिन-2007)

आस्ट्रेलिया, यू.के. तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के विश्वविद्यालय दूसरे देशों में अधिक पाये जाते हैं। मलेशिया में नाटिंघम विश्वविद्यालय (यू.के.), मोनाश विश्वविद्यालय तथा कार्टिन विश्वविद्यालय इत्यादि के शाखा परिसर हैं। चीन में 2004 के बाद से 700 अनुमोदित विदेशी सहयोगात्मक शैक्षिक संस्थान हैं। इनमें से अधिकांश आस्ट्रेलिया से हैं। - क्वींसलैण्ड विश्वविद्यालय तथा विक्टोरिया विश्वविद्यालयों का चीनी विश्वविद्यालयों के साथ संयुक्त कार्यक्रम हैं, (गैरट 2004)

सिंगापुर में कई देशों के प्रदात्ता जैसे जान हापकिन्स विश्वविद्यालय, शिकागो, इ. एन.एस.ई.ए.डी. तथा जीआजो तांग विश्वविद्यालय, चीन, बोन्ड विश्वविद्यालय, मोनाश विश्वविद्यालय आस्ट्रेलिया के शाखा परिसर हैं तथा अफ्रीका में नीदरलैंड बिज़नेस स्कूल के कई देशों में शाखा परिसर हैं। भारत में कई विदेशी संस्था कार्यरत हैं, मुख्यत: यू.के. तथा यू.एस.ए. से। भारत में विदेशी विश्वविद्यालयों के साथ संलग्नता रखने वाले 131 विश्वविद्यालयों का अध्ययन दर्शाता है कि इनमें से क्रमश: यू.के. के 59 तथा यू.एस.ए. के 66 विश्वविद्यालयों के साथ भागीदारी है। (भूषण 2005)। एक ही संस्था ने कई विदेशी संस्थाओं के साथ एक ही समय पर गठबन्धन किया है। उदाहरण के लिये इंडियन स्कूल आफ बिजनेस का कैलोग, व्हारटन तथा लंदन स्कूल आफ बिजनेस के साथ एक ही समय पर गठबन्धन था। कई उच्च स्तरीय प्रतिनिधि मंडल भारत में भारत के संस्थानों के साथ संस्थानों के रूप में शाखा परिसर स्थापित करने या सहयोग हेतु भ्रमण पर आये। भारत और यू.के. के बीच छात्रों तथा अध्यापकों की गतिशीलता तथा सांगठनिक सहयोग पर प्रो. रिक ट्रेनर, यूनिवर्सिटी यू.के. के अध्यक्ष के नेतृत्व में यू.के. के कुलपतियों का प्रतिनिधि मंडल भारत भ्रमण पर आया। (एजुकेशन इंटरनेशनल, 29 अप्रैल 2000)

कई देशों में सीमा पार प्रदात्ता निजी उच्च शिक्षा संस्थानों के माध्यम से संचालित होते हैं। वह अधिकतर बाजारोन्मुखी कार्यक्रमों को ही चलाते हैं। इन संस्थानों में बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन, कंप्यूटर साईंस, लेखा, मार्केटिंग, अर्थशास्त्र तथा कम्युनिकेशन जैसे कार्यक्रमों को ही संचालित किया जाता है। विदेशी संस्थानों द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रम में लगभग 80 प्रतिशत पाठ्यक्रम बिज़नेस या होटल मैनेजमेंट के होते हैं। (भूषण 2005)। विदेशी विश्वविद्यालयों तथा संस्थानों के साथ सहयोग से निजी विश्वविद्यालयों को अकादमिक साख, गुणवत्ता, अपील प्राप्त करने का अवसर मिलता है तथा साथ ही साथ उन्हें उच्च शुल्क, कभी-कभी विदेशी मुद्रा में भी प्राप्त करने का मौका मिलता है। (वर्गीज 2007)

भारत जैसे देश-विदेशों में पढ़ रहे अपने छात्रों या शिक्षा के आयात पर वार्षिक रूप से 4 बिलियन यू.एस. डालर खर्च करते हैं। यह भी तर्क दिया जाता है कि देश इस विदेशी मुद्रा को बचा सकता है, अगर छात्र देश में ही रहकर विदेशी शिक्षा प्राप्त कर पायें। (तिलक 2007)। इस प्रकार की सोच छात्र गतिशीलता की बजाये संस्थागत गतिशीलता को बढ़ावा देती है।

सीमा-पार अध्यापक गतिशीलता

अध्यापक गतिशीलता को शिक्षा संस्थानों एवं पाठ्यक्रमों की अकादमिक गुणवत्ता में सुधार का माध्यम माना जाता है। शाखा परिसरों में पढ़ाने हेतु वर्तमान संदर्भ में अध्यापक गतिशीलता संस्थागत गतिशीलता से जुड़ी है। अध्यापक विकसित देशों में तथा विकासशील देशों में आवागमन करते हैं। हालांकि, अधिकतर विकासशील देशों से विकसित देशों में गतिशीलता अधिक रहती है और इसके तीन प्रमुख कारण हैं:- (अ) मात्रात्मक कमी को दूर करने हेतु (ब) संस्थानों की साख तथा अध्ययन की गुणवत्ता बढ़ाने हेतु तथा (स) विदेशी छात्रों को आकर्षित करने हेतु

शिक्षकों की कमी या तो योग्य व्यक्तियों की कमी या फिर पेशे के आर्कषण न होने के कारण होती है। (वर्गीज 2009)। वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने, विशेषत: निजी क्षेत्र में जो और अधिक आर्कषक हैं, रोजगार के नये अवसर खोल दिये हैं। यू.के. में अध्यापकों की कमी के अध्ययन से पता चला है कि वेतन और काम की परिस्थितियां अन्य क्षेत्रों से कमतर हैं। (स्मिर्थस एंड रॉबिटसन, 1998) इस कमी को दूर करने के लिए यू.के. तथा यू.एस. ने कैरीबियन अफ्रीकी दशों से अध्यापकों का आयात किया परंतु इससे इन देशों में अध्यापकों की कमी हो गयी है। इन देशों ने मेजबान देशों पर संसाधनों को लूटने का आरोप लगाया। (एथलेटन 2000,) और मेजबान देशों से क्षतिपूर्ति की मांग की। द्विपक्षीय वार्ता से प्रबंधित प्रवास की रणनीति विकसित हुई। (मोरगन 2000)। इससे 2000 में अध्यापक नियुक्ति पर राष्ट्रमंडल प्रोटोकॉल के विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ।

उच्च शिक्षा में अध्यापक गतिशिलता अलग रूप लेता है। कुछ विश्वविद्यालय के विभाग क्षेत्रीय अध्ययनों में विशेषज्ञता रखते हैं। यह विभाग संबंधित क्षेत्र के शिक्षकों को आकर्षित करता है। उदाहरण के लिये शिकागो विश्वविद्यालय का लैटिन अमेरिकी आयात केन्द्र प्रतिवर्ष तीन विजीटिंग (मानद प्रोफेसरों को बुलाता है तथा पिछले दशक में लगभग 30 लैटिन अमेरिकी प्रोफेसर यहां आगन्तुक प्रोफेसर के रूप में आ चुके हैं। (यूनिवर्सीटी आफ शिकागो की वेबसाइट), कई बार शिक्षक प्रवास केवल चयनित क्षेत्रों में ही होता है जहां कोरपोरेट क्षेत्र की मांग अधिक होती है। जैसा कि पहले वर्णित है डॉक्टरेट छात्र मेजबान देश में ही रहना पंसद करते हैं और अध्यापन नौकरियां करना चाहते हैं।

यू.एस.ए. में उच्च शिक्षा का क्षेत्र शिक्षकों को सबसे अधिक आकर्षित करता है। अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान, न्यूर्याक की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2007-08, में, यू.एस.ए. में 106 हजार विदेशी शिक्षक थे। यह भाग देश में पूर्ण संकाय के लगभग 16 प्रतिशत था। इनमें से आधे से अधिक (52 प्रतिशत) एशिया से थे और अन्य 29 प्रतिशत यूरोप से। यह अनुमान है कि 2000 से अधिक भारतीय शिक्षक यू.एस.ए के विश्वविद्यालयों में काम करते हैं। कुछ नोबेल पुरस्कार विजेताओं सहित भारतीय प्रोफेसर अनुसंधान और शिक्षण गतिविधियों में कार्यरत हैं। यह मुख्य रूप से सामाजिक विज्ञान तथा इंजिनियरिंग क्षेत्रों से जुड़े हैं। (मेलवाही, 2001)।

ईरासमस मुंडस कार्यक्रम के अंतर्गत 2004 तथा 2008 के बीच विकासशील देशों से 1,000 विश्वविद्यालय शिक्षक यूरोप आये। इसी कार्यक्रम के अंतर्गत 12 यूरोपीय तथा 8 भारतीय विश्वविद्यालयों के बीच स्टाफ तथा छात्र गतिशीलता के सहयोगात्मक व्यवस्था को स्थापित करने हेतु प्रयास किये गये (यूर एशिया न्यूज, 9 जून 2008)

कुछ विश्वविद्यालय अपनी छवि और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धात्मकता में सुधार के लिये अनुसंधान को बढ़ावा देने, शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार और विदेशी छात्रों को आकर्षित करने हेतु विदेशी प्रोफेसरों की नियुक्ति करते हैं। उदाहरण के लिए कोरिया के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा 300 विदेशी प्रोफेसरों की नियुक्ति करने की योजना है जिससे कि वैश्विक मानकों को पूरा करने हेतु शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाई जा सके। (टी.जांग, 2008)। सियोल राष्ट्रीय विश्वविद्यालय को सरकार से अनुदान प्राप्त होता। यह अपनी अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ावा देने हेतु 150 प्रोफेसरों की नियुक्ति की योजना बना रही है। जापानी सरकार अधिक छात्रों को आकर्षित करने के लिए संकाय के संगठन में परिवर्तन हेतु प्रयास कर रही है। 1983 तथा 1995 के बीच में जापान में विदेशी संकाय सदस्यों की संख्या 1,168 से बढ़कर 3,558 हो गई (कोशी, 1997)।

सीमा-पार छात्र गतिशीलता

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर छात्र गतिशीलता शिक्षा का सबसे आम रूप है। वर्ष 2005 में, लगभग 2.7 मिलियन छात्रों ने विदेशों में शिक्षा प्राप्त करी (यू-आई.एस 2007)। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा का बाजार बढ़ता ही जा रहा है। इस श्रेणी में बहुत लाभ है तथा उच्च शिक्षा संस्थानों में विदेशी छात्रों को आकर्षित करने की होड़ है। सीमा पार

छात्र गतिशीलता की सबसे प्रचलित पद्धति विकासशील देशों से विकसित देशों में छात्रों का प्रवाह है। यूनेस्को सांख्यिकी संस्थान, के आकड़ों के अनुसार केवल मध्य एशिया को छोड़कर सभी छात्रों का पसंदीदा गंतव्य उत्तरी अमेरीका तथा पश्चिमी यूरोप है। मध्य एशिया के छात्र अधिकतर रुसी फेडरेशन या अन्य पूर्वी यूरोपीय देशों की ओर रुख करते हैं। मध्य तथा पूर्वी एशिया एवं प्रशांत क्षेत्र को छोड़कर सभी क्षेत्रों के तीन-चौथाई छात्र ओ.ई.सी.डी देशों में उच्च शिक्षा के लिए जाते हैं। उत्तरी अमेरीका तथा यूरोप के 90 प्रतिशत छात्र एक ही क्षेत्र के अन्य देशों में अध्ययन हेतु सीमा पार जाते हैं। लैटिन अमेरीका के लगभग 80 प्रतिशत छात्र अध्ययन हेतु उत्तरी अमेरीका या पश्चिमी यूरोप के क्षेत्र में जाते हैं।

तालिका-3
मेजबान देशों द्वारा विदेशी छात्रों का वितरण (%)

मेजबान देश	2000	2004	2005
यू.एस.ए.	25.0	22.0	21.9
यू.के	12.0	11.0	11.8
जर्मनी	10.0	10.0	9.6
फ्रांस	7.0	9.0	8.7
आस्ट्रेलिया	6.0	6.0	7.7
कनाडा	6.0	5.0	4.9
जापान	4.0	4.0	4.7
न्यूजीलैण्ड	0.0	3.0	1.5
रुसी फेडरेशन	3.0	3.0	3.3
अन्य	27.0	27.0	27.4
कुल (मिलियन में)	1.9	2.7	2.73

स्त्रोत (यू.आई. एस) 2007

यू.एस.ए. में सर्वाधिक विदेशी छात्र अध्ययन हेतु आते हैं। (तालिका 3)। इसके बाद छात्र क्रमशः यू.के, जर्मनी,फ्रांस, आस्ट्रेलिया तथा जापान का रुख करते हैं। हालांकि यू. एस.ए में वर्ष 2000 से 2005 के भीतर छात्रों का नामांकन घटकर क्रमशः 25 प्रतिशत से

तालिका 4

देश भेजने वाले / मेजबान	यू.एस.ए	यू.के	जर्मनी	फ्रांस	आस्ट्रेलिया	कनाडा	जापान	योग* (%)	जोड़ा (000)
चीन	23.3	13.2	–	–	10.2	–	21.1	67.8	394.4
भारत	60.3	12.0	3.1	–	15.8	–	–	90.9	139.4
कोरिया	57.3	–	5.2	–	5.1	–	22.7	90.7	97.4
जर्मनी	14.3	19.8	–	–	–	–	–	34.1	63.3
फ्रांस	13.1	22.5	12.5	–	–	11.7	–	59.8	52.2
मोरक्को	–	–	16.2	58.9	–	–	–	75.1	50.6
तुर्की	25.8	–	50.4	–	–	–	–	76.2	50.4
यू.एस.ए.	–	31.1	7.1	5.2	8.5	15.6	–	67.5	46.3
मलेशिया	14.2	25.3	–	–	41.1	–	4.2	80.6	45.1
रुस	13.5	–	30.1	–	–	–	–	43.6	39.4
हांग-कांग	21.6	30.9	–	–	39.0	–	–	91.5	34.7
ईरान	12.2	9.1	22.9	7.7	–	–	–	51.7	19.3
योग (000)	590.1	318.4	259.8	236.5	207.3	133.0	125.9		

नोट : *तालिका का योग 100 प्रतिशत नहीं है क्योंकि इस तालिका में सभी मेजबान देश सम्मिलित नहीं हैं।
..... दर्शाता है कि संख्या गणना लायक नहीं है।

स्रोत : यू.आई.एस. (2007)

21.9 प्रतिशत रह गया। आस्ट्रेलिया, फ्रांस तथा जापान ने अपनी स्थिति को संभाला है जबकि अन्य की हिस्सेदारी घटी है। तालिका 4 में दिखाये गये 9 देशों के छात्र मेजबान देशों में विदेशी छात्रों का कुल 72 प्रतिशत है। इस दशक में न्यूजीलैण्ड में तथा 1990 के दशक में आस्ट्रेलिया में विदेशी छात्रों का तीव्र विस्तार देखा गया। वर्ष 2004 तथा 2005 के बीच विदेशी छात्रों में गिरावट न्यूजीलैण्ड में देखी गई। तद्नुसार पढ़ाई पूरी करने के बाद छात्रों को न्यूजीलैण्ड में एक साल रहने की अनुमति दी गई और अगर वह नौकरी प्राप्त कर लेते हैं, जैसा कि अक्सर होता है, तो वह निवास परमिट या फिर नागरिकता के लिये आवेदन दे सकते हैं।

तालिका 4 देशों के बीच प्रवाह की पद्धति को दर्शाती है।। सात.ओ.ई.सी–डी देशों ने वर्ष 2005 में 68.8 प्रतिशत छात्रों की मेजबानी की, जबकि बाहर भेजने वाले देशों के छात्रों की संख्या एक तिहाई से अधिक थी। यह मेजबान देशों और मेहमान देशों की स्थिति को दर्शाता है। एशियाई देश छात्रों को सीमा पार भेजने की सूची में शीर्ष पर आते हैं। केवल चीन से ही लगभग 16.2 प्रतिशत छात्र विदेश जाते हैं। इसके बाद भारत से 5.2 प्रतिशत। अगर पिछली प्रवृत्तियों को देखा जाये (वर्गीस 2005) चीन ने यू.एस.ए. पर अपना भार कम किया है, तथा यहां के छात्र आस्ट्रेलिया जाने लगे लेकिन हाल के वर्षों में यह जापान की ओर अधिक रुख कर रहे हैं। भारत तथा एशिया में तुर्की तथा रुसी फेडरेशन से छात्र अधिक आते हैं। हांक–कांग के छात्र क्रमशः आस्ट्रेलिया, यू.के, यू.एस.ए. की ओर रुख करते हैं। मलेशिया के छात्रों ने आस्ट्रेलिया पर अपनी निर्भरता जताई है।

एशिया सीमा पार छात्र भेजने वाले देशों में शीर्ष पर है और अधिकांश एशियावासी तीन अंग्रेजी भाषी देशों– आस्ट्रेलिया, यू.के तथा यू.एस.ए पर निर्भर हैं।

छात्र शिक्षा के लिए विदेश क्यों जाते हैं? विदेशों में अध्ययन करने का सबसे उत्साही कारक रोजगार से विकल्पों को बढ़ाना होता है तथा निवेश से लाभ के अधिक अवसर प्रदान करना होता है जैसा कि पहले भी देखा गया है कि विकासशील देशों में विदेश से शिक्षा प्राप्त करके आये डिग्री होल्डर की मांग अधिक रहती है। बहुर्राष्ट्रीय कंपनिया उन छात्रों को नौकरियां देने के लिए अधिक तत्पर रहती हैं जो उनके मूल देश से डिग्री हासिल करके लाते हैं। भूमंडलीकरण तथा बढ़ते हुये प्रत्यक्ष सीधे निवेश के संदर्भ में घरेलू बाजार में विदेशी डिग्री वाले छात्रों की मांग अधिक बढ़ी है।

विदेश जाकर डिग्री हासिल करने का एक अन्य मुख्य कारण इन देशों के विश्वविद्यालयों द्वारा प्रदान की जाने वाली उच्च गुणवत्तायुक्त शिक्षा भी होती है।

विकासशील देशों से विकसित देशों की ओर छात्रों का प्रवाह का आधार यह भी है कि लोगों का मानना है कि ओ.ई.सी.डी देशों के शिक्षा का स्तर विकासशील देशों की तुलना में अधिक है। संयुक्त राज्य अमेरीका के विश्वविद्यालयों की विश्वस्तरीय रैंकिग सबसे ऊपर है जो कि छात्रों को यहां प्रवेश पाने के लिये उत्साहित करती है। छात्रों की स्थानीय गतिशीलता भी, गुणवत्ता मुक्त शिक्षा की चाह को दर्शाती है। उदाहरण के लिये अरब देशों के छात्र उच्च शिक्षा के लिए जोर्डन और मिस्र का रुख करते हैं। बांग्लादेश और नेपाल के छात्र उच्च शिक्षा अध्ययन के लिये भारत आते हैं। जबकि मुख्य चीन देश से छात्र अध्ययन के लिए हांक-कांग की ओर जाते हैं। (ली तथा ब्रे, 2007)।

विकसित देशों में उच्च कौशल वाले व्यक्तियों की मांग ने विकासशील देशों से उच्च कौशल श्रमिकों के प्रवास को बढ़ावा दिया। विदेश में शिक्षा, भविष्य में विकसित देशों के लिए श्रमिक पूर्ति का स्रोत बन गया, चूंकि अधिकतर छात्र शिक्षा प्राप्त करके वहीं रह गये । उदाहरण के लिये यू.एस विश्वविद्यालय के डॉक्टर स्नातकों की वापसी योजना बताती है कि 9 प्रतिशत चीनी और भारतीय डॉक्टर छात्र अध्ययन के बाद वहीं रहना पसंद करते हैं। (कपूर तथा मैकहाले, 2005)। यह दर्शाता है कि सीमा पार शिक्षा विशेषत: छात्र गतिशीलता, विकसित देशों में उच्च कौशल के श्रमिकों की नियुक्ति के लिए बड़ा ही लाभकारी साबित हुआ है। (ट्रेम्बल 2007)। इसलिये विभिन्न देश सीमा पार शिक्षा सेवाओं की पेशकश में रुचि रखते हैं। सीमा पार शिक्षा से प्राप्त आय अभी भी बहुत आकर्षक है। उदाहरण के लिए यू.एस.ए जो कि सीमा पार शिक्षा का शीर्ष निर्यातक है, वर्ष 2005 में इससे 14.1 बिलियन डालर प्राप्त किये; यू.के. ने 86.1 मिलियन डालर प्राप्त किये, आस्ट्रेलिया ने 5.6 मिलियन डालर तथा न्यूजीलैण्ड ने यू.एस. 1.0 मिलियन डालर कमाये। (वशीर, 2007) इसमें सीमा पार विदेश जाने वाले छात्रों और शिक्षा प्रदान करने वाले दोनों के हित सम्मिलित हैं।

वर्तमान आर्थिक संकट, प्रतिकूल रूप से , सीमा पार शिक्षा समेत उच्च शिक्षा के विस्तार के सभी कारकों पर प्रभाव डालेगा। प्रारंभिक संकेत दर्शाते हैं कि संकट ने आर्थिक वृद्धि पर असर डाला है तथा रोजगार में वृद्धि तथा उच्च शिक्षा में निवेश तथा कौशल की मांग पर भी प्रभाव डाला है।

आर्थिक संकट तथा उच्च शिक्षा के लिए इसके निहितार्थ

दुनिया में प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में संकट आ रहा है जो 1930 के दशक के ग्रेट डिप्रेशन (महा आर्थिक संकट) की तुलना में अधिक गंभीर है। यह संकट प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं

समेत सभी देशों में आर्थिक और रोजगार संबंधी दृष्टिकोण को निश्चित रूप से बदल रहा है। आई.एम. एफ के अनुसार वैश्विक विकास लगभग ठप्प हो गया है तथा विकसित अर्थव्यवस्था में दो प्रतिशत की गिरावट वर्ष 2009 में आने वाली हैं। विश्व बैंक के अध्यक्ष और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के प्रबंध निदेशक ने कहा कि 'यह संकट वैश्विक है और कोई, भी देश इससे बच नहीं सकता। (एजुकेशन इंटरनेशनल, 18 जनवरी 2009)।

हालांकि प्रारंभिक वर्षों में इसे अमेरीका में महसूस किया गया, परंतु अब यह संकट पूरे विश्व में फैलता जा रहा है। आय तथा रोजगार के अवसर कम होते जा रहे हैं और लोगों को सीधे तौर पर प्रभावित कर रहे हैं। कई कंपनियों ने घाटा उठाया तथा अपने को दिवालिया घाषित कर दिया। हाल ही की रिपोर्ट बताती है कि विश्व अर्थव्यवस्था में गिरावट के कारण पूरे विश्व में नौकरियों की कमी हो गई है। '' पेरिस में अधिवक्ता से लेकर, ताईवान में रसोई कर्मचारियों और कोलंबिया में अंगरक्षकों समेत सभी नौकरियों की संख्या घट रही है। (आई.एच.टी, 2009, पृ.–1)

पिछले वर्षों में अधिकतर संकट सार्वजनिक निवेश/बचत घाटों की वजह से हुआ जिसने की बड़े स्तर पर बजट में घाटे और उधार को बढ़ावा दिया। हालांकि 1998–99 के आर्थिक संकट के लिए निजी क्षेत्र से उधार लेना और देना जिम्मेदार था। (स्टिगलिटज, 1998)। वर्तमान संकट पूर्वी एशियाई आर्थिक संकट के समान है। यह वित्तीय व्यवस्था से प्रारंभ हुआ और सबसे पहले पेशेवर और व्हॉइट कॉलर जॉब को प्रभावित किया। परंतु यह अतीत के संकटों से कई मायनों में भिन्न है– विकसित देशों की वित्तीय प्रणाली इसके लिए जिम्मेदार है तथा यह वैश्विक संकट के रूप में मध्य और निम्न आय वाले देशों में फैल गया है (विश्व बैंक 2008)। यह संकट अपने आप ही समाप्त होने की प्रक्रिया में है। हालांकि कुछ अभिव्यक्तियों ने अटकलों के लिए संभावनाएं छोड़ी है।

कई देशों में पहले से ही आर्थिक संकट है और अपने नागरिकों के रोजगार तथा आय के ह्रास के प्रतिकूल प्रभाव को समाप्त करने हेतु रणनिति बनाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

नियोक्ता अपने आप को एक दीर्घ और कठोर मंदी से निपटने की तैयारी कर रहे हैं और रोजगार तथा खर्चों में आक्रामक रूप से कटौती कर रहे हैं। इधर जिन कंपनियों ने रोजगार में कटौती की घोषण की है इनमें इंटरनेट कंपनी याहू ने (1500 नौकरियों), दवाई

कंपनी कर्म ने (7200 नौकरियों), नेशनल सिटी बैंक (4,000 नौकरियों) तथा केवल कंपनी कामॅकास्ट ने कुछ नौकरियों में कटौती की घोषणा की है। (इरविन एंड रोसवाल्ड, 2008)। ''दुनिया भर में बड़े पैमाने पर फैले इस वित्तीय संकट से आइसलैण्ड सरकार गिर गई तथा विश्व में सभी श्रमिकों पर इसकी मार पड़ी और एक ही दिन में 85,000 नौकरियों की कटौती की गई।'' (फ्रांस 24, इंटरनेशनल न्यूज, 26 जनवरी 2009)

''सोमवार को व्यापार अनुसंधान समूह ने आकलन किया कि इस वर्ष यू.एस.ए दो मिलियन नौकरियों में कटौती कर सकता है, जो कि वर्ष 2008 में कटौती की गई 2.6 मिलियन नौकरियों के अतिरिक्त होगा। यह पिछले पांच आर्थिक संकट (अनुमानित 2 प्रतिशत) से लगभग 60 प्रतिशत अधिक होगा। (दा वॉल स्ट्रीट जर्नल, जनवरी 2009)

हाल ही के आकलन दर्शाते हैं कि यू.एस. ए पहले ही 4.4 लाख नौकरियां खो चुका है। अमेरीका में बेरोजगारी दर फरवरी 2009 में 8.1 प्रतिशत पहुंच गई और वर्ष 2010 में यह 10 प्रतिशत तक विकसित देशों में हो जायेगी। (द इकानमिस्ट, 14 मार्च 2009)। अभी तक, ब्रिटिश कंपनियों ने पिछले चार महीनों में 91,698 नौकरियों की कटौती कर चुकी है। (टेलीग्राफ, लंदन, 17 फरवरी 2009)। आगे यह भी आकलन किया जा रहा है कि बेरोजगारों की संख्या इस वर्ष के अंत में 50 मिलियन तक पहुंच जायेगी। बेरोजगारी दर बढ़ती जा रही है तथा कई विकसित देशों में यह 2010 में दोहरे अंकों में पहुंच जायेगी, (जर्मनी, यू.के, यू.एस.ए समेत) संकट के इस दौर में पूरे विश्व में 50 मिलियन नौकरियों की कटौती हो जायेगी। नौकरियों में कटौती केवल विकसित देशों के लिये ही नहीं है।

अक्तूबर तथा दिसंबर 2008 के मध्य में भारत में 0.5 बिलियन नौकरियों में कटौती का आकलन रहा। एक नवीनतम रिपोर्ट दर्शाती है कि माइक्रोसाफ्ट द्वारा नौकरियों में कटौती 5,000 भारतीय रोजगारों को प्रभावित कर रही है। लगभग 100,000 भारतीय जिन्हें एच-1-बी वीजा मिला है, बेरोजगार होने जा रहे हैं। अमरीकी राष्ट्रपति द्वारा किये गये सुधार प्रयासों में यह दशा है कि एच-1-बी वीजा स्थानीय लोगों के रोजगार को काटकर नहीं दिये जायेंगे। यह कई देशों के श्रमिकों, विशेषत: भारत को प्रभावित करेगा। पिछले कुछ वर्षों से एच- 1-बी वीजा कार्यक्रम का सबसे अधिक लाभ भारत को प्राप्त हुआ है। फिलीपीन्स के कुल 23,485 श्रमिक देश और विदेश में प्रत्यक्ष वैश्विक वित्तीय संकट के कारण नौकरियां खो चुके हैं- 19,443 श्रमिक फिलीपाइन्स में तथा 4,042 विदेशों में। (तराबहो फिलीपीन्स, 28 जनवरी 2009)। लाओस में ही

85,000 नौकरियों में कटौती की गई। चीन में भी, एफ.डी आई से उत्पन्न नौकरियां लगभग समाप्त हो चुकी हैं, इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात है कि बहुत से प्रवासी श्रमिक नौकरियां तलाश रहे हैं, क्योंकि उनकी कंपनियां जिनमें वे कार्यरत थे, बंद हो चुकी हैं।

हालांकि, भारत के लिये थोड़ी राहत है। कई आऊटसोर्सिंग कंपनियां नौकरियों में कटौती के बदले घाटे को पूरा करने के लिए वैकल्पिक उपाय तलाश रहे हैं। बी. जी श्रीनिवासन, वरिष्ठ उपाध्यक्ष तथा सदस्य इंफोसिस कार्यकारिणी परिषद ने टाइम्स आफ इंडिया को बताया कि हालांकि सभी यूरोपीय कंपनियों द्वारा 5 प्रतिशत बजट में कमी की गई है, पर अधिक यूरोपीय कंपनियां मंदी से लड़ने के लिए भारत जैसे कम लागत वाले देशों को नौकरियां आऊट-सोर्स कर रही हैं। हालांकि, यह अनुबंध बहुत बड़े नहीं हैं। इंफोसिस तथा अन्य भारतीय आऊटसोर्स कंपनियां अफ्रीका, यूरोप, मध्य एशिया की ओर रूख कर रहीं हैं जिससे कि उनके सबसे बड़े बाजार अमेरीका, पर निर्भरता कम हो सके। (श्रीनिवास, 2009)। यह आंशिक रूप से शायद नौकरियों की कमी को पूरा कर पाये।

संकट से निपटने के लिए उठाये गये कदम भूमंडलीकरण को बढ़ावा देने वाले पहलुओं को पीछे धकेल देते हैं। उदाहरण के लिये अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पूंजी और लोगों की आवाजाही। यू.के. में कई प्रदर्शनकारियों ने फिर से नारा दिया। ''ब्रिटिश नौकरियां ब्रिटिश श्रमिकों के लिए हैं''। राष्ट्रीय सरकारों द्वारा कुछ बचाव नीतियां बनाई गई जो स्थानीय श्रमिकों को विदेशी श्रमिकों से बचाती हैं। अमरीका द्वारा उठाये गये सुधार उपाय भी बचावकारी प्रवृत्तियों को दर्शाते हैं। इसके अंतर्गत कोई भी कंपनी अमेरीकी नागरिकों को नजरअंदाज कर विदेशी श्रमिकों को एच-1-बी वीजा नहीं दे सकती। यह नीतियां भूमंडलीकरण के विपरीत हैं जो कि बाजार को खोलने और उदारीकरण की नीति के विपरीत हैं, जिनकी वकालत यही देश करते थे।

नियोक्ता अपने अस्तित्व के बचाव हेतु लागत घटाने की रणनीति अपना रहे हैं। वह (अ) नौकरियों में कटौती (ब) सप्ताह में कार्यदिवसों में कमी (स) दिन में कार्य घंटों में कमी (द) वेतनरहित अवकाशों की संख्या में बढ़ोतरी (य) अनिवार्य वेतनरहित अवकाशों की शुरुआत जैसे उपाय अपना रहे हैं। वास्तव में, इनमें से कुछ उपाय बेरोजगारी को बढ़ावा देंगे। कई देश संरक्षणवादी नीति अपना रहे हैं जिससे लोगों और पूंजी के विदेश जाने पर अंकुश लगा है।

इस संकट ने शिक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव डाला। सबसे पहले स्नातकों की नौकरी की संभावनाओं को कम किया। यू.के. की 250 कंपनियों का सर्वेक्षण दर्शाता है कि नौकरियां 5.4 प्रतिशत गिर सकती हैं तथा वेतन आठ प्रतिशत, परिणामस्वरूप कई नियोक्ता सुझाव दे रहे हैं कि एक वर्ष छात्रों के लिये शून्य वर्ष हो। (स्पेन्सर 2009)। इसका उच्च शिक्षा की मांग पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

द्वितीय, वित्तीय संकट शिक्षा के लिए निधि को कम करेंगे। सरकार को वास्तविक निधि प्रदान कराने में मुश्किल होगी। निजी निगम जो शिक्षा में निवेश निधि में अंशदान देते हैं; वह ऐसा नहीं कर पायेंगे। परिवार की अपने बच्चों के लिये शिक्षा में निवेश करने की क्षमता घट जायेगी, क्योंकि नौकरियां घट जायेंगी और आय का स्तर कम हो जायेगा।

तृतीय, कई विश्वविद्यालय अपने निवेश को खो चुके होंगे। उदाहरण के लिये कई विश्वविद्यालयों ने अपनी बचत को ऐसे बैंकों में निवेश किया जो दिवालिये घोषित हो गये हैं। आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज जैसे विश्वविालयों ने कई मिलियन पाउन्ड का नुकसान उठाया। जुलाई 2007 और 2008 जून के बीच ओहियो राज्य विश्वविद्यालय का दान निधि 11 प्रतिशत गिरकर 2.03 मिलियन डालर रह गया। इस तरह के विकास क्रम अन्य विश्वविद्यालयों को भी प्रभावित कर रहे हैं। (ओकोबेन, 2009)।

चौथा, छात्र समर्थन प्रणाली पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। सालाय मये जो अमेरीका में सबसे बड़ा विद्यार्थी ऋण प्रदाता है अब तक 1.6 बिलियन डालर गंवा चुका है तथा कंपनी विद्यार्थी ऋण देने से आनाकानी कर रही है। शिक्षा संसाधन संस्थान (टेरी) जो, यू.एस.ए. में छात्र ऋण की सबसे बड़ी बीमा कंपनी है ने 2008 में दिवालिया संरक्षण दायर किया। ऋण प्राप्त करने में कठिनाईयां उन विश्वविद्यालयों में अधिक है जहां उच्च शुल्क दर है, यहां नामांकन प्रभावित हो सकता है।

पांचवां, कार्यक्रमों तथा स्टाफ भर्ती पर अंकुश लग जायेगा। वर्ष 2008 से कई विश्वविद्यालयों में भर्ती पर रोक लगी हुई है। अरिजोना विश्वविद्यालय खर्च कम करने के लिए कई विभागों को मिला रहा है तथा कई कार्यक्रमों को बंद करने जा रहा है। इसका परिणाम यह भी हुआ है कि विश्वविद्यालय में रहने वाले छात्रों ने अपने प्रवास का विस्तार किया और हड़ताल पर चले गये। (सिसिली, 2009)

छठा, द्विपक्षीय और बहुपक्षीय एजेंसियों को मदद कम हो जायेगी। हाल ही में आयोजित आई.बी.ई./यूनेस्को शिक्षा पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में कहा गया कि सामूहिक दाता देश सहायता प्रतिबद्धता पर पूरी तरह विफल रहे हैं। आर्थिक संकट इस स्थिति को

ओर खराब कर सकता है तथा वैश्विक वित्तीय संकट का सहायता पर प्रभाव विकासशील देशों के लिये खासकर हानिकारक सिद्ध होगा, विशेषत: जब शिक्षा के लिये अग्रिम की बात आती है। (मेल तथा गार्जियन ऑनलाइन, 3 दिसंबर 2008)।

विश्व बैंक अध्यक्ष तथा आई. एम. एफ प्रबंधन निदेशक ने शिक्षा तथा स्वास्थ्य को विकसित तथा विकासशील देशों की राजकोषीय योजना में समावेश करने का समर्थन किया। (एजुकेशन इंटरनेशनल, 18 जनवरी 2009)। इसके अलावा शिक्षा तथा प्रशिक्षण व्यवसायकर्त्ताओं के बीच किये गये एक ऑनलाइन शैक्षिक सर्वेक्षण (बर्लिन 2008) से संकेत मिला कि आर्थिक संकट ई-लर्निंग, अनौपचारिक शिक्षा तथा मिश्रित शिक्षा को बढ़ावा देती है क्योंकि संकट के प्रभाव से शिक्षा का बजट कम हो जाने के फलस्वरूप तकनीक के प्रयोग को बढ़ावा मिला है। (जेड.ई कूल ब्लॉग,27 नवंबर 2008)।

सभी वर्गों में, निजी तथा सीमा पार शिक्षा का क्षेत्र सबसे अधिक प्रभावित होगा। छात्रों की छात्रवृति सुविधा में गिरावट, मेजबान देशों में उनकी शिक्षा को समर्थन करने के लिए उपलब्ध अंशकालिक नौकरियां बंद हो जायेंगी, सीमा पार शिक्षा के लिये छात्र ऋण मिलने बंद हो जायेंगे, तथा परिवारों की कम आय विदेश में शिक्षा के खर्च को वहन नहीं कर पायेंगे। इस संकट का असर उच्च आय वर्ग पर निम्न आय वर्ग की तुलना में अधिक पड़ा; इसी प्रकार शहरी आबादी पर गांव की आबादी की तुलना में अधिक असर रहा तथा कृषि श्रमिकों की तुलना में उद्योगों में काम कर रहे श्रमिकों पर इसका अधिक असर हुआ। इसलिये, यह कहा जा सकता है कि इस संकट का प्रभाव उच्च शिक्षा पर अधिक पड़ेगा, विशेषत: प्रारंभिक चरणों में तथा उच्च शिक्षा के भीतर निजी तथा विदेश शिक्षा के क्षेत्र में इसका प्रभाव अच्छा नहीं रहेगा।

उच्च शिक्षा के विकास हेतु राष्ट्रीय रणनीतियां

यह संकट उच्च शिक्षा के विकास के संबंध में कुछ गंभीर मुद्दों को उठाता है। बार-बार टिप्पणीकारों ने राय दी है कि इस संकट के लिये विनियमन और राज्यों की अपर्याप्त कार्रवाई महत्वपूर्ण कारक है। वास्तव में, सुविधाजनक भूमंडलीकरण की प्रक्रिया हेतु। उदारवादी नीतियां बाजार तथा बाजार अनुकूल सुधारों को बढ़ावा देने का एक अनिवार्य भाग था, जैसा कि इस पत्र में चर्चा की गई है, उच्च शिक्षा में भूमंडलीकरण से बाजार प्रक्रिया को बढ़ावा मिला। महत्वपूर्ण प्रश्न यह है- क्या संकट के समय में भी उच्च शिक्षा में बाजार प्रक्रिया उसी स्तर पर रहेगी? संकट से बचने के लिये शिक्षा में बाजार प्रक्रिया को कैसे विनियमित किया जाये? शिक्षा की पहुंच को कैसे विस्तारित किया

जाये? निजी क्षेत्र में (घरेलू तथा विदेशी क्षेत्र समेत) उच्च शिक्षा के विस्तार को कैसे सुगम बनाया जाये।

विश्वविद्यालय परंपरागत रूप से सार्वजनिक संस्था थे और उनका विकास और विस्तार राज्य के संसाधनों पर आधारित था। 1980 के वित्तीय संकट ने उसी स्तर पर उच्च शिक्षा का राज्य द्वारा वित्तपोषण मुश्किल कर दिया, जिससे कि उच्च शिक्षा का विस्तार बहुत धीमे हुआ। वित्त की समस्या को सुलझाने के लिये राज्यों ने सार्वजनिक संस्थानों में लागत वसूली विधि अपनाई तथा निजी संस्थानों को बढ़ावा दिया और बाजार प्रक्रिया को अपनाया।

उच्च शिक्षा में निजी क्षेत्र तथा बाजार प्रक्रिया को बढ़ाने के साथ सीमा पार शिक्षा एक नया तथा पहुंच वाला आयाम बन गया तथा उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण की राह आसान हो गई। कई देशों ने विदेशी शैक्षिक प्रदाताओं को बढ़ावा देने हेतु नियम तथा अधिनियमों का गठन किया । इस प्रकार कई देशों में मुख्य उच्च शिक्षा प्रदाता तथा उच्च शिक्षा में अधिक नामांकन वाले देशों में प्रदाता निजी तथा विदेशी थे। राष्ट्रीय स्तर पर उच्च शिक्षा विकास पर बाजार का प्रभाव एक महत्वपूर्ण चर्चा का विषय है। वर्तमान तथा पिछले आर्थिक संकटों के अनुभव तथा शिक्षा में समान स्थिति से बचने के लिये राज्य को उच्च शिक्षा में विभिन्न लाभदाताओं को नियंत्रित करने की आवश्यकता है।

विदेशी उच्च शिक्षा संस्थानों तथा निजी संस्थानों के खोलने तथा संचालन पर राष्ट्रीय स्तर पर मानिटरिंग हेतु, अधिक नियमों की आवश्यकता है। केन्या, उगांडा, तंजानिया इत्यादि जैसे देशों में निजी विश्वविद्यालयों का विनियमन तीन चरणीय प्रक्रिया है। अनंतिम प्राधिकार पत्र द्वारा अस्थायी मान्यता दी जाती है, तत्पश्चात पंजीकरण मान्यता प्रदान करने हेतु किया जाता है तथा अंतिम चरण में पूर्ण मान्यता प्रदान की जाती है। यह एक अच्छी प्रक्रिया तथा पद्धति है। इसलिये निजी तथा विदेशी संस्थानों की स्वीकृति की प्रक्रिया की समीक्षा की आवश्यकता है।

कुछ देशों में संस्थानों द्वारा धोखाधड़ी के मामले सामने आये हैं। यह पाया गया है कि कई मामलों में विदेशी प्रदाता संदिग्ध है, संथान और डिग्री फर्जी हैं। कई देशों में सार्वजनिक प्राधिकरण तुरंत प्रभावी कार्रवाई नहीं करता। कई देशों में सरकार जोर देती है कि केवल गृह देश में मान्यता प्राप्त संस्थान ही मेजबान देश में शाखा खोल पायेंगे। इस प्रकार , गृह देश में मान्यता, सीमा–पार सहयोग या फिर दूसरे देश में कैम्पस, शाखा

खोलने के लिये अनिवार्य शर्त बन गई है।

चीन जैसे कई देशों में, सीमा पार संस्थान केवल राष्ट्रीय संस्थानों के साथ मिलकर संचालन कर सकते हैं, यह देश केवल सहयोगात्मक तथा संयुक्त कार्यक्रमों को ही अनुमति प्रदान करता है तथा विदेशी संस्थानों को राष्ट्रीय /घरेलू संस्थानों के सहयोग के साथ ही काम करना होता है। इससे, फर्जी गतिविधियों पर रोक लगती है तथा विद्यार्थियों के हितों को सुरक्षा मिलती है।

राष्ट्रीय, क्षेत्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर निजी तथा विदेशी शैक्षिक प्रदाताओं के संचालन के लिये विनियम फ्रेमवर्क के विकास की आवश्यकता है। विदेशी शिक्षा प्रदाता के लिए अच्छे व्यवहार सिद्धांत कोड, जो कि यूनेस्को के सहयोग से यूरोप परिषद द्वारा स्थापित किया गया तथा लिर्सनन सम्मेलन में सहमति के साथ, यूरोप क्षेत्र में विनियम का उदाहरण है। यह कोड विद्यार्थियों को फर्जी डिग्री तथा योग्यताओं से बचाता है और राष्ट्रीय प्राधिकरणों को विदेशी प्रदाताओं से। (वर्बिक तथा जोकिविर्न्ता 2005)।

यूनेस्को तथा ओ.ई.सी.डी. ने सीमा–पार शिक्षा हेतु गुणवत्ता प्रावधान हेतु मार्गदर्शिका सिद्धांत विकसित किये हैं। (यूनेस्को ओ.ई.सी.डी. 2005)। एक ओर मार्गदर्शी सिद्धांतों का सेट यूनेस्को तथा कामन्वेल्थ आफ लर्निंग द्वारा तैयार किया गया है (नाईट 2006) जो गैट सम्मेलन के देशों के लिए विस्तृत दिग्दर्शिका प्रदान करता है।

लाभ कमाने वाले निजी तथा विदेशी संस्थान, आम तौर पर भारी भरकम शुल्क–वसूल करते हैं। कुछ उदाहरण ऐसे हैं जब इन संस्थानों ने शुल्क बार–बार बढ़ाया और छात्रों को प्रति वर्ष अतिरिक्त शुल्क देना पड़ा। कुछ राष्ट्रीय प्राधिकरणों ने शुल्क को नियंत्रित करने के लिये नियम बनाये। चीन जैसे देशों में सीमा पार प्रदाता शुल्क राष्ट्रीय प्राधिकरण की सहमति के बगैर नहीं बढ़ा सकते। चूंकि चीन स्वतंत्र सीमा–पार संस्थानों को बढ़ावा नहीं देता, इसलिये इस प्रावधान का क्रियान्वयन आसान है।

एक अन्य उदाहरण दक्षिण अफ्रीका का है। दक्षिण अफ्रीका की सरकार चीन की सरकार की तरह शुल्क का नियंत्रण नहीं करती। यह देश इस बात पर बल देता है कि लाभ कमाने वाले विदेशी संस्थान विश्वविद्यालय एक्ट के बजाय कंपनी एक्ट में पंजीकृत हों। 1999 में दक्षिण अफ्रीका में पांच शिक्षा कंपनियों के पास 43 कंपनियां थीं तथा जोहांसबर्ग स्टॉक एक्सचेंज में पंजीकृत थीं। 2004 तक एडवटेक तथा नासपरे– जोहांसबर्ग स्टॉक एक्सचेंज में पंजीकृत थी तथा दक्षिण अफ्रीका में निजी उच्च शिक्षा संस्थानों में 7.0 प्रतिशत से अधिक नामांकन इनके पास था। (मानिजेला, 2006)।

जैसा कि पहले चर्चा की गई है, निजी तथा सीमा पार प्रदाता सीमित विषय क्षेत्रों में ही अध्ययन कार्यक्रम चलाते हैं। यह बाजारोन्मुखी कार्यक्रम निजी व्यापारिक आवश्यकताओं के लिये चलाते हैं। व्यापार-प्रशासन, कप्यूटर साइंस, लेखा, मार्केटिंग, अर्थशास्त्र तथा संचार के कार्यक्रम इन संस्थानों में बहुत आम हैं। (वर्गीज 2009)। इन कार्यक्रमों ने उभरते हुये उत्पादक क्षेत्रों की कौशलों की आवश्यकताओं की पूर्ति में मदद भी है। सीमा-पार शिक्षा का यह संकीर्ण अभिविन्यास उच्च शिक्षा का एकतरफा विकास करेगा। इसका निहितार्थ है कि अध्ययन कार्यक्रमों के घटकों पर नियंत्रण लगाने की आवश्यकता है।

कुछ निजी तथा सीमा-पार संस्थान धर्मोन्मुखी होते हैं। यह अफ्रीका में ज्यादा होता है। कई देशों में इनसे संबंधित नियम स्पष्ट नहीं होते। सार्वजनिक संस्थान धर्मनिरपेक्ष होते हैं। धर्म आधारित संस्थानों को बढ़ावा तथा पंथ विचार एवम् मूल्य राष्ट्रीय एकीकरण के लिए अच्छी दशा नहीं है।

भारत जैसे कुछ देशों में, नियम काफी सख्त है और विदेशी संस्थानों के प्रसार की अनुमति नहीं है। उदाहरण के लिये, नियमानुसार भारत में शैक्षिक संस्थान ट्रस्ट, सोसायटी एवम् चैरीटेबल कंपनियों द्वारा ही खोले जाते हैं। कंपनी एक्ट में पंजीकृत होने के बावजूद लाभ संस्थान से बाहर नहीं जाता। इसके अतिरिक्त कंपनी एक्ट के अंतर्गत पंजीकृत उच्च शिक्षा संस्थानों को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी)तथा अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (ए.आई.सी.टी.ई.) (फाइनेंशियल एक्सप्रेस 24 नवंबर 2008) द्वारा मान्यता नहीं दी गई है। इसलिये यह आवश्यक है कि विदेशी संस्थानों और उनके कार्यक्रमों की मान्यता मेजबान देश में मान्यता प्राप्त संस्थानों द्वारा कराई जाये। यह गुणवत्ता के प्रावधान की सुनिश्चितता तय करती है तो दूसरी तरफ डिग्री को मान्यता प्रदान करती है।

अधिक संख्या में सीमा-पार संस्थान घरेलू तथा विदेशी संस्थानों के बीच प्रतियोगिता को बढ़ावा देंगे। बेहतर छात्र जो रोजगारोन्मुखी विषयों में प्रवेश चाहते हैं, उन्हें सीमा-पार के संस्थान आसानी से ले लेते हैं। इससे राष्ट्रीय संस्थान कमजोर हो जायेंगे तथा यह ऐसे छात्रों का गढ़ हो जायेगा जो विदेशी संस्थानों में प्रवेश या फिर उसकी लागत वहन नहीं कर सकते और जिन्हें मजबूरन घरेलू संस्थानों के कम आकर्षक विषयों में प्रवेश लेना पड़ रहा है।

ये नियम निजी और सीमा पार के संस्थानों तक ही सीमित नहीं होने चाहिये। इन्हें उच्च शिक्षा के सभी संस्थानों के लिए लागू किया जाना चाहिए। नियमों का प्रयोजन शिक्षा में सार्वजनिक निजी और सीमा पार के संस्थानों के बीच साझेदारी के माध्यम से उच्च शिक्षा का एकीकृत विकास होना चाहिए। परंतु नियमों की अधिकता सीमा–पार प्रदाताओं को बाहर कर सकती है जिससे उच्च शिक्षा सिमट जायेगी विशेषत: जब सरकारी प्राधिकरण अतिरिक्त निवेश करने की स्थिति में नहीं होते।

निष्कर्ष

यह पत्र भूमंडलीकरण का और श्रम बाजार में अत्याधिक कुशल लोगों की मांग और उच्च शिक्षा के लिए मांग पर इसके प्रभावों का अध्ययन करता है। उच्च शिक्षा के विस्तार की जरूरत है और इसके लिये रणनीति है कि उच्च शिक्षा का विस्तार सार्वजनिक संस्थानों के अलावा निजी और सीमा पार प्रदाताओं को प्रोत्साहित करके किया जाये। सामान्य तौर पर उच्च शिक्षा तथा सीमा पार शिक्षा के लिए मांग संस्थानों छात्रों और विशेष रूप से, शिक्षकों की सीमा पार से गतिशीलता के माध्यम से परिलक्षित होती है। ये क्षेत्र अधिकतर कीमतों और मुनाफे के बाजार के सिद्धांतों के आधार पर कार्य करते हैं।

देशों को लगता है शिक्षा के क्षेत्र में बाजार प्रक्रिया मौजूदा संकट की वजह से अब स्वीकार करना पड़ेगा। पहले की तुलना में किस हद तक बाजार प्रक्रिया को उच्च शिक्षा के लिए बढ़ाया जा सकता है इस पर ध्यान से विश्लेषण की जरूरत है। शिक्षा क्षेत्र को बाजार के भरोसे छोड़ने का मतलब है कि दीर्घकाल के लिये शिक्षा का राष्ट्र निर्माण हेतु विकास के योगदान से कुछ समझौता हो सकता है। बाजार समता की तुलना में दक्षता बढ़ाने के लिए अधिक विश्वसनीय हैं। चूंकि शिक्षा कमाई में भिन्नता का महत्वपूर्ण निर्धारक है, अगर अच्छी तरह से योजना नहीं बनाई गई तो यह पीढ़ी–दर–पीढ़ी आर्थिक और सामाजिक असमानता का एक स्रोत बन सकता है। इसके अलावा, शिक्षा को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और बाजार तय करने के लिए छोड़ना पाठ्यक्रम तथा घटकों की रूपरेखा पर राष्ट्रीय प्रभाव को कम करना है। इससे राष्ट्रीय सरोकारों और विकास पर लंबे समय तक प्रतिकूल प्रभाव हो सकता है।

उच्च शिक्षा का अनियोजित और अविनियमित विस्तार नई असमानताओं को जन्म दे सकता है और मौजूदा असमानताओं को बढ़ा सकता है। यह तब अधिक होगा जब वहां कई निजी और सीमा पार से बहुसंख्या प्रदाता हों। उच्च शुल्क संरचना को देखते हुए एक बेहतर आर्थिक पृष्ठभूमि के ही लोग सीमा पार से और निजी संस्थानों में भर्ती

होने में सक्ष्म हो पायेंगे। यह उच्च शिक्षा के विकास में दो प्रकार के असंतुलन कर सकता है। सबसे पहला, शिक्षा की पहुंच में असमानता बढ़ती है और रोजगार के लिए बाद में। दूसरा, यह क्षेत्रीय असंतुलन को जन्म दे सकता है। निजी और सीमा पार के शिक्षा संस्थानों में से कई शहरी क्षेत्रों में स्थित हैं, इससे पहुंच वाले क्षेत्रों में शिक्षा की पहुंच आसान हो जाती है। इसलिए, अतिरिक्त मांग को पूरा करने की आम धारणा के विपरीत जो पहले से ही इसका उपयोग कर रहे हैं उनके उपयोग के विकल्प में वृद्धि हो रही है।

उच्च शिक्षा के विकास पर आर्थिक संकट के प्रभाव का और अधिक बारीकी से विश्लेषण किया जाना चाहिए। उच्च शिक्षा में निजी क्षेत्र के निवेश की संभावनाएं धीमी या घट सकती हैं। आर्थिक संकट की परिवारों में प्रतिक्रिया बहुत महत्वपूर्ण है। उच्च शिक्षा पर आर्थिक संकट के पूर्व एशियाई प्रभाव का विश्लेषण (वर्गीज, 2001) स्पष्ट रूप से दो पैटर्न बताता है (क) परिवार संकट की अवधि के दौरान सब कुछ कम खपत करते हैं, यह उच्च शिक्षा के लिए मांग में गिरावट का संकेत हो सकता है, (ख) परिवार पुनः अपने बजट को समायोजित करते हैं, शैक्षिक निवेश को बरकरार रखने के लिए। पूर्व एशिया में संकट से प्रभावित कई देशों में ऐसा हुआ। 1990 के दशक के संकट के दौरान इन देशों की सरकारों द्वारा अपनाई गई नीतियों के अंतर्गत सरकारी या निजी संस्थानों में छात्रों का समर्थन अभी भी प्रासंगिक हो सकता है। इस तरह की नीतियां उच्च शिक्षा संस्थानों को समर्थन करती हैं और परिवारों द्वारा उच्च शिक्षा की मांग को जारी रखती हैं।

प्रस्तुत पत्र उच्च शिक्षा में राज्य के हस्तक्षेप को शिक्षा के क्षेत्र में समन्वित विकास को सुविधाजनक बनाने के लिए और देशों के दीर्घकालिक विकास के हितों की रक्षा करने के लिए तर्क संगत बताता है। इसलिए, राज्य का हस्तक्षेप आवश्यक शर्त है और एक वांछनीय पहलू राज्य द्वारा दी जाने वाली निधि है। तंत्र की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए धन के अभाव में भी राज्य के लिए संस्थानों की स्थापना के लिए नियमों को विकसित करने में और अधिक सक्रिय होने की आवश्यकता है। समता सुनिश्चित करने के लिए नियम और राष्ट्रीय विकास की आवश्यकताओं के साथ उच्च शिक्षा को जोड़ने के लिए राज्य की भूमिका कारगर होनी चाहिये। वर्तमान आर्थिक संकट की शर्तों के तहत राज्य के वित्त पोषण में बढ़ोतरी की जरूरत है जिससे संकट के प्रतिकूल प्रभावों से उच्च शिक्षा का क्षेत्र प्रभावित न हो तथा शिक्षा के लिये समर्थन प्राप्त होता रहे।

संदर्भ

एपलेटन, एस., मोरगन, जे.; साइवस, ए., (2006); ''शूड टीचर्स स्टे एट होम? द इम्पैक्ट आफ इंटरनेशनल टीचर मोबिलिटी,'' जर्नल आफ इंटरनल डवलपमेंट, जिल्द 18, पृ. 771–86

बशीर, एस. (2007), ट्रेडस इन इंटरनेशनल ट्रेड इन हायर एजुकेशन; इंप्लिकेशन्स एंड आपशन्स फॉर डवलपिंग कंट्रीज, वर्ल्ड बैंक, वाशिंगटन डी.सी.

भूषण एस (2005); फॉरन यूनिवर्सिटीज इन इंडिया–मार्केट ड्राइवन न्यू डायरेक्शन्स, इंटरनेशनल हायर एजुकेशन, अंक 41, शीत 2005

चंदा, एन (2000): द टंग आफ वॉर फार एशियन बेस्ट ब्रेन्स, फार इस्टर्न इकानामिक रिव्यू, नवंबर 2000, जिल्द 163, सं. 45, पृ. 38–45

सिसले, आर (2009) : इकानमिक क्राईसेज़ हिट्स हायर एजुकेशन डब्ल्यू डब्ल्यू एसोशिएट्स कंटेट डॉट काम, 4 फरवरी 2009

गैरेट, आर (2004) : फॉरेन हायर एजुकेशन एक्टिविटी इन चाईना, इंटरनेशनल हायर एजुकेशन, शीत 2004

आई.बी.एम. ग्लोबल सर्विसेज (2008) ग्लोबल लोकेशन ट्रेंडस : वार्षिक रिपोर्ट न्यूयार्क, आई.बी. एम. ग्लोबल सर्विसेज

इंटरनेशनल हेराल्ड ट्रिब्यून (आई.एच.टी.) (2009); जॉन क्राइज़ेज कैसकेड्स अक्रॉस ग्लोब, इंटरनेशनल हेराल्ड ट्रिब्यून, 14–15 फरवरी 2009

इंटरनेशनल लेबर ऑफिस (आई.एल.ओ.) 2004; प्रो. मीटिंग इम्पलाइमेंट पालिसीज, स्क्लिस, इंटरप्राइज़ेस, जेनेवा, आई.एल.ओ.

ईरविन, एन. रोसवाल्ड, एस. (2008): जाब लासेज़ एसिलेरेट, सिगनलिंग डीपर डिस्ट्रेज़ वाशिंगटन पोस्ट, 23 अक्तूबर, 2008

कपूर डी., मैकहाले जे. (2008): गिव अस यूर बेस्ट एंड ब्राईटेस्ट, द ग्लोबल हंट फार टेलेंट एंड इट्स इम्पैक्ट ऑन द डवलपिंग वर्ल्ड, बाल्टीमोर : ब्रूकिंग इंस्टीट्यूशन प्रेस (सेंटर फार ग्लोबल डवलपमेंट)

नाईट जे., (2006) हायर एजुकेशन क्रासिंग बोर्डर, ए गाईड टू द इम्पलिकेशन्स आफ द गैट्स फार क्रॉस बार्डर एजुकेशन, पेरिस, यूनेस्को कामनवेल्थ आफ लर्निंग

कोशी यू (1997): इंटरनेशनलाईजेशन आफ जैपनीस हायर एजुकेशन, जिल्द 34, अंक–2, पृ. 259–73

ली. एम तथा ब्रे. एम., (2007) : क्रॉस बार्डर फ्लो आफ स्टूडेन्ट्स फार हायर एजुकेशन : पुश–पुल फैक्ट्र्स एंड मोटीवेशन आफ मैनलेंण्ड चाइनीज स्टूडेन्ट्स इन हांग–कांग एंड मकाऊ, उच्च शिक्षा, जिल्द 53, पृ. 791–818, न्यूयार्क स्प्रिंगर

मैबीजेला, एम. (2006): रि-काउन्टिग द स्टेट आफ प्राइवेट हायर एजुकेशन इन साउथ अफ्रीका, वर्गीज, : एन.वी. (सं.) ग्रोथ एंड एम्पान्शेन आफ हायर एजुकेशन इन साउथ अफ्रीका, पृ. 131-66 पेरिस यूनेस्को। आई.आई.ई.पी.

मार्टिन एम. (सं.) (2007) : क्रॉस बार्डर हायर एजुकेशन : रेगुलेशन क्वालिटी एशुरेन्स एंड इम्पैक्ट, जिल्द-1, पेरिस : आई.आई.ई.पी., यूनेस्को

मेलवानी, एल. (2009) : अकादमिक स्टार्स, लिटल इंडिया, डब्ल्युडब्ल्युडब्लयु.लिटिल इंडिया. कॉम 29 अप्रैल 2008

मोरगन जे. डब्ल्यू साईवस ए. एपलेटन एस. (2006) : टीचर मोबिलिटी, 'ब्रेन ड्रेन' लेबर मार्केट्स एंड एजुकेशनल रिसोर्सेज इन कामनवेल्थ रिसर्च इशू सं. 66, लंदन, अंतर्राष्ट्रीय विकास विभाग (डी.एफ.आई.डी.)

ओकोबेन जे. (2009) : कॉलेज एंडवामेन्ट टेक्स ए हिट अमिद इकॉनमिक क्राइसेस : हायर एजुकेशन कॉलम : द प्लेन डीलर, 28 जनवरी 2009

आरगेनाईजेशन फार इकानमिक को-ऑपरेशन एंड डवलपमेंट (ओ.ई.सी.डी.) (2008) हायर एजुकेशन टू 2030 : व्हाट फ्यूचर्स फॉर क्वालिटी एक्सेज इन द एरा आफ ग्लोबलाइजेशन ? पेरिस : ओ.ई.सी.डी.

श्वार्टजमैन एस. (2009) : द यू.एस. क्राइसेज़ अफैक्ट हायर एजुकेशन लोन, डब्ल्यू डब्ल्यू स्मूडेली कैम्पस.कॉम, 13 फरवरी

सीरत, एम. (206) मलेशिया, इन यूनेस्को एंड आर.आई.एच.ई.डी. (सं) : हायर एजुकेशन इन साउथ ईस्ट एशिया, पृ. 1010-36 बैंकाक : यूनेस्को

स्मिदर्स, ए., रोबिवासन, पृ. (1998): टीचर सप्लाई (1998) - पासिंग प्राब्लम ऑर इम्पैडिंग क्राइसेज, लिवरपूल : सेंटर फार एजुकेशन एंड एम्प्लाईमेन्ट युनिवर्सिटी आफ लिवरपूल

स्पेनसर डी. (2009) यू.के. कोटड क्लाइमेट फार ग्रेजुएट्स, यूनिवर्सिटी वर्ल्ड न्यूज, 15 फरवरी, 2009

श्रीनिवास, बी.जी., (2009) इंटरव्यू विद टाइम्स आफ इंडिया, 18 फरवरी, 2009

स्टिगिलाइटज जे. (1998) : नॉलेज फार इकानोमिक डवलपमेंट इकानमिक साईनस, इकानमिक पालिसी एंड इकानमिक एडवाईज, विकास अर्थशास्त्र पर वार्षिक विश्व बैंक सम्मेलन, वाशिंगटन डी.सी. वर्ल्ड बैंक

टी.जॉग.के. (2008) युनिवर्सिटी टू रिक्यूरिट 300 फॉरैन प्रोफेसर, कोरियन टाइम्स, 22 अगस्त, 2007

तिलक जे.बी.जी. (2007) इंटरनेशनलाईजेशन आफ हायर एजुकेशन जर्नल आफ इंडियन स्कूल आफ पालिटिकल इकॉनमी 19(3) (जुलाई-सितंबर) : 371-418

ट्रेम्बले, के. (2002) स्टूडेन्ट मोबिलिटी बिटवीन एंड टूवर्डस ओ.ई.सी.डी. कंट्रीज – ए कंपरेटीव अनालिसीज : इन आर्गेनाइजेशन फार इकानमिक कोपरेशन एंड डवलपमेंट (ओ.ई.सी.डी.), इंटरनेशनल मोबिलिटी ऑफ द हायली स्किल्ड, पृ. 39–70, पेरिस, ओ.ई.सी.डी.

यूनेस्को इंस्टीट्यूट फॉर स्टैस्टिक्स, यू.आई.एस. (2008) ग्लोबल एजुकेशन डाइजेस्ट, मॉट्रियल : यू.आई.एस

यूनाईटेड नेशनल एजुकेशनल साईन्टिफिक एंड कलचरल आर्गेनाइजेशन फार इकानमिक को–ऑपरेशन एंड डवलपमेन्ट (यूनेस्को/ओ.ई.सी.डी. 2005): गाइडलाईन्स फार क्वालिटी प्रोविजन इन क्रॉस बार्डर हायर एजुकेशन पेरिस यूनेस्को/ओ.ई.सी.डी.

यू.एस. वाणिज्य विभाग (यू.एस.डी.सी) 2008 : एसेसिंग ट्रेन्ड्स एंड पालिसीज आफ फॉरैन डायरेक्ट इन्वेस्टमेंट इन द यू.एस., वाशिंगटन: इंटरनेशनल ट्रेड एंड एडमिनिस्ट्रेशन, वाणिज्य विभाग

वर्गीज़, एन.वी. (2007) : गैट्स एंड नेशनल रेगुलेटरी पालिसीज इन हायर एजुकेशन गाइडलाईन्स फार डवलपिंग कंट्रीज, रिसर्च पेपर सीरीज, पेरिस, आई.आई.ई.पी/यूनेस्को)

वर्गीज एन.वी. (2009) ए. :क्रॉस बार्डर हायर एजुकेशन एंड नेशनल स्कीम ऑफ एजुकेशन, इन : फील्ड, एम.एच.फेगन, जे.(सं) : एजुकेशन अक्रॉस वार्डरस, पालिटिक्स पालिसी एंड लेजीसलेटिव एक्शन, स्प्रिंगर पृ. 33–48

वर्गीज एन.वी. (2009) बी. : गैट्स एंड ट्रांस–नेशनल मोबिलिटी इन हायर एजुकेशन, इन भंडारी, राजिका एंड लार्गन, शेपर्ड (सं) हायर एजुकेशन ऑन द मूव : न्यू डवलपमेंट इन ग्लोबल मोबिलिटी ग्लोबल एजुकेशन रिसर्च पेपर प्रोजेक्ट रिपोर्ट–2), न्यूयार्क, इंस्टीट्यूट आफ इन्टरनेशनल एजुकेशन, एंड अमेरिकन इंस्टीट्यूट फार फॉरैन स्टडी फाउन्डेशन, पृ. 17–27

वार्बिक, एल. : जोकिविटी, एल (2005) नेशनल रेगुलेटरी फ्रेमवर्क फार ट्रांसनेशनल हायर एजुकेशन–मॉडल्स एंड ट्रेंडस लंइन : द आबसरवेटरी ऑन बार्डर लैस हायर एजुकेशन

वर्ल्ड बैंक (2002) कंस्ट्रक्टिन्ग नॉलेज सासायटीज – न्यू चैलेंजेस फार टेरीटरी एजुकेशन, वाशिंगटन डी.सी. : वर्ल्ड बैंक

वर्ल्ड बैंक (2008) : लैसन फ्रॉम वर्ल्ड बैंक ग्रुप रिसपान्सेज टू पास्ट फाइनेंशियल क्राइसेज, वाशिंगटन डी.सी.आई.ई.जी. वर्ल्ड बैंक

वर्ल्ड बैंक (2009) : एस्सीलेरेटिंग कैच अप टैरीटेरी एजुकेशन फॉर ग्रोथ इन सब अरबन अफ्रीका, वाशिंगटन डी.सी. : द इंटरनेशनल बैंक फार रि–कंस्ट्रक्शन एंड डवलपमेंट/वर्ल्ड बैंक

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

भारत में उच्च शिक्षा में समसामयिक सुधार एवं नीतिगत क्रियान्वयन

कमलेश गुप्ता*

21वीं सदी में किसी देश की प्रगति का निर्धारण उसकी सैन्य शक्ति, राजनीतिक स्थिरता, आर्थिक सुदृढ़ता के आधार पर नहीं होगा अपितु उसका निर्धारण समसामयिक, आधुनिक ज्ञान एवं सूचनाओं के नियंत्रण के आधार पर होगा। पश्चिम में भी आस्था, धर्म, सामंतवादी व्यवस्था पर आधारित मध्य युग के अंत तथा विवेक व तर्क को महत्व देने वाले आधुनिक वैज्ञानिक युग का जन्म वहाँ के विश्वविद्यालयों के ज्ञान उत्सर्जन के कारण ही संभव हो सका। आठ विकसित देशों (G–8) ने भी शिक्षा की गुणवत्ता बनाये रखने के लिये विशेष बल दिया व राजकीय संरक्षण प्रदान किया। 1947 तक भारतीय उच्च शिक्षा व्यवस्था सुदृढ़ स्थिति में थी। इलाहाबाद, बनारस, अलीगढ़, पूणे, शान्ति निकेतन, काशी विद्यापीठ आदि संस्थानों की स्थापना बौद्धिक एवं राष्ट्रीय भावना से प्रेरित थी। इस व्यवस्था से विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिभाओं को विकसित किया, जिसके परिणामस्वरूप युवाओं के ज्ञान व कौशल में वृद्धि हुई।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य

किसी क्षेत्र को सम्पूर्ण विकास के लिये वहाँ के मानव संसाधन को विकास में परिलक्षित होना आवश्यक है। मानव विकास से आशय मनुष्य की शिक्षा, स्वास्थ्य, सशक्तिकरण, विकल्पों व अवसरों की वृद्धि से है। वर्तमान में ज्ञान एवं विकास का माध्यम शिक्षा है। शिक्षा का स्तर मानव विकास के स्तर को परिलक्षित करता है। शिक्षा एक बहुमुखी प्रक्रिया है तथा वर्तमान परिपेक्ष्य में किसी राज्य/राष्ट्र व समाज में मानव विकास का पैमाना भी है। अत: उच्च शिक्षा के महत्व को नहीं नकारा जा सकता क्योंकि उच्च शिक्षा

* रिसर्च एसोसिएट, राजीव गांधी चेयर इन कन्टमप्रेरी स्टडीज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश

ही सभी तकनीकी, अविष्कारों, रोजगारों व समग्र विकास का मुख्य स्रोत है। वर्तमान सरकार ने उच्च शिक्षा के सुदृढ़ीकरण की दिशा में सराहनीय प्रयास किये हैं, जिसमें मुख्य व शिक्षण संस्थानों के संरचनात्मक सुधार के साथ-साथ गुणात्मक सुधार पर बल दिये जाने का प्रयास किया जा रहा है।

उच्च शिक्षा किसी देश की न केवल आर्थिक व्यवस्था को सुनिश्चित करती है, अपितु वैचारिक, सामाजिक चिंतन व त्वरित विकास की मुख्य कारक होती है। वर्तमान में वैश्विक शैक्षणिक स्तर पर पश्चिमी देशों की स्थिति अधिक सुदृढ़ है अर्थात् अमेरिका इंगलैंड पश्चिमी देशों के विश्वविद्यालयों व संस्थाओं का वर्चस्व है। ''नि:संदेह भारत विश्व की तीसरी बड़ी शैक्षणिक व्यवस्था है। अमेरिका व चीन के बाद भारत का ही नंबर आता है,'' लेकिन अन्य एशियाई देश इस मामले में थोड़े पीछे चल रहे है जिसमें सिंगापुर, दक्षिण कोरिया, जापान, चीन इस दिशा में स्थिरता के साथ बढ़ने की प्रयास कर रहे हैं। भारत को उच्च शिक्षा के स्तर को सुदृढ़ करने हेतु सकारात्मक सुधारों की आवश्यकता है, जिससे भारत उच्च शिक्षा के स्तर पर वैश्विक स्तर पर उत्कृष्ट रूप में उभर सके।

एक अनुमान के अनुसार यदि ''21वीं सदी में भारत के 6 से 14 वर्ष के 6 करोड़ बच्चे अशिक्षित रहते हैं और बेरोजगारो व अर्धबेरोजगारों की फौज बढ़ती है तो यह वास्तव में चिंता का विषय है।'' अगले पाँच वर्षों में विश्व की 25% श्रम शक्ति भारत में होगी और अगर देश के युवा योग्य व प्रतिभाशाली हुये तो भारत की आर्थिक महाशक्ति बनने से कोई नहीं रोक सकेगा। लेकिन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत में शिक्षा के मात्रात्मक प्रसार के साथ उसका गुणात्मक मूल्य धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। मुख्यत: कुछ केन्द्रों को छोड़कर अन्य शिक्षण संस्थान केवल डिग्रियां बाँटने का केन्द्र बन गए हैं। वर्तमान में 18 से 24 वर्ष आयु के केवल 12.4 प्रतिशत विद्यार्थी ही विश्वविद्यालयों में प्रवेश लेते हैं। भारत में विश्वविद्यालयों में प्रवेश लेने वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत औसत लगभग सभी विकासशील देशों के प्रतिशत से कम है जबकि विकसित देशों में यह प्रतिशत 40 है। तब इसमें सुधार करने के लिये भारत में 800 विश्वविद्यालय और 35,000 कालेजों की आवश्यकता है। ''वर्तमान में कुल 6 प्रतिशत छात्र ही उच्च शिक्षा प्राप्त कर पा रहे हैं जिन छात्रों का अच्छे संस्थानों में दाखिला नहीं हो पाता वे उच्च शिक्षा के लिये विदेश चले जाते हैं।''

''वर्तमान भारत में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में 471 विश्वविद्यालय (जिनमें 40 केन्द्रीय विश्वविद्यालय, 268 राज्य विश्वविद्यालय, 125 समकक्ष विश्वविद्यालय), 5 संस्थान राज्यों द्वारा स्थापित किये गये है। जबकि 33 संस्थानों की स्थापना केन्द्र सरकार द्वारा की गयी है। वर्तमान में 22064 महाविद्यालय हैं। जिनमें 2266 महिला महाविद्यालय है। वर्ष 2008–09 में 50.25 लाख विद्यार्थियों ने उच्च शिक्षण संस्थानों में प्रवेश लिया था। 1 जनवरी 2007 तक 20131 डॉक्टरल शोध उपाधि अवार्ड की गयी, जोकि कला व विज्ञान के क्षेत्र में थी। वर्तमान में कुल स्थायी शिक्षकों की संख्या 5.21 लाख है जिनमें विश्वविद्यालयों में स्थाई शिक्षकों की संख्या 0.83 लाख तथा महाविद्यालयों में शिक्षकों की संख्या 4.38 लाख है।'' उर्पयुक्त आँकडे उच्च शिक्षा की वास्तविक स्थिती को दर्शाते हैं। भारत में उच्च शिक्षा संस्थानों व नीति क्रियान्वयन की संरचना रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित है।

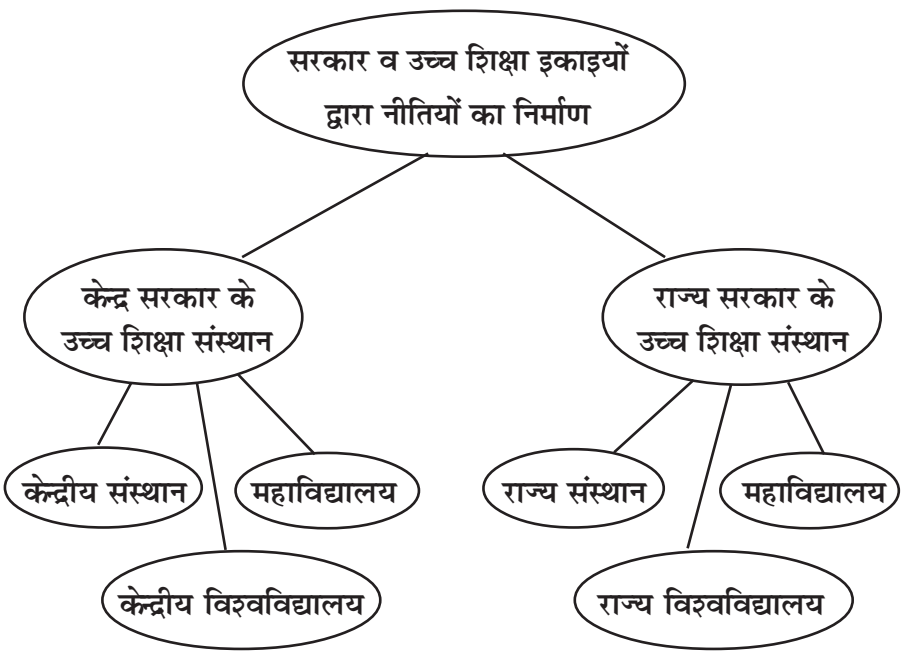

* केन्द्र सरकार द्वारा नीतियों का निर्माण केन्द्र व राज्य सरकार के निदेशालय व संस्थानों द्वारा नीतियों का क्रियान्वयन।
* केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा नीतियों का निर्माण राज्य सरकार के निदेशालय व संस्थानों द्वारा नीतियों का क्रियान्वयन।

वर्तमान में उच्च शिक्षा से सम्बन्धित महत्वपूर्ण पुस्तकों व शोधपत्रों का प्रकाशन हुआ है। इस शोध पत्र के विषय के सन्दर्भ से पहले भी विभिन्न विद्वानों ने विषय की स्थिति के बारे में शोध पत्रों व पुस्तकों में अवगत कराया है जिनमें घनश्याम ठाकुर, चैलेन्जेज एण्ड प्राब्लम आफ रिफार्मिंग हायर एजूकेशन इन इण्डिया (संजय प्रकाशन, 2004), छाया शुक्ला, हायर ऐजुकेशन रिर्फाम्स इन इण्डिया: एक्सपीरिएन्स एण्ड परस्पेक्टिव (सुमित इन्टरप्राइजेज, 1993); हीथर इजिक्स, ग्लोबलाइजेशन एण्ड रिर्फाम्स इन हायर एजूकेशन (ओपेन यूनिवर्सिटी प्रेस मैग्राहिल, 2003); गेट्स एण्ड हायर एजूकेशन (यूनिवर्सिटी न्यूज, 2006); याजली ज्योसफिन, ग्लोबलाइजेशन एण्ड चैलेन्जेज फार एजूकेशन (शिप्रा पब्लिकेशन, नयी दिल्ली, 2003); वेद प्रकाश एण्ड के विस्वाल, परस्पेक्टिव आन डेवलपमेन्ट: रिविसिटिंग ऐजूकेशन कमीशन एण्ड आफ्टर(शिप्रा पब्लिकेशन, नयी दिल्ली, 20078); जे बी जी तिलक, आन एलोकेटिंग 6% आफ जी. डी.पी. टू एजूकेशन (एकोनामिक पालिटिकल वीकली, वा041 नं07, 2006); बी.बी. भट्टाचार्य एण्ड सी पी घुनिया, थ्रेट एण्ड अपौरच्यूनिटी इन दा हायर एजूकेशन कानटेक्सट आफ गेट्स (यूनिवर्सिटी न्यूज, नयी दिल्ली, 43-44, 2005) प्रमुख हैं जिनमें शोध पत्र के विषय की स्थिति के सन्दर्भ में विश्लेषण किया है। किन्तु इनमें से कुछ विद्वानों ने विषय की स्थिति को 2006 के पूर्व के सन्दर्भ में उल्लेख किया है। जबकि अन्य विद्वानों द्वारा शोध पत्र के विषय की स्थिति का गहन विश्लेषण नहीं किया गया है। परन्तु उर्पयुक्त शोध में उच्च शिक्षा में सुधारों के परिपेक्ष्य में नीति क्रियान्वयन के मुददे्पर कोई मुख्य कार्य नहीं हुआ है। उर्पयुक्त शोधपत्र उल्लेखित मुददे् की शोध के क्षेत्र में कमी को पूरा करने का प्रयास है।

उच्च शिक्षा में समसामयिक सुधार

प्रो. यशपाल समिति द्वारा दिये गये सुझावों को उच्च शिक्षा में वर्तमान दौर में अमलीजाना पहनाने के लिये मानव संसाधन विकास मंत्री द्वारा की जा रही पहल स्वागत योग्य है। इस रिपोर्ट में महत्वपूर्ण 19 सिफारिशों में से अधिकांश पर उद्घोषणा हो चुकी है तथा कुछ सुझावों पर नीतियाँ भी बनायी जा चुकी हैं। चाहे शिक्षण व शोध में सुधार की बात हो या कुलपतियों के नियुक्ति के संदर्भ में इन सभी सिफारिशों का उल्लेख समिति की रिपोर्ट में है। प्रो. यशपाल समिति की रिपोर्ट से शिक्षा नीति पुन: चर्चा का विषय बन गई है। समिति ने भारतीय शिक्षा नीति में समसामयिक के चुनौतियों को देखते हुये उच्च स्तर से निम्न

स्तर तक शिक्षा प्रणाली में सुधार के सुझाव दिये हैं। निजी विश्वविद्यालयों को खोलने की अनुमति, उनकी भूमिका पर नियंत्रण के लिये निश्चित प्रावधान, केन्द्र सरकार द्वारा की जा रही घोषणाओं के बाद यह कहा जा सकता है कि केन्द्र सरकार ने इस समिति की सिफारिशों को गभीरता से लिया है तथा वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में सुधार हेतु यशपाल समिति के सुझावों के महत्व को समझा है। वर्तमान में मानव संसाधन विकास मंत्री द्वारा उच्च शिक्षा के क्षेत्र में किये जा रहे सुधार व घोषणाएं अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इनमें मुख्यत: उच्च शिक्षा के क्षेत्र में लाए जा रहे विभिन्न चरणबद्ध सुधारात्मक प्रयोगों पर बल दिया गया है।

सरकार द्वारा शोध के क्षेत्र में लाया गया यू.जी.सी. रेग्यूलेशन एक्ट 2009 (Minimum Standards and Procedure for Award of M.Phil/Ph.D Degree, June 1st 2009) अत्यन्त महत्वपूर्ण है। पर जरूरत इस बात की है कि उसका क्रियान्वयन केन्द्र व राज्यों में दोनों स्तर पर निगरानी के साथ हो। राज्यों के विश्वविद्यालयों में भी उसका समुचित क्रियान्वयन उतना ही आवश्यक है जितना कि केन्द्रीय स्तर पर है।

वर्तमान में उच्च शिक्षा में सहायक प्राध्यापकों की भर्ती हेतु नेट को अनिवार्य बनाये जाने का कदम स्वागत योग्य है। साथ ही सिर्फ यू.जी.सी. रेग्यूलेशन एक्ट 2009 के अन्तर्गत डॉक्टरल उपाधि प्राप्त करने वालों को ही नेट की अनिवार्यता में छूट देने संबंधी नियम भी महत्वपूर्ण है। इससे शोध के क्षेत्र में विद्यार्थियों की रूचि बढ़ेगी। यू.जी.सी. ने महत्वपूर्ण फैसले में दूरस्थ शिक्षण संस्थानों के तहत संचालित ऑफ कैम्पस कोर्स व अन्य ऑफ कैम्पस रेग्यूलर प्रोफेशनल व रिसर्च कोर्सों को बंद करने का निर्णय भी यू.जी.सी. का महत्वपूर्ण निर्णय है।

कई दशकों से शिक्षा व्यवस्था को ऐसे ठोस व व्यवहारिक सुधारों की अपेक्षा थी जो शिक्षा व्यवस्था को ऐसा रूप दें कि वह वर्तमान चुनौतियों वह अपने आप को कारगार साबित कर सके। ''यशपाल समिति के उच्च शिक्षा से सबंधित प्रमुख सुझाव'' व उच्च शिक्षा मंत्री द्वारा हाल में लिये गये निर्णय निम्नलिखित है:

- UGC, AICTE, BCI, MCI जैसे शिक्षा विनियामकों को समाप्त कर एक सात सदस्यीय उच्चतर शिक्षा एवं अनुसंधान आयोग का गठन किया जायेगा और यह आयोग एक संविधानिक संस्था होगी। इसके अध्यक्ष का चुनाव प्रधानमंत्री, विपक्ष

का नेता व भारत के मुख्य न्यायाधीश करेंगे। इस आयोग का मुख्य कार्य विश्वविद्यालयों के संचालन पर निगरानी करना होगा तथा आयोग विश्वविद्यलायों को उच्चतर शिक्षा व अनुसंधान के विकास में सहायता प्रदान करने जैसी भूमिका निभायेगा।

- देश के विश्वविद्यालयों को अधिक स्वायत्ता प्रदान की जाय उन्हें शिक्षा के सारे उत्तरदायित्व सौंपे जायें। डीम्ड विश्वविद्यालयों का दर्जा समाप्त किया जाना चाहिये या उन्हें पूर्ण विश्वविद्यालयों का दर्जा प्रदान किया जाना चाहिये।
- 1500 अच्छे महाविद्यालयों को विश्वविद्यालयों का दर्जा प्रदान किया जाना चाहिये। विश्वविद्यालयों में प्रवेश हेतु अखिल भारतीय स्तर का GRE जैसा टेस्ट आयोजित किया जाना चाहिये।
- शिक्षकों को कोर्स का ढाँचा तैयार करने की छूट प्रदान करने की सिफारिश की गई है। समिति ने निजी शिक्षण संस्थानों में अधिक शुल्क व घटिया शिक्षण के स्तर के प्रति चिंता जतायी तथा ऐसे संस्थानों में कुलपति की नियुक्ति प्रबन्धन के परिवार से न करने की सलाह दी।
- 15 मार्च 2010 को कैबिनेट ने विदेशी विश्वविद्यालय (प्रवेश और संचालन विनिमयन) विधेयक 2010 को केबिनेट ने मंजूरी दी। अब विदेशी विश्वविद्यालय भारत में कैम्पस खोल पायेंगे बल्कि डिग्रियाँ भी दे सकेंगे। इसके साथ भारतीय विदेशी विश्वविद्यालयों से अपने देश में ही अध्ययन कर डिग्रियाँ ले सकेंगे।
- 14 मार्च 2009 को कुलपतियों की उच्चस्तरीय बैठक में उच्च शिक्षा संस्थानों में भी नवरत्न होंगे। इस तरह की घोषणा कुलपतियों की बैठक में 14 मार्च 2009 को की गई। इसके लिये नेशनल कमीशन फॉर हायर एजूकेशन एण्ड रिसर्च अधिनियम में सैप और सेन्टर ऑफ एक्सीलेंट जैसे विशिष्ट दर्जे के संस्थानों के स्थान पर नवरत्न चुनने का निर्णय हुआ। इसके चुनाव के मानक तय करने के लिये एक समिति का गठन किया गया है। साथ ही यह तय किया गया कि नवरत्न दर्जा पाने वाले संस्थानों को सामान्य से कॉफी अधिक अनुदान व सुविधायें प्रदान की जाएंगी।
- 14 मार्च 2010 का केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में कुलपतियों की नियुक्तियों के लिये केन्द्र सरकार कुलपति का पात्रता को पूरा करने वाले शिक्षकों का डाटाबेस तैयार करेगी। कुलपतियों की नियुक्ति व हटाने के लिये एक कॉलेजियम बनाया जायेगा।

साथ ही विश्वविद्यालय को चलाने में कुलपतियों को स्वतंत्रता दी जायेगी। कुलपति की नियुक्ति व हटाने के लिये राजनीतिक हस्ताक्षेप को समाप्त किया जायेगा, कुलपतियों के लिये आचार संहिता भी बनायी जायेगी। साथ ही समस्त केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में प्रवेश के लिये राष्ट्रीय स्तर की संयुक्त प्रवेश परीक्षा 2013 से शुरू करने पर सहमति बनी।

- केन्द्रीय विश्वविद्यालय अब च्वाइस बेस्ड क्रेडिट सिस्टम लागू करेंगे, जिससे किसी एक विश्वविद्यालय के छात्र किसी अन्य विश्वविद्यालय से भी कोर्स पूरा कर सकेंगे। देश में नवरत्न कम्पनियों की तरह चिन्हित कर नवरत्न विश्वविद्यालय की व्यवस्था भी लागू की जायेगी।
- हाल ही में सरकार द्वारा उच्च शिक्षा के संबंध में मानद (डीम्ड) विश्वविद्यालय की मान्यता रद्द करने का निर्णय भी उच्च शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिये प्रतिबद्धता दर्शाता है साथ ही विद्यार्थियों के भविष्य को देखते हुये उन संस्थानों को अन्य विश्वविद्यालयों से संबद्ध करना भी स्वागत योग्य है। ये संस्थान देश के 13 राज्यों में फैले हैं।
- माननीय मानव संसाधन विकास मंत्री जी ने 21 दिसम्बर 2009 को कहा कि सरकार अन्य प्रशासनिक सेवाओं की तरह शिक्षा के क्षेत्र में विशेषज्ञ नौकरशाह तैयार करने के लिये भारतीय शिक्षा सेवा शुरू करने पर विचार कर रही है। इससे शिक्षा क्षेत्र में प्रशासन में सुधार लाने में मदद मिलेगी।
- सरकार द्वारा अनुचित आचरण पर रोक सम्बन्धी बिल में तकनीकी मेडिकल संस्थानों व विश्वविद्यालय के अनुचित आचरण पर सख्त कानून से रोक लगाने का प्रस्ताव है। कैपिटेशन शुल्क वसूलने, डोनेशन मांगने, प्रोफेशनल कोर्स की प्रवेश प्रक्रिया में पारदर्शिता की कमी, अनिवार्य योग्यता से वंचित फैकेल्टी की नियुक्ति, भ्रामक विज्ञापन जारी करना, छात्रों के प्रमाण पत्र बिना कारण के जमा कराने सम्बन्धी गतिविधि आदि को अनुचित आचरण के दायरे में रखा गया है।
- सरकार का कैपिटेशन फीस के गोरख धन्धे पर नियन्त्रण सम्बन्धी कानून बनाने का फैसला उत्साहजनक है, जिसके तहत कैपिटेशन शुल्क वसूलने व पठन-पाठन की गुणवत्ता का ध्यान नहीं रखने वाले दोषी संस्थानों से 50 लाख तक का जुर्माना व इसके संचालकों को 3 साल तक का कारावास हो सकता है।

- विवादों के निपटारे के लिये शैक्षणिक न्यायाधिकरण की स्थापना व उच्च शिक्षण संस्थानों की अनिवार्य मान्यता के लिये नियामक प्राधिकरण के गठन सम्बन्धी विधेयक भी प्रस्तावित हैं।

राज्य सरकारों के स्वागत योग्यत कदम

- उ.प्र. सरकार द्वारा निजी विश्वविद्यालय अधिनियम में संशोधन व कुलपति व रजिस्ट्रार की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा किये जाने का प्रावधान (2010 सत्र में लागू)
- मध्य प्रदेश सरकार द्वारा सभी महाविद्यालयों में सेमेस्टर प्रणाली द्वारा शिक्षण कराने का निर्णय (सत्र 2009–10 में लागू)

उच्च शिक्षा के समसामयिक मुद्दे

वर्तमान भौतिकतावाद व उपभोक्तावाद के इस दौर में बाजार मनुष्य के ऊपर हावी हो रहा है। इन दोनों के बीच सामंजस्य बनाये रखने व संतुलन लाने का प्रयास ज्ञान के माध्यम से करना चाहिये। उच्च शिक्षा के समसामयिक मुददों के निराकरण के बिना हम एक आदर्श भारतीय समाज की स्थापना नहीं कर सकते। वास्तव में समाज की सही दिशा में प्रगति के स्रोत तो अध्यापक व विद्यार्थी के मध्य मानवीय संबंधों के आधार पर बनते हैं, जब अध्यापक युवाओं के सामने आदर्श आचरण पेश करता है, तभी युवा वर्ग उसका अनुसरण करते हैं। परन्तु वर्तमान में अध्यापक व विद्यार्थी के बीच यह सामंजस्य अच्छी स्थिति में नहीं हैं। वर्तमान में उच्च शिक्षा के महत्वपूर्ण समसामयिक मुद्दे निम्नलिखित हैं:

- ''मानव श्रम रिपोर्ट 2007 में पाया गया कि रोजगार के अवसर तो है पर उनके लिये प्रतिभावान व्यक्तियों की कमी है, अर्थात् एक और कुछ लोग भारतीय प्रतिभा की तरीफ कर रहे हैं, लेकिन वास्तव में दूसरी तरफ 80 प्रतिशत व्यक्ति प्रतिभाविहीन हैं।'' कुछ विश्वविद्यालयों को छोड़कर अन्य विश्वविद्यालय केवल डिग्री बाँटने वाले केन्द्र बनकर रह गये हैं। विशेषत: सामाजिक विज्ञानों में कोई व्यवहारिक प्रशिक्षण प्रदान नहीं कर पा रहे हैं। रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है कि 53% युवाओं में वांक्षित प्रतिभाओं की कमी पायी जाती है। हालांकि 8% युवा ही बेकार हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि शिक्षा प्रणाली में तत्काल सुधार की आवश्यकता है।

- रिपोर्ट में कहा है कि वर्तमान में उपलब्ध रोजगारों में 90% व्यवसायिक कौशल की आवश्यकता है जबकि 90% कॉलेज व स्कूलों में दी जाने वाली शिक्षा केवल किताबी है। अगले 5 वर्षों में विश्व की 25% श्रम शक्ति भारत की होगी। अगर 2025 तक भारत के 30 करोड़ युवा श्रम शक्ति के उपलब्ध होंगे और व उसके लिये काबिल हुये तो भारत आर्थिक महाशक्ति बन सकेगा।

- वर्तमान परिपेक्ष्य में संख्या की दृष्टि से विश्वविद्यालयों व कॉलेजों की संख्या पर्याप्त है किन्तु कुछ अपवादों को छोड़कर गुणवत्ता की दृष्टि से शिक्षा का स्तर काफी नीचा है जिनमें राज्य स्तरीय विश्वविद्यालयों कॉलेजों की स्थिति काफी कमजोर है। कॉलेजों से विश्वविद्यालय तक परंपरागत पाठ्यक्रम चलाये जा रहे हैं। इन पाठ्यक्रमों को पूरा करने के पश्चात् रोजगार की संभावनाएं कम होती हैं। इन पाठ्यक्रमों के माध्यम से रोजगार प्राप्त करने के लिये विद्यार्थियों को पुनः प्रशिक्षित होना होता है। अतः वास्तविकता यह है कि डिग्रियाँ केवल छटाई करने की प्रक्रिया के रूप में इस्तेमाल होती हैं या फिर सिर्फ आवेदन के लिये अनिवार्य योग्यता पूरी करने के लिये (पासपोर्ट के तरह), जिसका मुख्य कारण पाठ्यक्रम में दिये जाने वाले व्यवहारिक ज्ञान की कमी है। वर्तमान में समाज के लिये जिस प्रकार के योग्य व्यक्तियों की आवश्यकता होती है, वर्तमान शिक्षा प्रणाली द्वारा तैयार नहीं किये जा रहे हैं।

- शिक्षा के मामले में केन्द्र व राज्यों के बीच आपेक्षित तालमेल नहीं है। तथा शिक्षा संस्थानों की नियामक संस्थाओं में भ्रष्टाचार भी अपनी जड़ें जमा चुका है। जिसका परिणाम हमें तथाकथित डीम्ड विश्व विद्यालय के रूप में देखने को मिलता है। एक अनुमान के अनुसार अकेले उ.प्र. में 500 से अधिक निजी संस्थायें पिछले 5 वर्षों में खोली गयी हैं, अन्य राज्यों में भी यही स्थिति है। उच्च शिक्षा में निजी संस्थाओं के गैर जिम्मेदाराना तरीके के लिये सरकार की सभी नियामक संस्थायें भी जिम्मेदार हैं, जिन्हें इन पर नियंत्रण रखना चाहिये था।

- वर्तमान में कुछ विश्वविद्यालयों द्वारा स्वयतता का दुरूपयोग देखने को मिलता है, गुणवत्ता के स्थान पर औपचारिकता देखने को मिलती है। छात्रों के पास विकल्पों की कमी होती है। इसके लिये केवल विश्वविद्यालय/कालेज का माहौल ही दोषी

नहीं है, अपितु पाठ्यक्रम में व्यवहारिकता की कमी है। इस व्यवस्था के लिये शासन, प्रशासन, शिक्षा विभाग के अधिकारी, विश्वविद्यालय/कालेजों के प्रध्यापक व प्राचार्य एक दूसर पर दोषारोपण करते रहते हैं, लेकिन इस तरह समस्या का हल नहीं निकलेगा।

- उच्च शिक्षा की गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से 1953 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना की गई, लेकिन आयोग को गुणवत्ता बनाये रखने के लिये पर्याप्त अधिकार नहीं दिये गये। राज्यों ने इन अधिकारों की कमी का फायदा उठाया और यू.जी.सी. द्वारा दिये गये निर्देशों का सही रूप से क्रियान्वयन नहीं किया। उदाहरण के रूप में 2003 में छत्तीसगढ़ ने राज्य में डीम्ड विश्वविद्यालय खोलने के नियमों का काफी लचीला कर दिया। वर्तमान में ऐसी स्थिति में स्थापित निजी संस्थाएं लाभ कमाने की संस्थाएं बन गई है, जो व्यवसायिक शिक्षा के नाम पर छात्रों से धन उगाही कर रही है।

- शिक्षा की गुणवत्ता के संबंध में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वर्तमान में कल्याणकारी राज्य में नागरिक समाज, शिक्षा क्षेत्र में अपनी रूचि न्यूनतम कर लेता है। जनभागीदारी समितियों के स्थापना के बाद भी गुणवत्ता पर कोई ध्यान नहीं देता। वर्तमान में अधिकांश सदस्य केवल अधोसंरचना व धनराशि का उपयोग संबंधी विवरण पर ध्यान दे पाते हैं। उच्च शिक्षा में व्याप्त समस्याओं को दूर करने के लिये नागरिक समाज को उत्तरदायित्वपूर्ण रवैयै का अनुसरण करते हुये आगे आना होगा। न्यायालय का फीस तय करने संबंधी हस्तक्षेप भी शिक्षा संस्थाओं की स्वायत्ता को बढ़ावा देता है। वर्तमान में शिक्षा के निजीकरण ने एक ओर सरकार को उच्च शिक्षा के दायित्व से कुछ हद तक मुक्त कर दिया है, वहीं दूसरी ओर निजी संस्थाएं को शिक्षा को व्यवसाय बनाने की छूट भी दे रही है। वर्तमान में अच्छी निजी संस्थाओं व स्तरहीन निजी संस्थायें विज्ञापनों के माध्यम से अपने आप को अच्छे संस्था के रूप में छात्रों के समक्ष पेश करती हैं लेकिन वास्तविकता में स्तरहीन निजी संस्थाओं के बीच अन्तर बहुत कम है। स्तरहीन निजी संस्थायें केवल डिग्री बाँटने वाली व लाभ कमाने वाली संस्थायें हैं।

- विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा निजी फर्जी विश्वविद्यालय की सूची को वेबसाइट पर डालने से फर्जी विश्वविद्यालय की समस्या समाप्त नहीं हो जाएंगी,

अपितु उसके लिये अधिक कड़े नियम व प्रावधान सरकार को तय करने होंगे, जिससे इस फर्जीवाड़े को रोका जा सके व इस तरह के विश्वविद्यालयों को बंद कराया जा सके।

- विश्वविद्यालयों की शैक्षणिक स्तर की जानकारी यू.जी.सी. नैक रिपोर्ट में कहा गया है कि 140 विश्वविद्यालयों व 3500 कॉलेजों में सिर्फ 31 प्रतिशत विश्वविद्यालय और 9 प्रतिशत कॉलेज ही 'ए' ग्रेड के हैं, जबकि योजना आयोग की एक रिपोर्ट के अनुसार देश के आधे से अधिक विश्वविद्यालय व 90 प्रतिशत से अधिक कॉलेजों से उत्तीर्ण छात्र किसी नौकरी के लायक नहीं हैं। उन्हें उनके विश्वविद्यालयों व कॉलेजों में जो शिक्षा मिली है, वह ज्ञान कौशल नहीं सिर्फ डिग्री मिली है।''
- नीतियों के क्रियान्वयन की स्थिति वर्तमान में लचर हैं क्योंकि घोषित 16 केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में से कुछ को अभी तक जमीन नहीं मिली है, जबकि काफी समय पहले विश्वविद्यालय स्थापित किये जा चुके हैं। इसी तरह अन्य निर्णयों के क्रियान्वयन में देरी हो रही है। वर्तमान स्थिति यह है कि नीतियाँ तो बन जाती हैं पर समुचित क्रियान्वयन नहीं हो पाता।
- सरकार द्वारा विश्वविद्यालयों की शिक्षा में गुणवत्ता बढ़ाने हेतु निर्णय लिये जाने चाहिये। साथ ही सरकार का ध्यान उच्च शिक्षा के क्षेत्र को खोलने व विदेशी विश्वविद्यालयों को देश में आमंत्रित करने में भी है। भारत में उच्च शिक्षा का बाजार 20 अरब डॉलर यानी दस खरब रूपये का है। ''हाल ही में अमेरिकी इंस्टीट्यूट ऑफ इन्टरनेशनल एजूकेशन की वार्षिक रिपोर्ट ओपन डोर 2008 में उल्लेख है कि सत्र 2007–08 में अमेरिका में उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने के लिये आने वाले छात्रों में भारतीयों की संख्या 94563 है।''
- वर्तमान में शिक्षण संस्थानों में शिक्षकों की काफी कमी है। उदाहरण के तौर पर म.प्र. में 1993 के पश्चात् सामान्य वर्ग के शिक्षकों की भर्ती नहीं हुई है। जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर में भी लगभग 54 शिक्षक स्थायी है जबकि विभागों की संख्या लगभग 40 है। वहीं उ.प्र. में वर्तमान राज्य विश्वविद्यालयों में लगभग 500 पद, कॉलेजों में 4500 पर रिक्त हैं। वहीं नवीन केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में भी यही

स्थिति है। वर्तमान में केवल इलाहाबाद विश्वविद्यालय में 450 से अधिक पर रिक्त हैं, जब इतने अधिक पद रिक्त हों तो विद्यार्थी-शिक्षक अनुपात की बात करना निरर्थक है। अन्य केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की यही स्थिति है। इस स्थिति में शिक्षण संस्थानों को पर्याप्त स्वायत्तता प्रदान करनी चाहिये तथा शिक्षण संस्थानों को पर्याप्त अनुदान उपलब्ध कराया जाना चाहिये।

- अमेरिका के इंस्टीट्यूट आफ इंटरनेशनल एजूकेशन की वार्षिक रिपोर्ट 'ओपन डोर 2008' के अनुसार ''अकादमिक सत्र 2007-08 में अमेरिका में उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने के लिए आने वाले छात्रों में रिकार्ड संख्या में 94563 भारतीय छात्र हैं। 6.23 लाख विदेशी छात्र आए, जिनमें सबसे अधिक 15 प्रतिशत भारतीय छात्र हैं। विदेशी छात्र के आने से यहां की यूनिवर्सिटी और सरकार, दोनों खुश हैं। इस रिपोर्ट के अनुसार इस पलायन की सबसे बड़ी वजह है पर्याप्त संख्या में उच्च गुणवत्ता वाले संस्थानों का अभाव होना।'' रिर्पाट के अनुसार ''आईआईटी और आईआईएम में प्रवेश न पाने वाले 90 प्रतिशत छात्रों में कम से कम 20-25 प्रतिशत छात्र बाहर चले जाते हैं। इस अध्ययन के अनुसार ये छात्र विदेशों में लगभग 48 हजार करोड़ रुपये प्रति वर्ष खर्च करते हैं। इस धन से विश्व स्तर के कम से कम 20 इंजीनियरिंग और मैनेजमेंट इंस्टीट्यूट खोले जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त भारत में रोजगार में लगे लगभग 46 करोड़ लोगों में से केवल पांच प्रतिशत के पास ही व्यावसायिक शिक्षा या प्रशिक्षण है, जबकि दक्षिण कोरिया में 95 प्रतिशत, जापान में 80 प्रतिशत और जर्मनी में 75 प्रतिशत तक लोग व्यावसायिक शिक्षा या प्रशिक्षण से लैस हैं। व्यावसायिक शिक्षा या प्रशिक्षण का अभाव हमारी उत्पादकता को प्रभावित करता है''। भारत सरकार ने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विदेशी विश्वविद्यालयों को अनुमति देकर भारत से बाहर जाने वाली धनराशि का कुछ हिस्सा बचाने का प्रयास किया है
- वर्तमान में चीन में व्यावसायिक शिक्षा के लिए पांच लाख से ज्यादा संस्थान हैं, अन्य देशों की स्थिति काफी अच्छी है, जबकि भारत में ऐसे संस्थान मात्र तीन हजार ही हैं। भारतीय छात्रों द्वारा विदेशों में खर्च की जाने वाली इतनी बड़ी राशि हर वर्ष अगर देश में रह जाए तो हमारी उच्च शिक्षा की स्थिति सुदृढ़ हो सकती है। इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि ''11वीं पंचवर्षीय योजना में उच्च शिक्षा के लिए सरकार का कुल अनुमानित खर्च 84,943 करोड़ रुपये है''। भारत में भी विश्व

स्तरीय संस्थानों की आवश्यकता है, जिससे विदेश गये छात्रों द्वारा खर्च की गई राशि का उपयोग अपने लिए कर सकें और बड़ी संख्या में बाहर से भी विदेशी छात्रों को आकर्षित करने में सफल हो सकें। अमेरिका के अलावा आस्ट्रेलिया, इंग्लैंड, कनाडा आदि जगहों में अध्ययन के लिये 4-5 लाख विदेशी छात्र आते हैं। वहीं भारत में विदेशी छात्रों की संख्या सिर्फ 27 हजार है। सिंगापुर जैसे छोटे से देश में भी डेढ़ लाख से अधिक छात्र प्रवेश लेते हैं। ''उच्च शिक्षा संस्थानों की दुनिया में रेटिंग करने वाली प्रमुख संस्था 'क्वाकक्वारेली साइमंड्स' हर साल शीर्ष दो सौ शिक्षण संस्थानों की सूची निकालती है। इसमें भारत के केवल दो ही संस्थान 2008 में आ पाए जिनका स्थान 150 रैंक के बाद है, जबकि टाप 50 में एशिया के ही चीन, जापान, सिंगापुर, दक्षिण कोरिया आदि के कई संस्थान हैं।'' ''एसोचैम के अनुसार अगर हम उच्च शिक्षा का समुचित विकास कर सकें तो भारत न केवल लगभग 2.4 लाख करोड़ रुपये की आय अर्जित कर सकेगा, बल्कि इसके द्वारा तकरीबन 10 लाख अतिरिक्त रोजगार भी पैदा होंगे।''

- विदेशी विश्व विद्यालयों को भारत में कैम्पस खोलने में छूट सम्बन्धी सरकार के प्रयासों से ''गरीब छात्रों व अन्य छात्रों के बीच एक खाई बन जायेगी जिसमें कुछ ही छात्र उच्च शिक्षण संस्थानों से डिग्रियां ले सकेंगे।''

वर्तमाान में सरकार द्वारा केन्द्रीय स्तर पर उच्च शिक्षा व्यवस्था को सुदृढ करने लिये किये गये प्रयास सराहनीय हैं, परन्तु सिर्फ 40 केन्द्रीय विश्वविघालयों व इतने ही उच्च शिक्षण संस्थानों का स्तर अच्छा करने से उच्च शिक्षा में सुधार नहीं किया जा सकता। जरूरत इस बात की है कि केन्द्र स्तर पर लिये गये निर्णयों का राज्य स्तर पर क्रियान्वयन अनिर्वाय बना दिया जाये तथा राज्यस्तरीय उच्च शिक्षण संस्थानों को नीति के समुचित क्रियान्वयन हेतु प्र्याप्त संसाधन उपलब्ध कराये जायें।

वर्तमान में भारत में ऐसे विश्वविद्यालयों/शैक्षणिक संस्थानों की संख्या कम है जहां अन्तर्राष्ट्रीय मानकों की प्रतिस्पर्धा के अनुसार छात्र उच्च शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। अत: उच्च शिक्षा में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के संस्थानों के अनुकूल तर्क संगत सुधार करने की आवश्यकता है। उच्च शिक्षा के अन्तर्राष्ट्रीय ढांचे के अभाव के कारण भारत से आज लाखों युवा शिक्षा लेने विदेश जा रहे है जिसके कारण भारत में अरबों रूपयों की विदेशी मुद्रा बाहर जा रही है। यह स्थिति भारतीय अर्थव्यवस्था के लिये ठीक नहीं।

नीति व क्रियान्वयन सम्बन्धी सुझाव

वर्तमान में यदि भारत को विकसित देशों के समक्ष मजबूती से अपनी स्थिति सुदृढ़ करनी है तो उसे उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सशक्त बनना होगा। इसके लिये विज्ञान तकनीकी के साथ-साथ बुनियादी ज्ञान, समाज विज्ञान और मानविकी विषयों में गंभीरता से शोध व अध्ययन करना होगा तथा प्रयोगात्मक दृष्टिकोण को अपनाना है। विश्वविद्यालयों को सशक्त बनाने के लिये सम्पूर्ण भारत में उस पर एकल नियंत्रण व मूल्यांकन प्रणाली अपनाने के साथ-साथ स्वायत्तता प्रदान करनी होगी तथा निश्चित समय में पर्याप्त सुधारों को लागू करना होगा। सरकार को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निजी व सरकारी क्षेत्र के मध्य एक समन्वयात्मक संरचना विकसित करनी होगी, जिसमें निजी क्षेत्र के संस्थानों पर भी पर्याप्त सरकारी नियंत्रण रहेगा जैसे निजी विश्वविद्यालयों के कुलपतियों व रजिस्ट्रार की नियुक्ति सरकार द्वारा की जायेगी, निजी महाविद्यालयों में भी प्राचार्य व प्रशासनिक अधिकारियों की नियुक्ति राज्य चयन बोर्ड द्वारा की जाय। उ.प्र. सरकार द्वारा निजी विश्वविद्यालय के कुलपति के रजिस्ट्रार की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा कराये जाने संबंधी उठाया गया तथा समुचित कदम स्वागत योग्य है। निजी विश्वविद्यालय का लेखांकन व लेखा परीक्षण सरकारी मशीनरी द्वारा किया जायेगा। एकल नियंत्रण व मूल्यांकन प्रणाली द्वारा भी निजी संस्थानों की जवाबदेयता तय की जायेगी, क्योंकि वर्तमान में निजी संस्थान केवल उन्हीं विषयों पर अपना ध्यान केन्द्रित करते है जिनकी बाजार में माँग है इसलिए उच्च शिक्षण संस्थानों की जवाबदेयता तय किये जाने के लिये भी प्रयास किये जाने चाहिये।

उपयुक्त सुधारों के लिये निर्मित की गई नीतियों का सही ढंग से क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है। अत: सरकार द्वारा निर्धारित नीति का क्रियान्वयन सही ढंग से करना होगा।

- उच्च शिक्षा संस्थानों की प्रवेश परीक्षाएं सिर्फ अपने विषय से संबंधित होती है। जबकि स्नातकोत्तर स्तर पर पठन-पाठन परिचयात्मक न होकर शोधपरक, विश्लेषणात्मक व अनुसंधानपरक होता है अर्थात् विद्यार्थियों में- तर्कशक्ति, आलोचनात्मक चिंतन, विश्लेषण क्षमता व लेखन कौशल का होना भी आवश्यक है। लेकिन सिर्फ अपने विषय से संबंधित परीक्षाओं में इस योग्यता का निर्धारण संभव नहीं अर्थात् इस स्तर पर ऐसी व्यवस्था की जरूरत है जो इस योग्यताओं का परीक्षण कर सके। उदाहरण स्वरूप GRE वह परीक्षा है जो अमेरिका, कनाडा और

कई अन्य देशो में स्नातकोत्तर स्तर पर प्रवेश लेने के लिये आवश्यक है जो अध्ययन के किसी विशेष विशय क्षेत्र से संबंधित नहीं है। इसमें मौखिक तर्क परीक्षा, मात्रात्मक या संख्यात्मक तार्किकता, आलोचनात्मक व अमूर्त चिंतन विश्लेषण क्षमता व लेखन कौशल का परीक्षण होता है।

- वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उच्च शिक्षा में निजी क्षेत्र के प्रवेश पर सभ्य समाज को कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन शिक्षा को एक व्यवसाय न समझा जाय, व उसकी गुणवत्ता को बनाये रखा जाय, जिसके लिये सरकार द्वारा तय की गई नीतियों का समुचित क्रियान्वयन के साथ इन संस्थाओं पर नियंत्रण के लिये प्रभावी व्यवस्था की आवश्यकता है, जो कि केन्द्र व राज्य स्तर पर समान रूप से लागू हो।
- उच्च शिक्षण संस्थाओं को उत्कृष्ट स्तर पर ले जाने के लिये उन्हें स्वायत्तता प्रदान करने के साथ-साथ उन पर प्रभावी नियंत्रण की आवश्यकता हैं। उच्च शिक्षा संस्थाओं में त्वरित गति से सुधार करने के लिये यह आवश्यक है कि उच्च शिक्षा के लिये बनायी जा रही नीतियों का अविलंब क्रियान्वयन हो, जिसके लिये प्रभावी क्रियान्वयन की व्यवस्था हो बिना नीतियों के समुचित क्रियान्वयन के हम लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकते हैं, अधिकतम कुशलता को प्राप्त नहीं कर सकते। अत: समुचित क्रियान्वयन ही ऐसा माध्यम है जिससे इस क्षेत्र में व्यापक सुधार किये जा सकते हैं।
- ''शिक्षण व शोध में गुणवत्ता को बढ़ाने के लिये अन्तर अनुशासनात्मक व बहु-अनुशासनात्मक पाठ्यक्रमों को शुरू किया जाना चाहिये'' जिससे कि छात्र संस्थानों से निकल कर योग्यतानुसार रोजगार प्राप्त कर सकें।
- नीति के क्रियान्वयन के साथ-साथ उच्च शिक्षा में सुधार हेतु एक समुचित मूल्यांकन व्यवस्था का होना आवश्यक है जो कि केन्द्र व राज्य स्तरों पर केन्द्रीय नियंत्रण व मूल्यांकन बोर्ड व राज्य नियंत्रण व मूल्यांकन बोर्ड के माध्यम से किया जाना चाहिये। इसकी संरचना रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित है। इस नियंत्रण तथा मूल्यांकन बोर्डों के माध्यम से नीति क्रियान्वयन की स्थिति का भी पता लगाया जा सकता है। अत: उच्च शिक्षा संस्थानों के गुणवत्ता स्तर में समुचित विकास हेतु इस तरह बोर्डों का गठन नितांत आवश्यक है जिससे उच्च शिक्षा नीतियों का समुचित क्रियान्वयन के साथ-साथ प्रभावी नियंत्रण किया जा सके।

केन्द्रीय मूल्यांकन व नियन्त्रण बोर्ड (CECB)

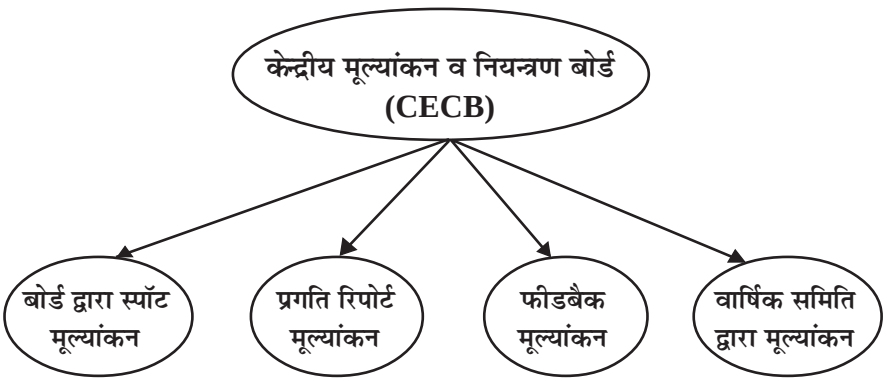

- केन्द्रीय मूल्यांकन व नियन्त्रण बोर्ड द्वारा मौके पर संस्थान का मूल्यांकन किया जायेगा व मूल्यांकन के आधार पर एक रिपोर्ट तैयार की जायेगी।
- संस्थानों द्वारा एकेडिमिक सत्र के प्रारम्भ से पहले वार्षिक प्रगति रिपोर्ट केन्द्रीय मूल्यांकन नियन्त्रण बोर्ड को भेज दी जानी चाहिये।
- बोर्ड/समिति द्वारा संस्थान से सत्र पूरा करके बाहर निकले विद्यार्थियों का फीडबैक मूल्यांकन किया जायेगा।
- संस्थानों की ग्रेडिंग तय करने के लिये वार्षिक मूल्यांकन समिति द्वारा रिपोर्ट तैयार की जायेगी।

राज्य मूल्यांकन व नियन्त्रण बोर्ड (SECB)

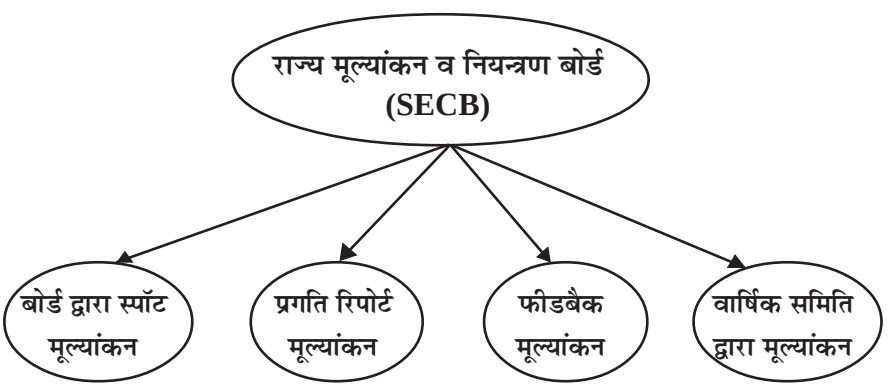

* राज्य मूल्यांकन व नियन्त्रण बोर्ड द्वारा मौके पर संस्थान का मूल्यांकन किया जायेगा व मूल्यांकन के आधार पर एक रिपोर्ट तैयार की जायेगी।
* संस्थानों द्वारा एकेडिमिक सत्र के प्रारम्भ से पहले वार्शिक प्रगति रिपोर्ट केन्द्रीय मूल्यांकन नियन्त्रण बोर्ड को भेज दी जानी चाहिये।
* बोर्ड/समिति द्वारा संस्थान से सत्र पूरा करके बाहर निकले विद्यार्थियों का फीडबैक मूल्यांकन किया जायेगा।
* संस्थानों की ग्रेडिंग तय करने के लिये वार्षिक मूल्यांकन समिति द्वारा रिपोर्ट तैयार की जायेगी।

उच्च शिक्षा में विश्वविद्यालयों व कॉलेजों में सहायक प्राध्यापकों के चयन हेतु केन्द्रीय स्तर पर उच्च केन्द्रीय शिक्षा चयन बोर्ड तथा राज्य स्तर पर राज्य उच्च शिक्षा चयन बोर्ड का गठन किया जाना चाहिये जिससे प्राध्यापकों के चयन से पारदर्शिता लायी जा सके तथा चयन निश्चित समय में शीघ्रता से हो।

- राज्य व केन्द्र में उच्च शिक्षा से संबंधित एक से ही नियम होना चाहिये। सारे केन्द्रीय व राज्य विश्वविद्यालय व अन्य शिक्षण संस्थानों में एक से नियमों को लागू किया जाना चाहिये। इसके लिये केन्द्र सरकार द्वारा राज्य विश्वविद्यालयों व कॉलेजों को भी पर्याप्त अनुदान उपलब्ध कराया जाना चाहिये।
- विश्वविद्यालय/महाविद्यालय /संस्थानों में चलाये जा रहे परम्परागत पाठ्यक्रमों में वर्तमान समसामायिक माँग के अनुरूप सुधार किया जाना चाहिये, पाठ्यक्रमों में सैद्धांतिक ज्ञान के साथ व्यवहारिक ज्ञान पर बल दिया जाना चाहिये। वर्तमान बाजार व्यवस्था की माँग के अनुरूप रोजगारपरक नये पाठ्यक्रमों को तैयार किया जाना चाहिये। उदाहरण स्वरूप बैकिंग, वीमा, रिटेल विपणन प्रबंधन, लोक नीजी व सरकार विषयक विशेषज्ञता वाले पाठ्यक्रम। विद्यार्थियों को समसामयिक परिस्थितियों के अनुरूप व्यवहारिक विशेषज्ञ बनाने का प्रयास करना चाहिये न कि जैक ऑफ ऑल।
- कल्याणकारी राज्य में शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और न्याय वहाँ के नागरिकों को मुफ्त मिलना चाहिये या कम से कम शुल्क पर। यह सही धारणा है सरकार को इस दिशा में भी पर्याप्त प्रयास करने होंगे।
- 1958 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पहली शैक्षणिक संस्था थी जिसे मान्य

विश्वविद्यालय का दर्जा दिया गया, वर्तमान में लगभग 150 मान्य विश्वविद्यालय, जिसमें से केन्द्रीय समिति ने 40 मान्य विश्वविद्यालयों की मान्यता समाप्त करने की बात कही है। सरकार को एच.ई.सी.आर. जैसी नियामक संस्थाओं को पर्याप्त अधिकार प्रदान करना चाहिये जिससे निजी विश्वविद्यालयों पर नियंत्रण व फर्जी विश्वविद्यालयों के खिलाफ सख्त कदम उठाये जा सकें, केवल विश्वविद्यालयों की सूची वेबसाइट पर डालने से काम नहीं चलेगा।

- उच्चतम न्यायालय के एक फैसले ने शिक्षा को सरकारी नियंत्रण मुक्त कर बाजार की शक्तियों के समक्ष खड़ा कर दिया। न्यायालय ने उन्नीकृष्णन मामले में कहा कि निजी शिक्षण संस्थान आवश्यक हैं क्योंकि सरकार ऐसे संस्थान नहीं खोल रही है। ऐसे निजी शिक्षण संस्थानों को अपनी फीस तय करने का अधिकार होगा जो सरकार से पैसा नहीं ले रहे हैं। अन्य फैसलों में सरकार निजी संस्थाओं में भी आरक्षण कर सकती है। लेकिन वर्तमान में निजी क्षेत्र के नाम पर जो संस्थायें सामने आ रही हैं, उनमें अधिकांश का मकसद लाभ कमाना है। ऐसे में सरकार को इन संस्थाओं पर नियंत्रण व मूल्यांकन के लिये समुचित सुधारात्मक हल निकालने होंगे। तभी आम भारतीय युवाओं को गुणात्मक उच्च शिक्षा मिल सकेगी। उच्च शिक्षा के संस्थानों (निजी व सरकारी) के क्रियाकलापों में पारदर्शिता लाने के लिये अब वर्तमान में ई. टेक्नोलॉजी के अधिकतम उपयोग की आवश्यकता है तथा यह भी सुनिश्चित किया जाय कि सभी राज्यों में एक समान व्यवस्था हो।
- देश में गरीब व मध्यम वर्ग का कोई युवा उच्च शिक्षा के लाभ उठाने से वंचित न रहे इसके लिये आर्थिक आधार पर फैलोशिप का प्रावधान किया जाना चाहिये जो न केवल सामान्य पाठ्यक्रमों में होगा बल्कि प्राफेशनल पाठ्यक्रमों व शोध के लिये भी होगा। उच्च शिक्षा का जो स्तर केन्द्रीय विश्वविद्यालयों, आई.आई.टी. तथा आई. आई.एम. को हासिल है। उस स्तर तक पहुंचने के लिये हर सरकारी विश्वविद्यालय अनुदानिक कॉलेज को समुचित आर्थिक संसाधन उपलब्ध कराये जाने चाहिये, उन्हें कार्य करने की पर्याप्त स्वायत्तता प्रभावी नियंत्रण के साथ उपलब्ध होनी चाहिये।
- ''उच्च शिक्षण संस्थानों में शिक्षण के साथ-साथ शोध पर भी ध्यान दिया जाना चाहिये। शोध की प्रवृत्ति समसामयिक होनी चाहिये तथा शोध का योगदान देश की

नीति निर्धारण में होना चाहिये।'' शोध का नीति में योगदान होना चाहिये या नीतिविषयक शोध कार्यों पर अधिक बल दिया जाना चाहिये। शोध क्षेत्र में सरकार द्वारा किये जा रहे प्रयास सराहनीय हैं परंतु यू.जी.सी. रेग्यूलेसन, 2009 का केन्द्रीय संस्थानों के साथ राज्य स्तरीय संस्थानों में भी प्रभावी क्रियान्वयन आवश्यक है, इस अधिनियम ने पी.एच–डी उपाधि के लिये अखिल भारतीय शोध परीक्षा का आयोजन किया जाना चाहिये, जिससे शोध के क्षेत्र में गुणवत्ता लायी जा सके।

- वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विश्वविद्यालय कालेजों की स्थिति सुधारकों के लिये इन्हें न केवल पर्याप्त धन व संसाधन मुहैया कराया जाय बल्कि उनके सफल संचालन हेतु कुलपतियों को जवाबदेह, प्रशासन को पारदर्शी व निर्णय लेने की प्रक्रिया को अधिक लोकतांत्रिक बनाया जाना चाहिये जिससे राज्य सरकारों की उपेक्षा झेल रहे विश्वविद्यालयों की स्थिति का निराकरण हो सके व शैक्षणिक गुणवत्ता में भी सुधार हो।
- शोध के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधार करने के लिये प्रत्येक विश्वविद्यालय व संस्थान के जनरल व शोध कार्यों को यू.जी.सी. द्वारा निर्मित वेबसाइट पर डाल दिया जाये एवं शोधार्थियों द्वारा प्रकाशित शोधपत्रों को इस वेबसाइट पर डालना अनिवार्य कर दिया जाये जिससे शोध के क्षेत्र में पारदर्शिता लायी जा सके ।
- उपयुक्त सुधारों का क्रियान्वयन केवल केन्द्रीय स्तर पर करने से उच्च शिक्षा में सुधार नहीं किया जा सकता बल्कि समस्त राज्यों में उपयुक्त सुधारों से संबंधित नीति का समुचित क्रियान्वयन, प्रभावी नियंत्रण व मूल्यांकन संपूर्ण व्यवस्था के साथ होना चाहिए। ''शिक्षा समाज का प्रतिबिम्ब हैं क्योंकि शिक्षा से ही समाज का निर्माण होता है।''

संदर्भ

''इंडियन कन्ट्री समरी ऑफ हायर एजुकेशन'' वर्ल्ड बैंक http://siteresources.worldbank.org/EDUCATION/Resources/278200-1121703274255/1439264-1193249163062/India_CountrySummary.pdf

मुकेश चंसौरिया, भारत में उच्च शिक्षा: समस्यायें व समाधान, योजना, वर्ष 53, अंक 9, सितम्बर 2009,पृ0. 27–32।

डी मुखर्जी, द नालेज आफ मार्केट, द वीक, सितम्बर 11, 2005, पृ036–48।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय की उच्च शिक्षा विभाग की वार्षिक रिपोर्ट, 2008–09, पृ0 103–108।

http://www.academics-india.com/yashpal-committe-report.pdf.

आन्नद प्रधान, ऐसे तो नहीं सुधरेगी उच्च शिक्षा, अमर उजाला, जनवरी 12, 2010।

http://naacindia.org/publication/annual%20report%202006-07.pdf.

http://www.iie.org/g/media/files/corporate/IInd annualreport2008.ashx

http://www.iie.org/g/media/files/corporate/IInd annualreport2008.ashx

http://www.iie.org/g/media/files/corporate/IInd annualreport2008.ashx

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना प्रपत्र, भारत सरकार।

http://www.topuniversities.com/university-rankings/world-university-ranking/2009/results

निरंजन कुमार, आभाओं से घिरी उच्च शिक्षा, दैनिक जागरण (इलाहाबाद), फरवरी 04, 2010।

बी0 बी0 भट्टाचार्या एवं सी. पी. घुनिया, ''थ्रेट एण्ड आपरच्यूनिटी इन हायर एजूकेशन इन दा कानटेक्सट आफ गेट्स ए यूनिवर्सिटी न्यूज, नयी दिल्ली, 43 अंक 44, 2005 पृ0. 15–17।

एस. पी. गौतम, मेकिंग क्वालिटी इन हायर एजूकेशन एक्सेसीबल इन इण्डिया, यूनिवर्सिटी न्यूज, 2005, वा 043, न041, पृ0 4–5।

डेविड एम मेलॉन: हायर एजूकेशन एण्ड रिसर्च इन इण्डिया, द हिन्दू (नयी दिल्ली), जुलाई 8, 2009।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति की समीक्षा

महेश कुमार मुछाल* और सतीश चन्द**

सारांश

जनसंख्या शिक्षा आज एक महत्वपूर्ण विषय है। विभिन्न स्तरों पर इस विषय के अध्ययन की बहुत आवश्यकता है। पर्याप्त प्रयास किये जाने के उपरान्त भी अपेक्षित परिणाम दिखायी नही दे रहे है। इसी को दृष्टिगत रखते हुए शोधार्थी ने उ.प्र. के बागपत जनपद के प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति, विषय पर अपना अध्ययन किया है। इस अध्ययन के लिए शोधार्थी ने यादृच्छिक न्यादर्शन के आधार पर 200 शिक्षकों को न्यादर्श के रूप में लिया है। जनसंख्या शिक्षा अभिवृत्ति को ज्ञात करने के लिए स्वनिर्मित ''जनसंख्या शिक्षा अभिवृत्ति मापनी'' का प्रयोग किया है। प्राप्त परिणामों की व्याख्या से ज्ञात होता है कि प्राथमिक स्तर के 45 प्रतिशत शिक्षक जनसंख्या शिक्षा के प्रति सामान्य धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं जबकि 35 प्रतिशत शिक्षक अधिक धनात्मक और 20 प्रतिशत शिक्षक जनसंख्या शिक्षा के प्रति कम धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं। प्राप्त परिणामों के विश्लेषण से यह भी ज्ञात हुआ है कि लिंग, निवास स्थान, शिक्षा एवं धर्म प्राथमिक शिक्षकों की जनंसख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति को सार्थक रूप से प्रभावित करते हैं।

प्रस्तावना

जनसंख्या वृद्धि आज एक प्रमुख मानवीय समस्या के रूप में उदित हुई है। इससे जीवन का प्रत्येक पक्ष प्रभावित हुआ है। व्यक्तिगत रूप से जहाँ व्यक्तियों के स्वास्थ्य, धन, रोजगार तथा सुरक्षा पर इसका प्रभाव पड़ा है वहीं अन्तराष्ट्रीय स्तर पर शान्ति एवं

* रीडर, शिक्षक शिक्षा विभाग, दिगम्बर जैन (पी.जी.) कालिज बड़ौत (बागपत) उत्तर प्रदेश
** वरिष्ठ प्रवक्ता, शिक्षक शिक्षा विभाग, बाबू कामता प्रसाद जैन महाविद्यालय बड़ौत (बागपत), उत्तर प्रदेश

सुरक्षा पर तमाम प्रश्न उठने लगे हैं। मनुष्य की न्यूनतम आवश्यकताओं (रोटी कपडद्या और मकान) की पूर्ति बाधक होने लगी है। जीवन स्तर में तेजी से गिरावट को आसानी से देखा जा सकता है। जनसंख्या में बेतहाशा वृद्धि के कारण ही तमाम सामाजिक, राजनैतिक और शैक्षिक समस्याएं चारों ओर परिलक्षित होने लगी है। जनसंख्या विस्फोट के परिणामस्वरूप लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्राकृतिक संशाधनों जैसे भूमि, जल, वायु आदि के अनियन्त्रित तथा अव्यवस्थित उपयोग ने प्राकृतिक सन्तुलन बिगाड़ दिया है जिसके परिणाम स्वरूप प्रकृति भूकम्प, सुनानी बाढ़, सूखा, तूफान, चक्रवात तथा अनियमित वर्षा आदि के माध्यम से अपनी नाराजगी अभिव्यक्त कर रही है जिसका दृष्परिणाम आज सम्पूर्ण विश्व को भुगतना पड़ रहा है।

जनसंख्या वृद्धि की समस्या वर्तमान में किसी राष्ट्र की सीमा तक ही सीमित नहीं है बल्कि पूरे विश्व की समस्या है। ये अलग बात है कि विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में यह अति गम्भीर समस्या के रूप में होती है। भारत की स्थिति भी किसी से छुपी नही है। जनसंख्या वृद्धि कैसे रूके अब यह प्रश्न बन चुका है। भारत किसी अन्य क्षेत्र में विकसित हो या न हो किन्तु जनसंख्या के क्षेत्र में विकसित अवश्य कहा जा सकता है। जनसंख्या कितनी तीव्र गति से बढ़ रही है इसका प्रमाण यह है कि सवाधीनता के समय 30 करोड़ जनसंख्या आज बढ़कर 115 करोड़ से भी अधिक हो गयी है जो विश्व की जनसंख्या का 17 प्रतिशत है और यदि जनसंख्या इसी गति से बढ़ती रही तो 2025 से 2050 के मध्य भारत कभी भी सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश हो जायेगा और देश के सामने और विकट समस्या उत्पन्न हो जायेगी ।

आज भारत के सामने सबसे बड़ी चुनौती जनसंख्या स्थिरीकरण की है। जनसंख्या की समस्या ने आज देश, सरकार तथा प्रशासन के सामने गम्भीर चुनौती प्रस्तुत कर दी है यह चुनौती इस विशाल जनसंख्या के लिए भोजन, मकान, रोजगार, चिकित्सा, सुरक्षा और शिक्षा आदि उपलब्ध कराने की है। जनसंख्या वृद्धि ने सरकार की अनेक विकास योजनाओं को अप्रसांगिक बना दिया है। यदि कोई योजना वर्तमान में प्रस्तुत की जाती है तो उसे पूरा करने तक जनसंख्या इतनी बढ़ जाती है कि सम्बन्धित योजना की प्रासंगिकता पर ही प्रश्न चिन्ह लग जाता है। वर्तमान में खाद्य सामग्री, सड़क, अस्पताल, विद्यालय, शुद्ध पेयजल, विद्युत आपूर्ति, जैसी बुनियादी सुविधाएं जनसंख्या के दबाव के सामने स्वयं को असहाय महसूस कर रही है, जनसंख्या विस्फोट ने रोजगार की

स्थिति पर भी बेहद गम्भीर प्रभाव डाला है। जनसंख्या विस्फोट ने देश के आर्थिक विकास पर भी नकारात्मक प्रभाव डाला है।

अशोक मेहता ने जनसंख्या वृद्धि को इस प्रकार वर्णित किया है, ''जनसंख्या वृद्धि भारतीय दुर्ग में छिपा हुआ एक भयकर शत्रु है जो हमारी समस्त योजनाओं को नष्ट कर रहा है। यदि बेकारी दूर करनी है, अन्न संकट से निजात पाना है, आवास की समस्या सुलझानी है या प्रति व्यक्ति आय बढ़ानी है तो हमे जनसंख्या वृद्धि पर कठोर नियन्त्रण करना पडेगा''। डॉ. चन्द्रशेखर ने तो जनसंख्या वृद्धि के कारण भारत वर्ष को संतानोत्पत्ति का सबसे बड़ा कुटीर उद्योग कह डाला। स्थिति की भयावहता के लिए जरूरी है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपने उत्तरदायित्वों को समझते हुए उसका उचित निर्वहन करें । व्रीवता से हो रही जनसंख्या वृद्धि पर अंकुश लगाने हेतु शासन प्रशासन स्तर पर क्रियाकलाप तय किये जाने चाहिए तथा लोगों को जनसंख्या नियन्त्रण के लिए प्रेरित करना चाहिए। समस्या से निजात पाने तथा दूरगामी परिणाम हेतु व्यक्तियों को जनसंख्या शिक्षा की जानकारी दी जानी चाहिए ।

जनसख्या शिक्षा

जनसंख्या शिक्षा वह शिक्षा है जो जनसंख्या अथवा मानव शक्ति या संशाधन से सम्बन्धित है। इस शिक्षा में जनसंख्या के आकार, वृद्धि अथवा कमी, सरंचना तथा लैंगिक अनुपात आदि विषयों का ज्ञान कराया जाता है। इस शिक्षा में केवल आंकड़ों को ही ज्ञात नहीं किया जाता है वरन जनसंख्या वृद्धि तथा कमी के कारणों तथा उनके सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं पर्यावण पर पड़ने वाले प्रभावों का भी अध्ययन किया जाता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि ''जनसंख्या की व्रीव गति से वृद्धि के परिणाम स्वरूप मानव जीवन के आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक पक्षों पर पड़ने वाले कुप्रभावों के प्रति जागरूकता एवं सम्बन्ध समाधानों के विषय में वैचाारिक शक्ति की शैक्षिक व्यवस्था ही जनंसख्या शिक्षा है।'' युनेस्को (1970) के अनुसार ''जनसंख्या शिक्षा एक शैक्षिक कार्यक्रम है जो परिवार, समूह, राष्ट्र तथा विश्व की जनसंख्या स्थिति के सन्दर्भ में विद्यार्थियों में आदर्श एवं जिम्मेदारी पूर्ण अभिवृत्ति तथा व्यवहार विकसित करती है।'' विडरमैन (1971) के अनुसार ''जनसंख्या शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा विद्यार्थी जनसंख्या प्रक्रियाओं, जनसंख्या की विशिष्टताओं जनसंख्या परिवर्तन के कारणों एवं परिणामों, स्वयं अपने अपने परिवार समाज एवं

विश्व परिवर्तन के लक्षणों की खोज एवं अन्वेषण करता है।''

फरवरी 1978 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद द्वारा प्रकाशित पुस्तक पापुलेशन क्लास रूम में जनसंख्या शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य प्रतिपादित किये गये ।

- जनसंख्या वृद्धि के मुख्य अवयव जन्मदर, मृत्युदर तथा वृद्धि दर इत्यादि की जानकारी को विकसित करना ।
- राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जनसंख्या की प्रवत्ति के अवबोध को विकसित करना ।
- यह अनुमान कराना कि जनसंख्या जन्मदर में अन्तर बढ़ने से बढती है।
- यह प्रचार करना कि भारत में दूसरे देशों की अपेक्षा निर्धनता अनुपात ऊँचा है।
- विद्यार्थियों को जनसंख्या सम्बन्धी चित्र, मानचित्र और सांख्यिकीय आंकड़ों के प्रयोग एवं व्याख्या में निपुण करना ।
- छात्रों का परिवारों के मानक के प्रति वांछित दृष्टिकोण तैयार करना ।
- सही समय पर परिवार के आकार के बारे में सही निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना ।

जनसंख्या शिक्षा के सम्बन्ध में भारतीय परिवार नियोजन संघ की अध्यक्षा और जनसंख्या शिक्षा के मामले में अग्रणी श्रीमती आभाबाई बी. वाढिया ने लिखा है- आने वाली पीढ़ी को हर हालात में समय पर और विभिन्न स्तरों पर पढ़ाई के माहौल में यह जानने का आदेश दिया जाना चाहिए कि जनसंख्या की यह आधुनिक और विकराल समस्या क्या है, जीवन के सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक पहलुओं में यह किस तरह काम कर रही है और मानव जीवन के स्वरूप को किस तरह प्रभावित कर रही है''

जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व : जनसंख्या शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व इस प्रकार है:

1. परिवार नियोजन एवं परिवार कल्याण कार्यक्रमों के सफल संचालन हेतु जनसंख्या को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाना चाहिए। चूंकि भारत की

अधिकांश जनता अशिक्षित, अंधविश्वासी रूढिवादी व धार्मिक कट्टरता से घिरी है। इसलिए वह समझती है कि बच्चे ईश्वर की देन हैं, अत: ईश्वर के कार्य में रूकावट डालना उचित नहीं है।

2. जनसंख्या शिक्षा के माध्यम से ही जनमानस को जनसंख्या वृद्धि के कुपरिणामों से अवगत कराया जा सकता है। सुखी और स्वस्थ जीवन के लिए जनंसख्या का सीमित होना ही एक मात्र उपाय है। समाज में व्याप्त लड़कों के प्रति बुढ़ापे की लाठी तथा लड़कियों के प्रति दूसरे की अमानत जैसी लिंग भेद भावना से उबारन होगा
3. परिवार की सुख शान्ति व देश के समुचित विकास हेतु जनसंख्या शिक्षा के द्वारा ही लोगों में यह चेतना जागृत की जा सकती है।
4. जनसंख्या शिक्षा समाज में व्याप्त सामाजिक बुराईयों जैसे चोरी, डकैती, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी तथा बाल मजदूरी को अलविदा कहने में भी मददगार साबित होगी ।

स्थितियां चाहे जो भी हो, जनसंख्या शिक्षा भारत के साथ-साथ पूरे विश्व के लिए अनिवार्य है। यदि जनसंख्या वृद्धि पर अंकुश नहीं लगा तो यह कहना कदाचित गलत न होगा कि हमारी प्रगति रेत पर लिखने के समान होगी'' जिसको जनसंख्या वृद्धि की लहरे मिटा देगी, अत: प्रत्येक व्यक्ति को राष्ट्र की समृद्धि हेतु अपने सहयोग को अहमियत देते हुए अपने उत्तरदायित्वों के प्रति जागरूक व सजग हो जाना चाहिए इसी मे व्यक्ति के साथ-साथ राष्ट्र की भी भलाई है।

सन्दर्भ साहित्य की समीक्षा

महेश्वरी (1972) द्वारा अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति तत्परता का अध्ययन किया गया। अध्ययन के आधार पर महत्वपूर्ण परिणाम प्राप्त हुए जिसमें अध्यापकों के अनुसार गरीबी एवं बेरोजगारी का कारण परिवार का आकार है तथा अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा को विद्यालयों में सम्मिलित करने की पूर्ण स्वीकृति थी। सिंह, भोपाल (1985) द्वारा राजस्थान के अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन किया गया। अध्ययन द्वारा अनेक महत्वपूर्ण परिणाम प्राप्त हुए जैसे पुरुष, महिला अध्यापकों की अपेक्षा अधिक धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं। अधिकांश

अध्यापक जनंसख्या शिक्षा के प्रति धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं। तथा शिक्षण अनुभव का कोई सार्थक प्रभाव जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति पर प्राप्त नहीं हुआ। एन.सी.ई.आर.टी. (1986) द्वारा महाराष्ट्र में शोध अध्ययन ''राष्ट्रीय जनसंख्या नीति में जनसंख्या शिक्षा पर पठन-पाठन के प्रभाव का अध्ययन'' विषय पर किया गया। अध्ययन का उद्देश्य जनसंख्या शिक्षा के लिए प्रशिक्षित किये गये माध्यमिक स्तर तक के शिक्षकों के व्यवहार में परिवर्तन लाना तथा अनुसंधान में सुधार व प्रशासन को बढ़ाने के लिए सुझाव देना था। अध्ययन द्वारा महत्वपूर्ण परिणाम प्राप्त हुए जिनके आधार पर अध्यापकों के लिए जनंसख्या शिक्षा प्रशिक्षण चलाने की आवश्यकता अनुभव की गयी। सन्तोष कुमारी (1991) ने जनसंख्या शिक्षा के प्रति अध्यापकों तथा अविभावकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन किया। इसी प्रकार गोयल तथा मानक (1994) द्वारा भी शोध अध्ययन अध्यापकों तथा अविभावकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति पर किया गया। कृष्ण तथा सरोज (1995) द्वारा 130 अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन किया गया । परिणामों द्वारा ज्ञात हुआ कि महिला तथा पुरुष अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। विवाहित, अविवाहित तथा परिवार का कोई सार्थक प्रभाव जनसंख्या जागरूकता पर नहीं पाया गया। महेश (1997) द्वारा मध्य प्रदेश के बुन्देलखण्ड क्षेत्र के सेकेन्डरी स्कूल के अध्यापकों तथा विद्यार्थियों की जनसंख्या समस्या तथा जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन किया गया तथा निष्कर्ष रूप में पाया कि अधिकांश शिक्षक जनसंख्या शिक्षा के प्रति धनात्मक अभिवृत्ति रखते हुए जनसंख्या शिक्षा को पाठ्यक्रम में सम्मलित कर विद्यार्थियों को शिक्षित करने के पक्ष में थे तथा यह भी पाया कि विद्यार्थी भी जनसंख्या शिक्षा के प्रति धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं। सिंह एन.पी. (1998) ने मुस्लिम महिलाओं की जनसंख्या शिक्षा तथा सीमित परिवार के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन किया तथा निष्कर्ष रूप में पाया कि मुस्लिम महिलाओं की जनसंख्या शिक्षा तथा सीमित परिवार के प्रति ऋणात्मक अभिवृत्ति है। प्रष्टी (1998) द्वारा लिंग शिक्षा तथा वातावरण का जनसंख्या जागरूकता पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया । अध्ययन द्वारा ज्ञात हुआ कि वातावरण और शिक्षा का सार्थक प्रभाव जनसंख्या जागरूकता पर पड़ता है जबकि लिंग का कोई सार्थक प्रभाव नही पड़ता है। भाटिया (2000) ने कार्यशील तथा घरेलू महिलाओं की जनसंख्या शिक्षा तथा परिवार

नियोजन के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन किया । अध्ययन के आधार पर पाया कि कार्यशील महिलाएं जनसंख्या शिक्षा और परिवार नियोजन के प्रति अधिक धनात्मक अभिवृत्ति रखती हैं जबकि घरेलू महिलाएं कम धनात्मक अभिवृत्ति रखती हैं।

नारायण, एम.आर.एल. (2003) द्वारा बी.एड. छात्रों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन किया गया। अध्ययन में पाया कि बी.एड. छात्र जनसंख्या शिक्षा के प्रति धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं तथा पुरुष एवं महिला छात्र जनसंख्या शिक्षा के प्रति समान रूप से धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं।

अध्ययन की प्रासंगिकता

सन्दर्भ साहित्य की समीक्षा से ज्ञात होता है कि अब तक शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति पर कुछ शोध हुए हैं, जिसमें सन्तोष कुमारी, कृष्णा तथा सरोज, महेश, भोपाल सिंह, महेश्वरी प्रष्टी और भाटिया आदि ने जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति पर कार्य किया है। लेकिन अभी तक प्राथमिक स्तर के शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति पर कोई कार्य नही हुआ है। इसलिए इस अध्ययन की प्रसांगिकता प्रतिपादित होती है।

शोधार्थी द्वारा इस विषय को अपने अध्ययन का विषय बनाने का एक कारण यह भी है कि भारत में जनसंख्या वृद्धि की समस्या एक ऐसी जटिल समस्या है, जो दिन-प्रतिदिन उग्र रूप धारण करती जा रही है। जनसंख्या वृद्धि के कारण जंगलों की कटाई तथा नई बस्तियों का निर्माण हो रहा है, जिससे भविष्य अति अंधकारमय दृष्टिगत हो रहा है। वर्तमान समय में जनसंख्या शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। शिक्षण संस्थाएं अध्यापकों तथा विद्यार्थियों में जनसंख्या कम करने की समग्र चेतना जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। यदि हमें अपने देश को उन्नति के पथ पर अग्रसर करना है तो निश्चित ही हमें सर्वप्रथम जनसंख्या वृद्धि की समस्या का निराकरण करना होगा जो कि जनसंख्या शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। और यह कार्य हमें प्राथमिक स्तर से ही शुरू कर देना चाहिए । और सबसे पहले हमें शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति धनात्मक करनी होगी तभी हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। इसी को दृष्टिगत रखते हुए शोधार्थी ने ''प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति'' विषय पर अपना अध्ययन कार्य किया है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
2. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरुष एवं महिला शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत बी.टी.सी. एवं विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षित शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
5. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत बी.एड. एवं बी.पी.एड. योग्यता धारक शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
6. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत हिन्दू एवं मुस्लिम शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना

1. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरुष एवं महिला शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत बी.टी.सी. एवं विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षित अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत बी.एड. एवं बी.पी.एड. योग्यताधारक शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत हिन्दू एवं मुस्लिम शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध विधि

प्रस्तुत अध्ययन में समस्या के अनुरूप ''वर्णात्मक सर्वेक्षण विधि'' का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या

प्रस्तुत अध्ययन में जनसंख्या के रूप में पश्चिमी उत्तर प्रदेश के बागपत जनपद के परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों के समस्त शिक्षकों को सम्मिलित किया गया है।

न्यादर्श एवं न्यादर्शन

वर्तमान अध्ययन हेतु शोधार्थी ने न्यादर्श के रूप में ''यादृच्छिक न्यादर्शन'' विधि के आधार पर बागपत जनपद के परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों के 200 शिक्षकों का चयन किया है।

प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत अध्ययन में उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक तथ्यों, आंकड़ों एवं सूचनाओं के संकलन हेतु स्वनिर्मित जनसंख्या शिक्षा अभिवृत्ति मापनी का प्रयोग किया है।

प्रयुक्त साख्यिकीय प्रविधियां

समंक संकलन से प्राप्त सूचनाओं को अर्थयुक्त बनाने एवं परिणामों की व्याख्या हेतु प्रतिशत विवरण, ''टी''-परीक्षण एवं मानक विचलन आदि साख्यिंकीय प्रविधियों का उपयोग किया गया है।

परिणाम एवं विवेचन

समस्या से सम्बन्धित आंकड़ों, तथ्यों एवं सूचनाओं आदि के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर परिणामों को प्राप्त किया गया है। प्रस्तुत शोध समस्या के उद्देश्यों पर आधारित परिकल्पनाओं के सम्बन्ध में निम्नालिखित परिणाम प्राप्त हुए हैं।

1. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का प्रतिशत विवरण

तालिका–1 (N = 200)

जनसंख्या अभिवृत्ति प्राप्तांक के	शिक्षकों की संख्या	प्रतिशत	वर्गीकरण
110 से अधिक	70	35%	अधिक धनात्मक अभिवृत्ति
80 से 110	90	45%	सामान्य धनात्मक अभिवृत्ति
80 से कम	60	20%	कम धनात्मक अभिवृत्ति

तालिका–1 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 45% प्राथमिक शिक्षक जनसंख्या शिक्षा के प्रति सामान्य धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं जबकि केवल 35% शिक्षक जनसंख्या शिक्षा के प्रति अधिक धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं और 20% शिक्षक जनसंख्या शिक्षा के प्रति कम धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि प्राथमिक स्तर पर कार्यरत अधिकांश शिक्षक जनसंख्या शिक्षा के प्रति सामान्य जागरूक होते हैं।

2. ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर की सार्थकता:

प्राथमिक स्तर पर कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की जनसंख्या के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर की सार्थकता हेतु 'टी' मूल्य की गणना की गई है जिसका विवरण निम्नवत है

तालिका–2

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मूल्य	सार्थकता स्तर
ग्रामीण शिक्षक	100	121.95	5.35	3.61	सार्थक .01 स्तर
शहरी शिक्षक	100	124.45	8.30		

तालिका–2 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि प्राथमिक स्तर पर कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर है। इसके आधार पर शून्य परिकल्पना ''प्राथमिक स्तर पर कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नही है'' को अस्वीकृत किया जाता है। शहरी तथा ग्रामीण शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति के प्राप्तांकों

के मध्यमानों से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण शिक्षकों की अपेक्षा शहरी शिक्षकों में तुलनात्मक रूप में अधिक धनात्मक अभिवृत्ति पायी जाती है। इससे स्पष्ट होता है कि शहरी शिक्षक जनसंख्या शिक्षा के प्रति अधिक जागरूक होते है जबकि तुलनात्मक रूप से ग्रामीण शिक्षक कम जागरूक होते है।

3. पुरूष एवं महिला शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर की सार्थकता:

प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरूष एवं महिला शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर की सार्थकता को ज्ञात करने हेतु 'टी' मूल्य की गणना की गई है जिसका विवरण निम्नवत है-

तालिका-3

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मूल्य	सार्थकता स्तर
पुरूष शिक्षक	110	120.63	9.33	2.22	सार्थक .05 स्तर
महिला शिक्षक	90	117.11	8.95		

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरूष एवं महिला शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर है। अत: शून्य परिकल्पना कि ''प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरूष एवं महिला शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नही है'' अस्वीकृत होती है। सम्बन्धित समूह के शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति के प्राप्तांको के मध यमानों से स्पष्ट होता है कि पुरूष शिक्षकों में महिला शिक्षकों की अपेक्षा जनसंख्या शिक्षा के प्रति अधिक धनात्मक अभिवृत्ति पायी जाती है। इसका कारण यह है कि पुरूष शिक्षक महिला शिक्षकों की अपेक्षा जनंसख्या शिक्षा के प्रति अधिक जागरूक होते है तथा जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणामों से अवगत होते है।

4. बी.टी.सी. और विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षित शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर की सार्थकता:-

प्राथमिक स्तर पर कार्यरत बी.टी.सी. और विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षित अध यापकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर की सार्थकता को ज्ञात करने हेतु 'टी' मूल्य की गणना की गई है जिसका विवरण निम्नवत है।

तालिका–4

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मूल्य	सार्थकता स्तर
बी.टी.सी. प्रशिक्षित	120	117.24	7.93	2.17	सार्थक .05 स्तर
अध्यापक विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षित अध्यापक	80	119.53	6.52		

उपरोक्त तालिका–4 के अवलोकन से विदित होता है कि प्राथमिक स्तर पर कार्यरत बी.टी.सी. एवं विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षित शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में जो अन्तर परिलक्षित होता है वह संयोगवश न होकर वास्तविक है। अत: इसके आधार पर शून्य परिकल्पना कि ''बी.टी.सी. और विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षित अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है'' को अस्वीकृत किया जाता है। सम्बन्धित समूह के मध्यमानों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि बी.टी.सी. प्रशिक्षित शिक्षकों की अपेक्षा विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षित शिक्षक जनसंख्या शिक्षा के प्रति अधिक धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं। इसका कारण यह है कि बी.टी.सी. प्रशिक्षित अधिकतर शिक्षक युवा व उच्च शिक्षित होते हैं तथा उनका दृष्टिकोण सीमित परिवार की तरफ अधिक होता है।

5. बी.एड. एवं बी.पी.एड. योग्यताधारक शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर की सार्थकता

प्राथमिक स्तर पर कार्यरत बी.एड. एवं बी.पी.एड. योग्यताधारक अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर की सार्थकता को ज्ञात करने हेतु 'टी' मूल्य की गणना की गई है जिसका विवरण तालिका–5 में दिया है।

तालिका–5

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मूल्य	सार्थकता स्तर
बी.एड. योग्यता–धारक शिक्षक	125	120.75	6.53	1.75	सार्थक नहीं
बी.पी.एड. योग्यता–धारक शिक्षक	75	119.25	5.63		

तालिका-5 के अवलोकन से विदित होता है कि बी.एड. एवं बी.पी.एड. योग्यताधारक प्राथमिक स्तर के शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। दोनों समूह के मध्यमानों मे जो अन्तर परिलक्षित हो रहा है वह मापन त्रुटि के कारण हो सकता है। अत: शून्य परिकल्पना ''बी.एड. एवं बी.पी.एड. प्रशिक्षित अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं है'' को स्वीकार किया जाता है। अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि बी.एड. एवं बी.पी.एड. योग्यताधारक अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति समान पायी जाती है। इसका कारण यह है कि दोनों समूह शिक्षक युवा होते हैं, उच्च शिक्षित होते हैं तथा वह जनसंख्या वृद्धि के दुष्परिणामों से अवगत होते हैं।

6. हिन्दू और मुस्लिम शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर की सार्थकता

प्राथमिक स्तर पर कार्यरत हिन्दू और मुस्लिम धर्म के शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में अन्तर की सार्थकता हेतु 'टी' मूल्य की गणना की गई है जिसका विवरण निम्नवत है:

तालिका 6

समूह	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मूल्य	सार्थकता स्तर
हिन्दू शिक्षक	130	122.37	7.46	9.05	सार्थक .01 स्तर
मुस्लिम शिक्षक	70	114.28	5.10		

उपरोक्त तालिका पर दृष्टिगत करने से स्पष्ट होता है कि हिन्दू व मुस्लिम धर्म के प्राथमिक स्तर के शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर है। अत: शून्य परिकल्पना कि ''हिन्दू और मुस्लिम धर्म के शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं है'' अस्वीकृत होती है। सम्बन्धित समूह के मध्यमानों से स्पष्ट होता है कि हिन्दू धर्म के शिक्षकों में मुस्लिम धर्म के शिक्षकों की अपेक्षा जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति अधिक धनात्मक पायी जाती है। इसका कारण यह है कि मुस्लिम धर्म के शिक्षक रूढ़िवादी प्रवृत्ति के होते हैं तथा उनका दृष्टिकोण सीमित परिवारों के प्रति ऋणात्मक होता है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन द्वारा शोधार्थी को निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए:

1. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत 45 प्रतिशत शिक्षकों में जनसंख्या शिक्षकों के प्रति सामान्य धनात्मक अभिवृत्ति पायी गयी जबकि 35 प्रतिशत शिक्षकों में अधिक धनात्मक अभिवृत्ति और केवल 20 प्रतिशत शिक्षकों में कम धनात्मक अभिवृत्ति पायी गयी।
2. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर पाया गया है । ग्रामीण शिक्षकों की अपेक्षा शहरी शिक्षकों में जनसंख्या शिक्षा के प्रति अधिक धनात्मक अभिवृत्ति पायी गई हैं।
3. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत पुरुष एवं महिला शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में भी सार्थक अन्तर पाया गया है । महिला शिक्षकों की अपेक्षा पुरुष शिक्षकों में जनसंख्या शिक्षा के प्रति अधिक धनात्मक अभिवृत्ति पायी गई है।
4. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत बी.टी.सी. और विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षित शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर पाया गया है । बी.टी.सी. प्रशिक्षित अध्यापकों की अपेक्षा विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षित अध्यापकों में जनसंख्या शिक्षा के प्रति अधिक धनात्मक अभिवृत्ति पायी गई।
5. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत बी.एड. एवं बी.पी.एड. योग्यताधारक अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है। अर्थात दोनो समूह के शिक्षकों में जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति समान पायी गई है।
6. प्राथमिक स्तर पर कार्यरत हिन्दू एवं मुस्लिम धर्म के शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर पाया गया है। मुस्लिम धर्म के शिक्षकों की अपेक्षा हिन्दू धर्म के शिक्षकों में जनसंख्या शिक्षा के प्रति अधिक धनात्मक अभिवृत्ति पायी गई है।

शैक्षिक निहितार्थ

प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि अधिकतर प्राथमिक स्तर के शिक्षकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति सामान्य धनात्मक है। प्रस्तुत अनुसंधान द्वारा प्राप्त परिणामों का शासन द्वारा शैक्षिक उपयोग किया जा सकता है।

जनसंख्या वृद्धि की समस्या एक ऐसी जटिल समस्या है जो दिन प्रतिदिन उग्र रूप धारण करती जा रही है। वर्तमान समय में जनसंख्या शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। जनसंख्या शिक्षा द्वारा अध्यापकों और नवयुवकों की विचार शक्ति को जाग्रत कर जागरूक बनाया जा सकता है।

बालक व बालिकाओं के हृदय में सीमित परिवार की भावना का जितना विकसित व पल्लवित शिक्षण संस्थाएं व अध्यापक कर सकता है उतना अन्य संस्थायें व अन्य लोग नहीं कर सकते । शिक्षण संस्थायें ही ऐसा साधन है जिसके द्वारा छात्रों को जनसंख्या शिक्षा प्रदान की जा सकती है। शिक्षण संस्थाएं विद्यार्थियों मे जनसंख्या को कम करने की समग्र चेतना जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। बालकों को जनसंख्या शिक्षा प्रदान करना नितान्त आवश्यक है क्योंकि जनसंख्या वृद्धि केवल परिवार तथा समाज को ही दुष्प्रभावी नहीं बना रही है वरन राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अपना दुष्प्रभाव डाल रही है।

शिक्षक की अभिवृत्ति तथा विद्यार्थियों की अभिवृत्ति में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। यदि शिक्षक की अभिवृत्ति जनसंख्या शिक्षा के प्रति सकारात्मक है और जनसंख्या शिक्षा को उनके द्वारा विशेष समर्थन दिया जाता है तब इस बात की सम्भावना अधिक होती है कि विद्यार्थी भी जनसंख्या शिक्षा के प्रति धनात्मक अभिवृत्ति निर्मित करेंगे। अत: जनसंख्या वृद्धि की समस्या पर अंकुश लगाने के लिए यह आवश्यक है कि सबसे पहले अध्यापकों की जनसंख्या शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति सकारात्मक करनी होगी। इसके लिए समय-समय पर विद्यालयों में तथा जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थानों में गोष्ठियां आदि आयोजित की जानी चाहिए तथा बी.टी.सी. और विशिष्ट बी.टी.सी. प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम में जनसंख्या शिक्षा को अनिवार्य विषय के रूप में लागू करना चाहिए ।

सन्दर्भ

गिलफोर्ड, जे.पी. (1954) *''साइकोमैट्रिक मैथडस''*, मैकग्रा हिल्स, न्युयार्क ।

गैरट, एच.ई. (1967) *''स्टेटीटिक्स इन साइकोलोजी एण्ड एजूकेशन''* वाकिल्स फेफर एण्ड सायमनस लि., बोम्बे ।

सुब्रमण्यम, बी. (1970) *''ए स्टडी ऑफ द रियेक्सन ऑफ हाई स्कूल टीचर्स टू द स्टडी ऑफ पापूलेशन एजूकेशन''*, जनरल ऑफ फैमिली वैलफेयर, वोल्यूम 17 नं0 2

माहेश्वरी (1972) *''ए स्टडी ऑफ द रिप्रजेन्टेटिव नैस आफॅ स्कूल टीचर्स टू पापूलेशन एजूकेशन''*, एम.एड. डैजरटेसन जामिया मिलिया इस्लामिया वि.वि. दिल्ली।

राव डी.जी. (1974) *''पापूलेशन एजूकेशन ए गाइड टू करीकूलम एण्ड टीचर एजूकेशन''* स्ट्रलिंग पब्लिसर्स, नई दिल्ली ।

सन्तोष कुमारी (1991) *''ए कम्प्रेटिव स्टडी ऑफ द एटीटयूडस टूवर्डस पापूलेशन एजूकेशन बाई श्री डिफरेन्टस डैमोग्राफी टीचर्स एण्ड पेरेन्टस''*, पी.एच.डी. थीसिस, एम.डी. युनिवर्सिटी

महेश, डी. (1994) *''नोलिज एटीटयूड एण्ड बीलिफ्स ऑफ सेकेण्डरी स्कूल टीचर्स एण्ड स्टुडेन्टस ऑफ बुन्देलखण्ड रीजन एबाउट पापूलेशन एजूकेशन''* इण्डियन एजूकेशनल रिव्यू (जनवरी–अप्रैल) 29 (182)

गोपाल और मानक (1994) *''पापूलेशन एजूकेशन ए स्टडी ऑफ एटीटयूड बाई श्री डिफरेन्स डेमोग्राफ्टस टीचर्स एण्ड पेरेन्टस,''* भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका'', 13(1) जन.–जून

सिंह, एन.पी. (1995) *''स्टडी ऑफ मुस्लिम लेडीज टूवर्डस पापूलेशन एजूकेशन इन स्कूल क्टीकूलम''*, एम.एड. डैजरटेसन ऑफ भोपाल यूनिवर्सिटी

भाटिया (2000) *''द इफेक्टस ऑफ वर्किंगनैस मेटेरियल स्टेटस ऑफ वूमेन ऑन देयर एटीटयूड टूवर्डस फैमिली पलानिंग एण्ड सोसल मेच्योरिटी''*, पेपर प्रजैन्टस इन नेशनल सेमिनार ओरगेनाइज्ड वाई.डी.ए.वी. कालिज कानपुर 23–24 जनवरी (2000).

बुच, एम.बी. (2000) *''फिफ्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन''*, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली।

नारायण, एम.आर. एल. (2003) *''एटीटयूड ऑफ बी.0एड. स्टूडेन्टस टुवर्डस पापूलेशन एजूकेशन ए स्टडी,''* इण्डियन जनरल ऑफ पापूलेशन एजूकेशन 20, 42–44.

गुप्ता, एस.पी. (2005) *''साख्यिंकीय विधिया''*, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद संस्करण तृतीय ।

यादव, चन्द्रशेखर (2006) *''जनसंख्या शिक्षा आर्थिक विकास में सहायक''*, कुरूक्षेत्र, ग्रामीण एवं विकास मंत्रालय नई दिल्ली, जुलाई 2006

यादव, दयाशंकर (2006) *''जनसंख्या स्थिरीकरण में शिक्षित महिलाओं की भूमिका''*, कुरूक्षेत्र, ग्रामीण एव विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, जुलाई 2006

कपिल, एच.के. (2007) *''साख्यिंकीय के मूल तत्व''*, विनोद प्रकाशन मन्दिर, आगरा

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

शिक्षा के माध्यम को लेकर गांधीजी के विमर्श की सम-सामयिकता

जितेन्द्र कुमार लोढ़ा*

> ''कोई भी भारतीय 'स्वप्न में भी नहीं' सोचता कि स्वतंत्रता मिलने के बाद अंग्रेजी देश की राष्ट्रभाषा अथवा शिक्षा, शासन की भाषा होगी और उपस्थित जन-समूह उनका समर्थन करता है।''[1]
> (गांधीजी के 1916 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में दिये गये सार्वजनिक भाषण से)

''परम सत्ता'' का दर्शन आज भी मानव की जिज्ञासा का प्रश्न है। वह सदैव इस क्षेत्र में प्रयत्नशील रहता है कि 'परम सत्ता' अर्थात् परमात्मा कौन है? यदि कोई है तो उसका स्वरूप क्या है? आज तक कोई उसे स्थूल रूप में नहीं देख पाया है, वह एक आदर्श विचार पुंज की भांति लोगों में व्याप्त है। इस दृष्टि से आदर्श विचारों के पटल पर जीवन जीने वाले महामानवों ने भी परमात्मा का दर्जा पाया है, इतिहास इस दर्शन तथ्य का साक्षी है। पूज्य बापू श्री महात्मा गांधी भी इस दर्शन तथ्य की एक कड़ी है। जिनका जीवन एवं विचारपुंज भविष्य की संततियों के लिए एक अमूल्य धरोहर है। हमारे देश व सम्पूर्ण विश्व में एक मत से यह स्वीकार किया जाता है कि गांधीजी एक महात्मा थे, एक संत थे, एक बड़े विचारक थे, उन्होंने भारत को आजाद करवाया। उन्होंने मानव जीवन के सभी क्षेत्रों पर अपने विचार रखे अनेक आधारभूत सिद्धान्तों की रचना की, हालांकि वे औपचारिक एवं प्रामाणिक रूप से कोई शिक्षाविद्, समाजशास्त्री, अर्थशास्त्री या भाषाविज्ञानी नहीं थे। लेकिन उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन में व्यवहारवादी ज्ञान की गंगा बहाई है, जिसकी सार्थकता आज भी है।

---

1. 'भाषा और शिक्षा', डॉ. राममनोहर लोहिया संकलन, मसूरी, सिद्ध प्रकाशन, पृ. 2

* विभागाध्यक्ष-'सेवारत शिक्षा' बुनियादी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, गांधी विद्या मन्दिर, सरदारशहर (चुरू), राजस्थान

गांधी जी का शिक्षा के माध्यम को लेकर, जो चिन्तन एवं विमर्श था, वह आज भी वैज्ञानिक, व्यावहारिक, मनोवैज्ञानिक तथा तार्किक धरातलों पर सत्य साबित होता है। इस संबंध में बापू का स्पष्ट मत था कि-''शिक्षा का माध्यम केवल और केवल मातृभाषा होना चाहिए तथा समस्त अन्य भाषाओं में उसका स्थान प्रथम होना चाहिए।''[2] स्वतंत्रता के संघर्ष के साथ-साथ बापू शिक्षा के माध्यम के संबंध में व्याप्त उथलेपन को लेकर काफी चिन्तित थे। इसलिए उन्होंने उसी समय कह दिया था कि-''मैं देश के प्रति अपना कर्त्तव्य समझता हूं कि शिक्षा के बारे में मेरे विचार सबको स्पष्ट रूप से मालूम हो जाये और उनमें से जो योग्य मालूम हों उन्हें वे ग्रहण करें- भाषा के माध्यम के संबंध में मेरा यह निष्कर्ष है कि ''भारत में उच्च शिक्षा, जो विदेशी भाषा में दी जाती है, जिससे हमारे राष्ट्र की अपार बौद्धिक व नैतिक हानि हुई है। इसके नुकसान की भयंकरता का हम ठीक से अंदाजा नहीं लगा सकते-ऐसी शिक्षा पाने वाले हम लोगों को इसका शिकार और न्यायाधीश दोनों बनना है, जो लगभग असम्भव काम हैं।''[3]

बापू का यह निष्कर्ष आज हमारे देश के सन्दर्भ में अक्षरशः सत्य साबित हुआ, क्योंकि भाषा मात्र अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि बहुत गहरा सम्प्रत्यय है। प्रत्येक भाषा के साथ कोई विशिष्ट सभ्यता, संस्कृति और आत्मबोध अभिन्न रूप से जुड़ा होता है। यह न समझने के कारण ही आज भारत में भाषा संबंधी विमर्श प्रायः उथला है। आज अंग्रेजी के बौद्धिक, प्रशासनिक और शैक्षिक क्रियाकलापों की भाषा बन जाने से भारतीय जन गण के लिए कठिन स्थिति बन गयी है। इस गम्भीर तत्व को उपेक्षित कर अंग्रेजी को बढावा देना विशेषाधिकार पाने की स्वार्थपरता मात्र है। किन्तु इसके दुष्परिणामों से कोई नहीं बच सकता। देश पर मुट्ठीभर लोगों द्वारा विजातीय विचार, सिद्धान्त, मुहावरे थोपना, अंग्रेजी का भी यहां सौंदर्य, सौष्ठव, अभिव्यक्ति के रूप में पंगु सा होना, उसकी जैसी-तैसी अभिव्यक्ति भर की काबिलियत से हमारे अंग्रेजी भाषियों का भी वास्तव में बौद्धिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक रूप से निर्बल होना, इस तरह एक 'गूंगे एलीट' (अभिजन) का बनना, आदि उन दुष्परिणामों के कुछ रूप हैं। अंग्रेजी का बढता अधिकार और तदनुरूप भारतीय भाषाओं की बढती विपन्नता, मातृदोह के पर्यावरण को बढाने के साथ-साथ राष्ट्रीय अस्मिता एवं सामाजिक-सांस्कृतिक एकता के लिए धीमे

2. गुप्ता रामबाबू, 'शिक्षा-दर्शन', रतन प्रकाशन मन्दिर, आगरा, 1993, पृ.सं. 151
3. मो.क.गांधी, ''मेरे सपनों का भारत'', सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट वाराणसी-2004 पृ. 90

जहर का काम कर रही है। अतएव सुचिन्तित विद्वानों व शिक्षाशास्त्रियों का भी यह मानना है कि भारत में शिक्षा का प्राथमिक माध्यम अंग्रेजी बनाना सर्वथा अनुचित है, इसके परिणाम अंततः घातक होंगे।[4]

शिक्षा के माध्यम को मातृभाषा के रूप में रखने के मनोवैज्ञानिक, व्यवहारिक एवं आवश्यकतापरक विचार को हमारे देश में व्यापक जनमानसीय व सुचिन्तनीय समर्थन एवं मान्यता न मिलने के कारण आज भारत में एक अंदरूनी औपनिवेशिकता बनी है।[4] नियम-कानूनों, ऊंचे पदों एवं विकास के अवसरों पर एक अंग्रेजीदां-सम्पन्न वर्ग का एकाधिकार-सा हो गया है। दूसरी और विशाल आबादी जो मातृभाषी है, जैसे-तैसे है- उनकी इच्छा, आवश्यकताओं व आंकाक्षाओं की व्यवहार में कोई पूछ नहीं है, क्योंकि उनका सम्प्रेषण बंद, संवाद अवांछित और भागीदारी बाधित है। वहीं दूसरी और अंग्रेजीदां तथाकथित अभिजन (एलीट) के पास सत्ता, व्यवसाय, शौहरत, कला एवं सुविधाओं में बड़े प्रतिशतांक की हिस्सेदारी है।

शिक्षा के माध्यम के विषय में हाल ही में कुछ वर्ष पूर्व एन.सी.ई.आर.टी. की नई पाठ्यचर्या पर दिल्ली के गांधी-शांति प्रतिष्ठान में दो दिवसीय विचार-विमर्श हुआ था। उसमें हमारे प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्रियों के साथ-साथ गम्भीर चिन्तकों, लेखकों, अधिकारियों समेत हर क्षेत्र के माने हुए प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया था। सर्वश्री धर्मपाल, मुनि महेन्द्र कुमार जी, निर्मल वर्मा, प्रो. सामधोंग रिम्पोदे, पं. विद्यानिवास मिश्र, आचार्य राममूर्ति, प्रो. धीरूभाई सेठ, नन्दकिशोर आचार्य, रमेशचन्द्र शाह, पवन कुमार गुप्ता, राधाबहन भट्ट, यशदेव शल्य, प्रो. मकरंद परांजये, प्रो. जे.पी.एस. ओबराय, क्लॉड अल्वारिस, अनिल बोर्डिया, प्रो. मधुसूरी प्रकाश,

प्रो. इम्तियाज अहमद, प्रो. अनिता सद्गोपाल एवं आनन्द स्वरूप आदि उसमें भागीदार थे। पूरी चर्चा अत्यन्त गंभीर थी। विभिन्न विषय-बिन्दुओं पर अलग से सघन विमर्श हुआ था। उस विमर्श से 'भाषा तथा शिक्षा संबंधों' पर ध्यान देने योग्य निष्कर्ष आये, जो बापू के वर्षों पूर्व के इस विषयक् संबंधी विमर्श से अक्षरशः मेल खाते है, किन्तु इसी से उन निष्कर्षों को पुराना व अनुपयुक्त कहना अनुचित होगा। क्योंकि उन्हें आज की स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में देखकर, गुनकर पाया गया है। विमर्श की रिपोर्ट के

4. शंकरशरण,''भाषा, समाज और शिक्षा'' भा.आ.शि.,एन.सी.ई.आर.टी.,नई दिल्ली, 2007 पृ.सं. 10

अनुसार- ''शिक्षा में अंग्रेजी का प्रसार बढाने का अर्थ न केवल भारत में हिंसा, फूट, दम्भ और अत्याचार को बढाने के बराबर है, बल्कि उसे सर्व स्वीकृत बनाने की चेष्ठा के बराबर भी है।'' साथ ही इस महत्वपूर्ण रिपोर्ट में यह भी स्वीकार किया गया कि ''अंग्रेजी को अधिकाधिक कम आयु से स्कूलों में पढाने की बात प्रभुता-सम्पन्न वर्गों की योजना है। यह भ्रम फैलाया गया है कि जो अंग्रेजी पढेगा वह नौकरी पायेगा और सम्पन्न होगा- इसीलिए विपन्नता और निराशा में डूबे लोगों ने मान लिया है कि प्रभुता अंग्रेजी में हैं। सच्चे शिक्षक का काम इस प्रकार के भ्रम को दूर करना है, न कि इसे बढावा देकर लोगों का और राष्ट्र का अहित करना और उन्हें कहीं का भी न रहने देने की स्थिति पैदा करना।''[5] आज के इस अंग्रेजीदां युग में हुए इस विमर्श में सभी विद्वानों ने एक मत से कहा कि ''भाषा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए अन्य भाषा (भारत के संदर्भ में अंग्रेजी) में शिक्षा देने से अल्पायु में ही बच्चों की बुद्धि का विकास रूक जाएगा,'' लगभग यही बात पहले श्री अरविंद जैसे उद्भट विद्वान ने कही थी, जिनकी सम्पूर्ण शिक्षा-दीक्षा यूरोप में ही हुई थी-''मातृभाषा ही शिक्षा का उचित माध्यम है, इसलिए बच्चे की पहली शक्तियां उसी पर अधिकार करने में खर्च होनी चाहिए। जब मानसिक उपकरण किसी भाषा को आसानी से और तेजी से ग्रहण करने के लिए काफी विकसित हो जाएं तब कई भाषाओं के साथ परिचय कराने का समय होता है, उस समय नहीं जब उसे जो कुछ सिखाया जाए उसे वह उसे कठिनाई के साथ अधूरे रूप में पकड़ पाता है।[6]

शिक्षा के माध्यम संबंधी विमर्श के मंथन से अहसास होता है कि गांधी जी ने रोग की जड़ को पहचान लिया था। जिस देश का सारा पाठ्यक्रम उसके पीछे की सोच, पाठ्य पुस्तकें एवं शिक्षण-विधियां विदेशी भाषा में हो, विदेशी इतिहास और सभ्यता, वहां के साहित्य और रीति-रिवाज विदेशी लोगों के दृष्टिकोण के अनुसार हो, तो वह देश 'नकलची' नहीं होगा तो और क्या होगा। 20 अक्टूबर, 1917 को द्वितीय गुजराती शिक्षा सम्मेलन में बोलते हुए उन्होंने कहा था कि ''विदेशी भाषा में शिक्षा पाने से दिमाग पर जो बोझ पड़ता है, वह असह्य है।... इससे हमारे स्नातक अधिकतर निकम्मे, कमजोर

5. राजीव वोरा-''शिक्षा स्वराज की ओर'',स्वराजपीठ एवं एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित विमर्श की रपट (दिल्ली स्वराज पीठ-2000) पृ.सं. 20-21

6. श्री अरविन्द, शिक्षा के आयाम (पांडिचेरी: श्री अरविंद सोसायटी, 1986) पृ.सं. 15

निरूत्साही, रोगी व कोरे नकलची बन जाते हैं। उनमें खोज विचार करने की शक्ति, साहस, धीरज, वीरता, निडरता और अन्य गुण क्षीण हो जाते हैं।''[7] बताइए, किसी राष्ट्र नेता में मनोविज्ञान की इससे अधिक और क्या समझहोगी? वह अपने देश को इस तरह निकम्मा, कमजोर और नकलची होते हुए कैसे सहन करेगा? तथाकथित एलीट वर्ग (अभिजन) जहां उस समय अंग्रेजी भाषा व अंग्रेजों की स्तुति कर रहा था, एक अंदरूनी औपनिवेशकता को जन्म दे रहा था, जिसकी जड़े आज भी दिखाई दे रही है, उस समय गांधी जी इस प्रकार के दुष्चक्रों से भलीभांति परिचित थे। वे जानते थे कि यह दुष्चक्र भारत को अपनी भारतीयता से काटने का तथा उसे मानसिक रूप से पराश्रित करने का था। आज यह बात भी सिद्ध होती है- देश में अब ऐसे असंख्य महंगे स्कूल है, जहां मातृभाषा में बात करना मना ही नहीं, वरन् दंडनीय भी है। जी हां संविधान में दर्ज राष्ट्रभाषा में बात करना दंडनीय है। बच्चों को देशी भाषाओं से प्लेग की तरह बचा कर रखा जाता है। इतने जतन व जिल्लत के बाद वह स्थिति आती है, जब माता-पिता गर्व से बोलते है- हमारा बच्चा हिन्दी (या गुजराती....) नहीं जानता, वह फलां स्कूल में पढता है- इस गर्विल सूचना का समापन अपनी निर्दोष अंग्रेजी से करते है- ''यू नो उस स्कूल में हिन्दी स्पीकिंग पर फाईन चार्ज होता है- दट्स डिस्पिलिन''। भाषायी दिवालियापन का इससे बड़ा नजारा क्या होगा? जिस देश की माएं अपने जन्मात बच्चों को टूटें-फूटें गिनती के चन्द शब्द सिखाने में अपने आपको गौरवान्वित समझती है, बाहर से आने वाले मेहमानों के समक्ष बालक के तोता रंटत अंग्रेजी ज्ञान को अभिमान के साथ प्रदर्शित किया जाता है बेटा डोगी कहां है?, आपकी नोजी (नाक) कहां है?, टीथ दिखाओ- हैंड वाश करो- हद तो तब होती है जब अंग्रेजी ज्ञान न होने पर हिन्दी को अंग्रेजी की शैली में बोलकर उस दिशा की क्षतिपूर्ति कर दी जाती है।

भाषायी दृष्टिकोण से देश की आज की परिस्थितियों को देखकर ऐसा लगता है कि बापू का शिक्षा व शिक्षा प्रणाली संबंधी मसौद 'बुनियादी शिक्षा' कितना अद्यतन व वैज्ञानिक था-परन्तु हमारे देश में इसका नाम लेने से लोग शरमाते है। हम लोगों ने मशीन विदेशों से ली, पूंजी विदेशों से ली पर अब हमें शब्दावली भी विदेशों की चाहिए। बुनियादी तालीम को पश्चिम के शिक्षाशास्त्रियों ने जब 'वर्क एक्सपीरियंस' का नाम

7. कैलाशचन्द्र व्यास, ''गांधी जी के शैक्षिक विचारों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण,'' भारतीय आधुनिक शिक्षा, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली-2001 पृ.सं. 43

दिया तो हम लोग उसकी ओर आकृष्ट हुए। महान गांधीवादी एवं गुजरात राज्य के पूर्व राज्यपाल श्रीमन्नारायण जी अपने काल 1949 में विश्व भ्रमण के लिए गये थे तब वे 80 वर्षीय प्रो. डयूई से न्यूयार्क में मिले तथा उन्होंने डयूई को बापू की बुनियादी तालीम का साहित्य भेंट किया। उसे देखकर डयूई ने कहा कि ''गाँधी जी को यह बात कैसे सूझी कि उत्पादन के साथ-साथ शिक्षा चले। बुनियादी तालीम ही शुद्ध शिक्षाशास्त्र है।''[8] सुनकर बड़ा अच्छा लगता है कि वैश्विक शिक्षाशास्त्री यह मानते है कि बुनियादी शिक्षा वास्तविक शिक्षा है,

शिक्षा का माध्यम मातृभाषा ही होना चाहिए- लेकिन हमारे देश के लोग कहते है कि यह बापू की धुन है-

चलो बच्चों को पढायी के साथ-साथ काम कराओं तथा अपनी मातृभाषाओं में पढाओं। इस प्रकार की तथाकथित भाषायी संकीर्णताओं के चलते आज हम भाषायी विकलांगता के शिकार हो गये। यह विकलांगता मातृभाषा की उपेक्षा और अंग्रेजी सीखने पर सारा जोर देने से बनी। इस संबंध में महादेवी वर्मा का कहना प्रासंगिक है-''जिस तरह कोई विकलांग किसी बात का अहंकार नहीं कर सकता, उसी तरह अपनी वाणी के अभाव में कोई व्यक्ति कुछ नहीं कर सकता।''[9]

विदेशी भाषा के प्रयोग के संबंध में कुछ लोगों का तर्क है कि अन्तर्राष्ट्रीय संप्रेषण और दुनिया का जानने व समझने के लिए अंग्रेजी आवश्यक है- विश्वपटल पर भाषा से अधिक महत्व इस बात का होता है कि बोल कौन रहा है, और क्या बोलने वाला यदि महत्वपूर्ण देश या व्यक्ति है तो वह किसी भाषा में बोले उसकी बात को दर्जनों भाषाओं में रूपान्तरित होकर करोड़ों लोगों द्वारा आपसे-आप सुनी-समझी जाती है। ऐसे तर्क पर बापू ने बार-बार यही कहा था-''उनको गरज होगी तो वे मेरी बात सुनेगें। मैं अपनी बात अपनी भाषा में कहूगाँ। जिसको गरज होगी, वह सुनेगा'', तथा ''...यदि मैं बोलना जानता हूं और मेरे बोलने में कोई ऐसी बात रहेगी जिससे वाइसराय लाभ उठा सकें तो

8. श्रीमन्नारायण,''गांधी विचार का अर्थशास्त्र,'' गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद 1969 पृ.सं. 62-63

9. हिन्दुस्तान, नई दिल्ली 14 सितम्बर (हिन्दी दिवस) 1997

10. महात्मा गांधी, ''अखिल भारतीय एक भाषा व एक लिपि सम्मेलन,'' लखनऊ में, 19 दिसम्बर-1916, डॉ. लोहिया संकलन-''भाषा और शिक्षा: महात्मा गाँधी,'' मसूरी सिद्ध प्रकाशन पृ- 13, 12

वह अवश्य मेरी बातें हिन्दी में बोलने पर भी सुन लेंगे।''[10] इस संबंध में एक दूसरा तर्क एच.वाई. शारदा प्रसाद का प्रासंगिक लगता है- उनके अनुसार आज लोग अंग्रेजी भाषा के पक्षपाती अन्तर्राष्ट्रीय समझ व सम्प्रेषण के लिए नहीं बल्कि अपना अन्तर्राष्ट्रीयकरण करने के लिए करते है- ''अंग्रेजी आज किसी प्रगति के पासपोर्ट के रूप में अधिक देखी जाती है। अनेक लोगों के लिए निस्सन्देह उस यात्रा की पहली सीढी के रूप में होती है जिसकी परिणति अमेरिका में ग्रीन कार्ड प्राप्त करने में होती है।''[11]

समग्र विवेचन के बाद यह निष्कर्ष पुष्ट हो चुका है कि 'शिक्षा के माध्यम' के संबंध में गांधी जी का विमर्श न केवल गहन व दूर-दृष्टि पर आधारित हैं बल्कि वैज्ञानिक, व्यवहारिक तथा शिक्षाशास्त्र के तमाम आधारों से सराबोरित है- इसलिए यह विमर्श तार्किक व सम-सामयिक भाषायी पर्यावरण की शुद्धि का आधार है। बापू ने अपनी पुस्तक 'मेरे सपनों का भारत' में स्पष्ट लिखा है कि ''मेरा निज अनुभव यह कहता है कि भाषा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए, विदेशी भाषा का बोझ असह्य व जिल्लप भरा है- आज हमारे देश में अंग्रेजी का विचारहीन मोह है, जिससे हम निर्बल व शक्तिहीन बन गये है। आज भारत जिन वहमों का शिकार है, उनमें सबसे बड़ा वहम यह है कि सफलता व तर्कशुद्ध चिन्तन की क्षमता के विकास के लिए अंग्रेजी आवश्यक है। जबकि अंग्रेजी शिक्षा-प्रणाली का सबसे बड़ा सुनियोजित बीजारोपित भ्रम है। शिक्षा के विदेशी माध्यमों ने हमारी देशी भाषाओं की प्रगति और विकास को रोक दिया है। अन्त में बापू ने बड़े स्पष्ट व कड़े शब्दों में कहा है कि- ''अगर मेरे हाथ में तानाशाही सत्ता हो, तो मैं आज से ही विदेशी माध्यम के जरिये दी जाने वाली हमारे लड़कों और लड़कियों की शिक्षा बन्द कर दूं और सारे शिक्षकों और प्रोफेसरों से यह माध्यम तुरन्त बदलवा दूं या उन्हें बरखास्त करा दूं। मैं पाठ्य पुस्तकों की तैयारी का इन्तजार नहीं करूगाँ। वे तो माध्यम परिवर्तन के पीछे-पीछे अपने-आप चली जायेंगी। यह एक ऐसी बुराई है, जिसका तुरन्त इलाज होना चाहिए।''[12] आगे चलकर गांधी जी ने लिखा है कि ''देश के नौजवानों पर डाला गया विदेशी भाषा के माध्यम का घातक बोझ इतिहास में एक सबसे बड़ा दोष माना जाएगा। इस माध्यम ने राष्ट्र की शक्ति हर ली है, विद्यार्थियों

11. ''अंग्रेजी शिक्षा का दूसरा पक्ष,'' उद्धत, हिन्दुस्तान, नई दिल्ली, 26 अप्रेल 2000.

12. महात्मा गाँधी,''मेरे सपनों का भारत'', सर्व-सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2004 पृ. सं. 89 से 101 तक.

की आयु घटा दी है, उन्हें आम जनता से दूर कर दिया है और शिक्षण को बिना करण खर्चिला व बनावटी दिया है। अगर यह प्रक्रिया अब भी जारी रही तो जान पड़ता है कि वह राष्ट्र की आत्मा को नष्ट कर देगी। इसलिए शिक्षित भारतीय विदेशी माध्यम के भयंकर वशीकरण से बाहर निकल जाए, उतना ही उनका और जनता का लाभ होगा–''

लेकिन इस सन्दर्भ में हमारे राष्ट्र की वर्तमान दशा देखे तो परतंत्र काल से भी बुरी दशा है– गांधी जी के भाषायी विमर्श को, जो वैज्ञानिक व कसौटी पर जांचा और समझा हुआ था– उसे आज राष्ट्र के नेतृत्वकारी शैक्षिक संस्थान व हमारे शिक्षा–मन्दिर सब कुछ समझते हुए भी भूला बैठे है। नाम लेना उचित नहीं है, क्योंकि आमजन इस तथ्य को जानता है कि ''बाड़ ही खेत को खा रही है'' इन संस्थानों में अंग्रेजी ही विद्वता का प्रमाण है। खेद का विषय यह है कि शैक्षिक गुणवत्ता का प्रमाणन देने वाले संस्थान भी राष्ट्रभाषा के माध्यम से शिक्षा देने वाले संस्थानों को दोयाम दर्जा प्रदान करते है। शिक्षा संस्थानों की भाषा माध्यम को लेकर ऐसी दशा क्यों है? प्रत्युत्तर में हिन्दी की प्रतिष्ठित पत्रिका कादम्बिनी में दिल्ली विश्वविद्यालय के अंग्रेजी के प्राध्यापक हरीश त्रिवेदी के प्रकाशित आलेख 'अंग्रेजी का बोल–बाला' में वर्णित विचार एकदम सटीक व समीचीन है– ''हम आपस में अंग्रेजी इसलिए नहीं बोलते कि ऐसा करना आवश्यक है या सुविध ाजनक है बल्कि यह दिखाने के लिए बोलते हैं कि हम तुम से बढकर हैं और बढकर ही रहेंगे। हम आपस में अंग्रेजी बोलते है धौंस जमाने के लिए, दूसरों को नीचा दिखाने के लिए बात बात पर यह दर्शाने के लिए देश का एक छोटा सा वर्ग है–जो सम्पन्न है, सभ्रांत है, शासक है और शेष बहुत बड़ा दूसरा वर्ग है जो विपन्न है, तथाकथित रूप से गंवार है, शासित है। इस ऐतिहासिक विडंबना को दिवगंत कवि रघुवीर साहय ने बहुत ही सटीक ढंग से पकड़ा था अपनी दो पंक्तियों की कविता 'अंग्रेजी' (1972) में–

''अंग्रेजों ने अंग्रेजी पढाकर प्रजा बनाई,
अंग्रेजी पढाकर अब हम राजा बना रहे हैं।।''

तभी तो आज के भारत में हर एक व्यक्ति की लालसा है कि वह अंग्रेजी सीखे और अंग्रेजी बोल सके। इतना प्रचंड है अंग्रेजी का बोल बाला।[13]–'' जिस तरह आज के भारत में दूध–छाछ–राबड़ी के स्थान पर पैप्सी–कोला गांव–ढाणी तक पहुंच गयी है– ठीक उसी तर्ज पर अंग्रेजी सीखाने के आधे–अधूरे संस्थानों ने भी धीरे–धीरे गांव–ढाणी

13. हरीश त्रिवेदी, ''अंग्रेजी का बोलबाला'' कादम्बिनी, वर्ष 45, अंक 9, जुलाई 2005 पृ. सं. 18.

तक अपनी पैठ बैठा कर, गांधी के गांव व स्वराज की धारणा को घुण लगाते हुए, राष्ट्र को शक्तिहीन बनाने के कुचक्र जारी रखे हुए है।

इस विमर्श का यह आशय कदापी नहीं कि गांधी जी और इस दिशा के समर्थक अंग्रेजी व उसके श्रेष्ठ साहित्य के विरोधी है- उनका मानना है कि भारत को अपनी ही जलवायु, दृश्यों, साहित्य एवं भाषा में तरक्की करनी होगी, फिर चाहे वे अंग्रेजी से हिनेत्तर ही क्यों न हो। हमें और हमारे बच्चों को तो अपनी विरासत बनानी चाहिये। अगर हम दूसरों को विरासत लेंगे तो अपनी नष्ट हो जाएगी। मैं तो चाहता हूं कि राष्ट्र अपनी भाषा का भण्डार भरे और इसके लिए संसार की अन्य भाषाओं का भण्डार भी अपनी देशी भाषाओं से संचित करे। मेरा यह कहना नहीं है कि हम शेष दुनिया से बच कर रहे या अपने आस-पास दिवाल खड़ी कर दें। लेकिन मैं यह जरूर कहता हूं कि पहले अपनी संस्कृति का सम्मान करना सीखे और उसे आत्मसात करें। दूसरी संस्कृतियों के सम्मान की, उनकी विशेषताओं को समझने व स्वीकार करने की बात उसके बाद ही आ सकती है, उसके पहले कभी नहीं..... इस संबंध में बापू आगे कहते है कि ''मेरी यह दृढ़ मान्यता है कि हमारी संस्कृति में जैसी मूल्यवान निधियां हैं, वैसी किसी दूसरी संस्कृति में नहीं हैं। हमने उसे पहचाना नहीं है, हमें उसके अध्ययन का तिरस्कार करना, उसके गुणों की कम कीमत करना सिखाया गया है। अपने आचरण में उसका व्यवहार करना तो हमने लगभग छोड़ ही दिया है। आचार के बिना कोरा बौद्धिक ज्ञान उस निर्जीव देह की तरह है, जिसे मसाला भर के सुरक्षित रखा जाता है। वह शायद देखने में अच्छा लगता है किन्तु उसमें प्रेरणा देने की शक्ति नहीं होती।''

आशय स्पष्ट है- गांधीजी विदेशी भाषाओं के व उसकी जानकारी तथा सिखलाई के विरोधी नहीं थे, उनका विरोध मातृभाषा की जगह को हड़पने वाली विदेशी भाषा के स्वरूप से है- स्वयं गाँधी जी ने कहा कि ''अगर अंग्रेजी मातृभाषा को हड़पना चाहती है, जिसकी वह हकदार नहीं हैं तो मैं उससे सख्त नफरत करूगां। यह बात मानी हुई है कि अंग्रेजी आज सारी दुनिया की भाषा बन गयी है। इसलिए मैं उसे दूसरी जुबान के तौर पर जगह दूंगा- लेकिन विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों व स्कूलों में नहीं। वह कुछ लोगों के सीखने की चीज हो सकती है, लाखों करोड़ों की नहीं, अपने सार्थक मत के अन्त में बापू कहते है- जिस तरह हमारी आजादी को जबरदस्ती छीनने वाले अंग्रेजों की सीयासी हुकूमतों को हमने सफलतापूर्वक इस देश से निकाल दिया, उसी तरह हमारी

संस्कृति को दबाने वाली अंग्रेजी भाषा को भी हमें यहां से निकाल बाहर करना चाहिए, हां व्यापार और राजनीति की अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के नाते समृद्ध अंग्रेजी का अपना स्वाभाविक स्थान हमेशा कायम रहेगा।''[14]

अत: स्पष्ट है कि गांधी जी शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा को केन्द्र में रखकर ही शिक्षा और देश के बौद्धिक-सांस्कृतिक विकास को चाहते थे- आज के भाषायी पर्यावरण के स्वरूप को देख कर विदेशी भाषाओं (विशेषकर अंग्रेजी) की भूमिका को सीमित करने की आवश्यकता है- इससे मुट्ठी भर लोगों को हानि हो सकती है, जबकि विशाल जनमानस राहत की सांस लेगा तथा व्यापक पैमाने पर राष्ट्र में रचनात्मक संसार का उदय होगा- यह विमर्श जैसे सौ वर्ष पूर्व भी सच था, आज भी है, चाहे इसे देने वाले महापुरुष अब हमारे बीच नहीं दिखते, उनके सपनों के भारत में आज भी मातृभाषा को अपने सही स्थान की तलाश है।

14. महात्मा गांधी, ''मेरे सपनों का भारत'', सर्व सेवा-संघ प्रकाशन, वाराणसी, 2004 पृ. सं. 101

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

शोध टिप्पणी/संवाद

स्ववित्त पोषित अध्यापक-संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण-अभिवृत्ति, आत्म-प्रत्यय एवं जीवन मूल्यों पर अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रभाव

अश्वनी कुमार गौड़*

प्रस्तावना

किसी भी देश के विचारायुक्त शैक्षिक पुनर्निर्माण में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान शिक्षक का है। प्राचीन काल में यह धारण थी कि शिक्षक जन्मजात होते हैं परन्तु बीसवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में विश्व के लगभग सभी देशों में यह स्वीकार किया जाने लगा कि प्रशिक्षण देकर श्रेष्ठ व सुयोग्य अध्यापक तैयार किये जा सकते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हमारे देश में शिक्षक शिक्षा संस्थाओं का विकास तीव्र गति से हुआ जहाँ 1947 में माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं की संख्या मात्र 25 थी, वहीं दिसम्बर 2008 तक इनकी संख्या बढ़कर लगभग 4248 हो गई है। आज स्ववित्त पोषित माध्यमिक शिक्षक संस्थाएं शिक्षक-शिक्षा के क्षेत्र में महती भूमिका निभा रही है जिनका अध्ययन करना जरूरी है।

भारत में स्ववित्त पोषित शिक्षक-शिक्षा संस्थाओं की स्थापना

विश्विद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष प्रो. सुखदेव थोराट के अनुसार स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रम को चलाने का विचार एक सर्वोत्तम विचार है। इसके तहत सरकार की शिक्षा के क्षेत्र में धन की लगातार कटौती से जी.डी.पी. के 6 प्रतिशत के बराबर खर्च का लक्ष्य प्राप्त करने की योजना पर पानी फिरता दिख रहा है। क्योंकि विश्वविद्यालय अनुदान

* एसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षा) दयालबाग शिक्षण संस्थान (मानद विश्वविद्यालय) दयालबाग, आगरा, उत्तर प्रदेश

आयोग (यू.जी.सी.) के दस्तावेजों के अनुसार बीते एक दशक में 1993-94 से 2003-04 के मध्य उच्च शिक्षा के मद में 21 प्रतिशत की कटौती की गयी। 'राष्ट्रीय ज्ञान आयोग' के अध्यक्ष सत्येन गणेश पित्रोदा के अनुसार 1991 में उच्च शिक्षा पर जहाँ 1.6 प्रतिशत खर्च किया जा रहा था वहीं 2003-04 में घटकर 1.2 प्रतिशत ही रह गया। यू.जी.सी. अध्यक्ष के अनुसार मौजूदा स्थिति में शिक्षा क्षेत्र की मात्र 40 प्रतिशत संस्थाओं पर ही सरकार का नियन्त्रण है जबकि निजी क्षेत्र का 60 प्रतिशत संस्थाओं पर नियंत्रण है। इन आंकड़ों के आधार पर कहा जा सकता है कि सरकार अपने वित्तीय समस्या से छुटकारा पाना चाहती है। इस सम्बन्ध में अर्थशास्त्रियों का मानना है कि उच्च शिक्षा को अधिक धन की आवश्यकता है तथा छात्र प्रोफेशनल एवं तकनीकी शिक्षा प्राप्त करके समाज में उच्च स्तर, उच्च आय एवं उच्च उपभोग करना चाहते हैं, तो इन सबका एक हल है कि निजी क्षेत्र में स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रमों को संचालित किया जाये।

उच्च शिक्षा में स्ववित्त पोषण की प्रक्रिया तो बाद में प्रारम्भ हुई किन्तु इस प्रकार की सरकारी सोच के संकेत 1980 के दशक से ही दिखाई देने लगे थे जबकि भारत में उच्च शिक्षा को विधिवत् रूप में स्ववित्त पोषित बनाने की योजना 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986)' में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

सर्वप्रथम वर्ष 1991 में ही विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने कालेजों व विश्वविद्यालयों के अनुदानों में कटौती करने का निर्णय लिया। इसी क्रम में केन्द्र सरकार का निर्देश पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गठित पुनैया समिति ने 1993 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में उच्च शिक्षा में स्ववित्त पोषण पर अपना मत प्रकट करते हुए कहा कि ''कोई भी समाज जो गरीबी और गैर बराबरी से जूझ रहा हो वह विश्वविद्यालयों में हो रही फिजूलखर्ची के सब्सिडीकरण का समर्थन नहीं कर सकता।'' इसलिए उच्च शिक्षा पर हो रहे वास्तविक खर्च का बड़ा हिस्सा उनसे वसूला जाना चाहिए। केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के फीस ढांचे की समीक्षा और सुधार के लिए गठित आनन्द कृष्णन समिति की संस्तुतियों में भी उच्च शिक्षा के खर्च को अभिभावकों पर डालने की मंशा व्यक्त की गयी। पूर्व वित्त मंत्री श्री पी. चिदम्बरम के काल में वित्त मंत्रालय ने एक श्वेतपत्र जारी करके उच्च शिक्षा को नॉन मेरिट गुड्स की श्रेणी में रखा। उसके पीछे सरकार का तर्क था कि उच्च शिक्षा से केवल उसी वर्ग को लाभ पहुँचता है जो इसे प्राप्त करता है। देश या समाज को इससे प्रत्यक्षत: कोई लाभ नहीं होता है।

अत: उच्च शिक्षा के अनुदानों में कटौती की जाती रही है। इसी संदर्भ में ए. कुमार ने स्ववित्त पोषित संस्थाओं के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि ''आज सरकार ने निजी क्षेत्र की भी शिक्षा उपलब्ध कराने का कार्य सौंप दिया है। निजी क्षेत्र विद्यार्थियों से ऊँचा शुल्क लेकर लाभ कमाने की दृष्टि से शिक्षा के लाभकारी भाग व्यावसायिक शिक्षा पर धन निवेश करके स्ववित्त पोषित संस्थाओं के संचालन हेतु उत्साहित है''। किन्तु सरकार का यह उत्तरदायित्व है कि वह निर्धारित मानकों के अनुसार स्ववित्त पोषित संस्थाओं के रख-रखाव पर नियंत्रण रखे।

स्ववित्त पोषित संस्थाओं की अवधारणा

स्ववित्त पोषित की अवधारणा है कि जो व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करे वही उसका मूल्य अदा करे। अर्थात अर्थशास्त्र की भाषा में जो व्यक्ति वस्तु का उपयोग करेगा वही उसका मूल्य चुकायेगा। इसे इस प्रकार भी परिभाषित किया जाता है कि स्ववित्त पोषण संस्थागत व्ययों के वित्तीय स्रोतों को बढ़ाने एवं उन्हें मजबूत बनाने की प्रक्रिया है जो संस्थायें स्वयं के आर्थिक प्रयासों के परिणामस्वरूप विकसित है स्ववित्त पोषित संस्थायें कहलाती है।

स्ववित्त पोषित संस्थाओं की आवश्यकता

रूमकी वसू ने इनकी आवश्यकताओं के कारणों पर प्रकाश डालते हुए निम्न बिन्दुओं को प्रस्तुत किया है-सरकार वित्तीय संकट के कारण अब शिक्षा को अनुदान प्रदान करने के उत्तरदायित्व से पीछे हट रही है। परिणामस्वरूप निजी क्षेत्रों द्वारा स्वंय के संसाधनों जुटा कर विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय में लाभकारी शिक्षा उपलब्ध कराने का महत्व बढ़ रहा है।

कुछ समय से इस विचार पर वहस हो रही है कि उच्च एवं तकनीकी शिक्षा को वित्त एवं सब्सिडी की कोई आवश्यकता नहीं है जबकि तथ्य यह है कि शैक्षिक कार्यक्रमों को चलाने के लिए विश्वविद्यालयों को दिये जाने वाले अनुदान पर्याप्त नहीं है। अत: आवश्यकता है कि निजी क्षेत्र विश्वविद्यालयों के बढ़ते हुये कोषों को ध्यान में रखकर समाज की आवश्यकताओं के अनुसार निजी संसाधनों द्वारा स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रम का संचालन करें।

एक तकनीकी बिंदु यह है कि विश्वविद्यालयों में छात्रों की बढ़ती हुई भीड़ के अनुरूप वित्त पोषित शिक्षकों के नये पद सृजित न होने के कारण विश्वविद्यालयी

शिक्षकों का कार्यभार बढ़ता जा रहा है जिससे शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित हो रही है। अत: आवश्यकता है कि शिक्षा की गुणवत्ता बनाये रखने के लिये निजी क्षेत्र शिक्षा उपलब्ध कराने के अवसर प्रदान करें।

स्ववित्त पोषित संस्थाओं में संचालित बी.एड. पाठ्यक्रम

स्ववित्त पोषित संस्थाओं में सभी प्रकार के पाठ्यक्रम न चलाकर ऐसे पाठ्यक्रम को शामिल किया गया है, जो वित्तीय रूप से संस्थाओं को जीवन प्रदान करते हैं अथवा दीर्घकालीन आय प्रदान करते हैं। यही कारण है कि ये संस्थाएं आधुनिक प्रकृति वाले अभियांत्रिकी, चिकित्सा, प्रबन्ध, तकनीकी एवं शिक्षक प्रशिक्षण से सम्बन्धित आदि पाठ्यक्रमों के संचालन को वरीयता प्रदान करते हैं। आज विश्वविद्यालय एवं वित्तीय सहायता प्राप्त संस्थाओं की भांति स्ववित्त पोषित संस्थाएं भी शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाकर भावी छात्रों को एक वर्षीय बी. डी. की डिग्री प्रदान कर रही हैं। इन संस्थाओं में भी राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (NCTE) 1973 के अनुसार बी. डी. पाठ्यक्रम को तीन क्षेत्रों में विभाजित किया गया है और इन तीन क्षेत्रों के अन्तर्गत व पाठ्यक्रमों को सम्मिलित करने की संस्तुति की गयी है जिसे निम्न तालिका में दर्शाया गया है:

तालिका-1

माध्यमिक स्तर की अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम का प्रारूप

क्षेत्र	महत्व	पाठ्यक्रम का नाम
1. शिक्षण कला सिद्धान्त (Pedagogical Theory)	20%	1. भारतीय समाज की नवीन प्रवृत्तियों में अध्यापक शिक्षा 2. शिक्षा मनोविज्ञान 3. किशोरावस्था का मनोविज्ञान 4. आवश्यकता एवं सुविधानुसार विशिष्ट पाठ्यक्रम
2. समाज के अनुरूप कार्य प्रणाली (Working with the community)	20%	1. सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप कार्य परिस्थितियां

3. पाठ्यवस्तु शिक्षण विधियां अभ्यास तथा प्रयोगात्मक कार्य (Content-cum-Methodology Practice and Practical Work)	60%	1. मूल प्रशिक्षण कार्यक्रम 10 प्रतिशत 2. विशिष्ट विषय के शिक्षण का प्रशिक्षण 20 प्रतिशत 3. विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम व्यावसायिक विषयों या माध्यमिक स्तर का विशिष्ट प्रशिक्षण 10 प्रतिशत
योग	**100%**	4. सम्बन्धित प्रयोगात्मक कार्यक्रम 10 प्रतिशत **9 पाठ्यक्रम**

उक्त तालिका से ज्ञात होता है कि NCTE की संस्तुतियों के अनसुार बी.एड. पाठ्यक्रम में सैद्धन्तिक पक्ष को 40 प्रतिशत तथा व्यावहारिक पक्ष को 60 प्रतिशत महत्व दिया जाना चाहिए। जबकि इन संस्थाओं में संचालित बी.एड. के प्रचालित कार्यक्रम में सैद्धान्तिक पक्ष को 60 प्रतिशत से भी अधिक अर्थात् 70 प्रतिशत तथा व्यावहारिक पक्ष को 30 प्रतिशत ही महत्व दिया जाता है। यही कारण है कि बी.एड. के व्यावहारिक पक्ष अथवा अभ्यास शिक्षण कार्यक्रम को कम महत्व दिये जाने से भावी शिक्षकों के व्यक्तित्व में शिक्षण अभिवृत्ति, आत्म प्रत्यय एवं जीवन मूल्य जैसी अनेक विशेषताओं को समुचित विकास नहीं हो पा रहा है। इसलिए यहाँ पर अध्ययन के औचित्य को जानना समीचीन होगा।

अध्ययन का औचित्य

शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम भावी शिक्षकों को अच्छा एवं प्रभावशाली बनाने का एक अच्छा ढंग है जिससे भावी पीढ़ी को इस प्रकार शिक्षित किया जा सके कि वह अच्छे एवं उत्पादक नागरिक बना सकें। प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्देश्य भावी शिक्षकों की शिक्षण के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति, सकारात्मक आत्म प्रत्यय एवं मानव जीवन में संबंधित मूल्य को विकसित करके उनके व्यवहार में इस प्रकार परिवर्तन लाना होता है, जिससे वह राष्ट्रीय शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति करने में सफल हो सकें।

चूँकि शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना होता है। और उसका केन्द्र बिन्दु भावी शिक्षक ही होते हैं। अत: बालक के विकास उन्नति तथा सफलता का

उत्तरदायित्व भावी शिक्षकों पर ही निर्भर होता है। इसी कारण **डी.ए. प्रेसकाट** ने भावी शिक्षकों को ''अल्टीमेटम एजेंट ऑफ एजूकेशन'' कहा है। शिक्षकों की योग्यता उसकी प्रशिक्षण की योग्यता पर निर्भर करती है। अत: अच्छे शिक्षकों के निर्माण के लिए अच्छे शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम की आवश्यकता होती हैं। **गारफोथ** ने इस संदर्भ में कहा कि डाक्टर, शिल्पकार एवं धार्मिक अपने क्षेत्र का औपचारिक प्रशिक्षण प्राप्त न करके भी अपना कार्य जारी रख सकते हैं। किन्तु एक अध्यापक जिसने योग्य शिक्षक प्रशिक्षकों से किसी भी प्रकार का औपचारिक प्रशिक्षण प्राप्त न किया हो ऐसा प्रशिक्षित अध्यापक उपयुक्त अन्य व्यवसायी व्यक्तियों की तुलना में अधिक हानिकारक सिद्ध होगा वस्तुत: भावी शिक्षकों के व्यक्तित्व का विकास उस प्रशिक्षण पर ही निर्भर करता है। जिसे भावी शिक्षकों ने अपने प्रशिक्षण काल में ही प्राप्त किया है।

भारत में राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत केन्द्र एवं राज्य सराकर के द्वारा ही शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं को वित्तीय सहायता प्राप्त करके भावी शिक्षकों को प्रशिक्षण उपलब्ध कराने का कार्य किया जाता था। यही कारण था कि आगरा मण्डल में महाविद्यालय स्तर पर भावी शिक्षकों को प्रशिक्षण प्रदान करने के लिये मात्र वित्त पोषित एवं स्वायत्तशासी संस्थाएं ही उपलब्ध थीं। किन्तु वर्ष 1987 से उच्च शिक्षा को पर्याप्त संसाधनों का उचित आवंटन मिलने के कारण स्ववित्त पोषित संस्थाओं को बहुतायत में खोला गया है। निष्कर्षत: आगरा मण्डल में आज वित्त पोषित, स्वायत्तशासी एवं स्ववित्त पोषित शिक्षण संस्थाएं उपलब्ध हैं किन्तु एक ओर जहां स्ववित्त पोषित संस्थाओं की स्थाई मान्यता, टी.ए., डी.ए., सी.पी.एफ., जी.पी.एफ., ग्रेच्युटी, पेंशन यू. जी.सी वेतन मान का अभाव, शिक्षकों की नियुक्ति में विश्वविद्यालय के नियमों की अवहेलना, समृद्ध पुस्तकालयों का न होना, अपूर्ण भवन, अपर्याप्त फर्नीचर, प्रयोगशाला, क्रीडांगन, प्रशिक्षण उपकरण एवं अभ्यासात्मक विद्यालयों का अभाव आदि अनेक प्रकार की समस्यायें दृष्टिगोचर होती हैं, वहीं सरकार द्वारा अनुदानित होने के कारण वित्त पोषित शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं में उपयुक्त प्रकार की समस्यायें अल्प मात्रा में दृष्टिगोचर होती हैं। इसका सीधा प्रभाव स्ववित्त पोषित शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं के शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम पर दिखाई देता है। इसके प्रतिफल के रूप में प्रभावी के रूप मे प्रभावी शिक्षक प्रशिक्षण न होने से भावी शिक्षकों में वांक्षित व्यक्तित्वशील विशेषताओं का विकास नहीं हो पाता।

यदि हमें स्ववित्त पोषित संस्थाओं के शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम में गुणवत्ता लाना

है तो उन्हें सभी प्रकार की समस्याओं से मुक्त करके अच्छा शैक्षिक एवं सांस्कृतिक वातावरण तैयार करना होगा तथा इन संस्थाओं को शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम में बढ़ते तकनीकी विकास के अनुरूप पाठन बिन्दुओं में परिवर्तन करना होगा। सच तो यह है कि भावी अध्यापक सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन लाने का एक प्रभावी एजेन्ट (माध्यम) है। परन्तु भावी अध्यापक परिवर्तनकारी एजेन्ट की भूमिका कैसे निर्वाह करें। इन संस्थाओं में समुदाय के शिक्षण का प्रशिक्षण दिया ही नहीं जाता केवल संक्षेप में सैद्धान्तिक चर्चा एवं प्रायोगिक कार्य की औपचारिकता अवश्य हो जाती है। आवश्यकता है कि शिक्षक प्रशिक्षण में समाज के साथ आत्मसात होने के अवसर एवं प्रभावी सैद्धान्तिक एवं प्रोयागात्मक कार्य में सहाभागिता के अवसर प्रशिक्षणार्थियों को दिये जाये। तभी वह भावी शिक्षक की भूमिका का निर्वाह कर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव से अपने अन्दर व्यक्तित्वशील विशेषताओं को विकसित करने में सक्षम होगा।

इस विवेचना के आधार पर यह परिकल्पना प्रतिपादित की जा सकती है कि एक ओर तो स्ववित्त पोषित शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं में पर्याप्त सुविधाओं का अभाव और दूसरी ओर इन संस्थाओं के शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव से भावी शिक्षकों में व्यक्तित्वशील विशेषताओं में वृद्धि करके श्रेष्ठ शिक्षकों के निर्माण की कल्पना करना यह एकदम असंभव सा लगता है। इन शिक्षा संस्थाओं को वांछित सुविधाओं से युक्त बनाकर यहां के शिक्षक प्रशिक्षकों को अपने शैक्षिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने के लिये समुचित अवसर एवं व्यावसायिक सन्तोष प्रदान करना चाहिये, ताकि वह शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम को प्रभावी बनाकर भावी शिक्षकों की शिक्षण अभिवृत्ति, आत्म प्रत्यय एवं जीवन मूल्यों का उनकी बुद्धि, आयु एवं अनुभव के क्रम में विकसित करके प्रभावी व्यक्तित्व का निर्माण कर सके। यही कारण है कि शोधकर्त्ता के मन में यह स्वाभाविक जिज्ञासा जागृत हुई कि हमारे वर्तमान प्रशिक्षण कार्यक्रम का भावी शिक्षकों के व्यक्तित्व की विशेषताओं पर क्या प्रभाव पड़ता है? वस्तुतः राष्ट्रीय शिक्षा आयोग के प्रतिवेदन में इस मूलभूत समस्यात्मक प्रश्न को उठाकर इस पर वस्तुनिष्ठ शोधकार्य की आवश्यकता स्पष्ट स्वीकार की गई। इससे शोधकर्त्ता को अपना प्रयास सार्थक, समायोचित एवं औचित्वपूर्ण लगा, अतः यह समस्या अध्ययन करने योग्य है।

समस्या कथन

अध्ययन के औचित्य में दिये गये संक्षिप्त विवरण से ज्ञात होता है कि सरकार द्वारा

अनुदानित सस्थायें अनेक सुविधाओं से युक्त होने के कारण यहां के छात्राध्यापकों की शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति होती है। इसके विपरीत गैर अनुदानित संस्थाओं में सुविधाओं का अभाव होने के कारण शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति का विकास होता है। यही कारण है कि इन संस्थाओं के छात्राध्यापक शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव से वांछित शिक्षणशील विशेषताओं जैसे शिक्षण के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति, अध्यापकीय प्रतिबिम्ब के रूप में आत्म प्रत्यय एवं जीवन मूल्यों को वांछित विकास करने में कठिनाई का अनुभव करते हैं।

अत: शोधकर्त्ता के मन में यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि ''**स्ववित्त पोषित अध्यापक-शिक्षा संस्थाओं के छात्राध्यापकों की शिक्षण अभिवृत्ति, आत्म-प्रत्यय एवं जीवन मूल्यों पर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रभाव**'' नामक विषय ही वर्तमान परिस्थितियों में अध्ययन करने योग्य है:

अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध के निम्नांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं:

- स्ववित्त पोषित संस्थाओं के छात्राध्यापकों की शिक्षण अभिवृत्ति पर शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात स्थिति का अध्ययन करना।
- स्ववित्त पोषित संस्थाओं के छात्राध्यापकों के आत्म प्रत्यय पर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात स्थिति का अध्ययन करना।
- स्ववित्त पोषित संस्थाओं के छात्राध्यापकों के जीवन मूल्यों पर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात स्थिति का अध्ययन करना।
- बुद्धि, लिंग, आयु, अनुभव आदि चरों की दृष्टि से शिक्षणशील व्यक्तित्वों की शिक्षण अभिवृत्ति, आत्म प्रत्यय एवं जीवन मूल्य आदि विशेषताओं के अन्तर का अध्ययन करना।
- छात्राध्यापकों की विशेषताओं पर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव को जानने से सम्बन्धित अनु अध्ययन द्वारा शिक्षक प्रशिक्षकों के विचारों का अध्ययन करना।
- स्ववित्त पोषित संस्थाओं के छात्राध्यापकों की शिक्षण अभिवृत्ति, आत्मप्रत्यय एवं जीवन मूल्यों आदि विशेषताओं से सम्बन्धित विभिन्न चरों के मध्य सह-सम्बन्ध का अध्ययन करना।
- स्ववित्त पोषित संस्थाओं के छात्राध्यापकों की शिक्षण अभिवृत्ति, आत्मप्रत्यय एवं

जीवन मूल्यों आदि विशेषताओं से सम्बन्धित तुलनात्मक प्राप्तांकों के मध्य सार्थकता का अध्ययन करना।

अध्ययन की विधि

शोधकर्त्ता द्वारा शोध की प्रकृति को ध्यान में रखते हुये प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक अनुसंधान विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यायदर्श का चयन

जनसंख्या : उन समस्त व्यक्तियों वस्तुओं अथवा तथ्यों का समूह जो किन्हीं पूर्व परिभाषित निश्चित विशेषताओं के क्षेत्र में आता हो उसे ही शोध की दृष्टि से जनसंख्या कहा जाता है।

आगरा मण्डल के स्ववित्त पोषित संस्थाओं के छात्राध्यापकों की विशेषताओं पर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रभाव जानने के लिये आगरा विश्विद्यालय से सम्बद्ध सभी 105 शिक्षक प्रशिक्षण स्ववित्त पोषित संस्थाओं में अध्ययनरत 12500 छात्राध्यापकों एवं 646 शिक्षक प्रशिक्षकों को जनसंख्या में सम्मिलित किया गया है। अत: उक्त संख्यायें ही हमारी जनसंख्या है।

न्यादर्श

वर्तमान शोध कार्य में उत्तर प्रदेश के स्ववित्त पोषित संस्थाओं के छात्राध्यापकों की विशेषताओं पर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव का अध्ययन करने हेतु याद्रिच्छिक (Randoms) विधि से न्यादर्श का चयन किया गया है। याद्रिच्छिक विधि से जनसंख्या में से इकाईयों का चयन इस प्रकार किया जाता है कि प्रत्येक इकाई को न्यादर्श में सम्मिलित होने के समान अवसर प्राप्त हो सकें। अध्ययन में याद्रिच्छिक विधि का एक प्रकार क्रमबद्ध याद्रिच्छिक प्रति चयन (Systemetic Random Sampling) विधि का प्रयोग किया गया है। इसके अन्तर्गत स्ववित्त पोषित शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं की वर्णाक्षर क्रम में एक सूची बनाई गई है जिसे जनसंख्या में दर्शाया गया है। न्यादर्श में प्रशिक्षणार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के चयन हेतु वर्णाक्षर क्रम में बनाई गई सूची में से प्रत्येक पाँचवें स्ववित्त पोषित संस्था को न्यादर्श हेतु चयन किया गया है। इस प्रकार चयनित स्ववित्त पोषित शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं की संख्या 21 है। सभी चयनित 21 संस्थाओं में से अध्ययनरत 2100 प्रशिक्षणार्थियों की संख्या के क्रम में वर्णाक्षर

सूची बनाई गयी है। प्रशिक्षणार्थियों की संख्या अधिक होने के कारण प्रत्येक संस्था में अध्ययनरत् प्रशिक्षणार्थियों की वर्णाक्षर सूची में से 30 प्रतिशत प्रशिक्षणार्थियों को न्यादर्श हेतु चयन किया गया है। इस प्रकार न्यादर्श में शामिल किये जाने वाले प्रशिक्षणार्थियों की अनुमानित संख्या 630 है। न्यादर्श हेतु चयनित 21 स्ववित्त पोषित शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाओं में कार्यरत शिक्षक प्रशिक्षकों की संख्या मात्र 170 है। शिक्षक प्रशिक्षकों की संख्या अधिक न होने के कारण चयनित सभी 170 शिक्षक प्रशिक्षकों को न्यादर्श में शामिल किया गया है। इन्हें तालिका–2 में दर्शाया गया है

तालिका–2

न्यादर्श में सम्मिलित स्ववित्त पोषित शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं में सम्मिलित प्रशिक्षणरत छात्रों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों की अनुमानित संख्या

जनसंख्या में सम्मिलित स्ववित्त पोषित शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं की संख्या	न्यादर्श से सम्मिलित स्ववित्त पोषित शिक्षक शिक्षा संस्थाओं की संख्या	जनसंख्या में सम्मिलित अध्ययनरत प्रशिक्षणार्थियों की अनुमानित संख्या	न्यादर्श में सम्मिलित अध्ययनरत प्रशिक्षणार्थियों की अनुमानित संख्या	न्यादर्श में सम्मिलित प्रशिक्षणार्थियों की कुल संख्या में में से 30 चयनित प्रशिक्षणार्थियों की अनुमानित संख्या	न्यादर्श में सम्मिलित शिक्षक प्रशिक्षकों की अनुमानित संख्या
105	21	12500	2100	530	170

प्रस्तुत अध्ययन हेतु उक्त तालिका में दर्शाये गये चयनित 630 प्रशिक्षणार्थियों एवं 170 शिक्षक प्रशिक्षक ही न्यादर्श हैं।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत शोधकार्य में निम्नांकित प्रमापीकृत उपकरणों का प्रयोग किया गया है:

– शिक्षण अभिवृत्ति मापनी – डा. एस.पी. अहलूवालिया

– आत्म–प्रत्यय प्रश्नावली – प्रो. वीना शाह

- जीवन मूल्य प्रश्नावली - डा. राज कुमार ओझा
- बुद्धि परीक्षण - डा. आर.के. टण्डन
- अनुअध्ययन द्वारा शिक्षणशील व्यक्तित्व की विशेषताओं पर शिक्षक प्रतिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव को जानने से संबंधित शिक्षक प्रशिक्षकों के अभिमतों का प्रपत्र (यह प्रपत्र शोधकर्त्ता द्वारा तैयार किया गया है)।

प्रस्तुत अध्ययन में प्रदत्तों का संगठन

सर्वप्रथम शोधकर्त्ता स्ववित्त पोषित संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की विशेषताओं जैसे शिक्षण अभिवृत्ति, आत्म प्रत्यय एवं जीवन मूल्य आदि पर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रभाव जानने के लिये इन विशेषताओं से सम्बन्धित प्रशिक्षण से पूर्व एवं पश्चात परीक्षाओं का आयोजन किया गया है। दोनों परीक्षाओं के प्रदत्तों के मध्य सार्थक अन्तर ज्ञात करके यह ज्ञात किया गया है कि शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रभाव किस सीमा तक प्रशिक्षणार्थियों की निर्धारित विशेषताओं को प्रभावित करेगा। तदुपरान्त शोधकर्त्ता ने प्रशिक्षणार्थियों की विशेषताओं से संबंधित प्रदत्तों को स्टेनले एवं कैली महोदय के 27 प्रतिशत मानदण्ड के अनुसार बुद्धि के परिप्रेक्ष्य में उच्च औसत एवं निम्न समूहों के प्रदत्तों को संगठित किया है। इसके अतिरिक्त शोधकर्त्ता ने प्रशिक्षणार्थियों की विशेषताओं की लिंग, अनुभव एवं आयु के परिप्रेक्ष्य में भी प्रदत्तों को संगठित करके प्रस्तुत किया है। अन्त में शिक्षणशील व्यक्तित्व की विशेषताओं पर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव को जानने से संबंधित अनु अध्ययन द्वारा शिक्षक प्रशिक्षकों के विचारों से संबंधित प्रदत्तों का भी सह संबंधत द्वारा विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन के निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन में स्ववित्तपोषित संस्थाओं में अध्ययनरत माध्यमिक प्रशिक्षणार्थियों की व्यक्तित्व संबंधी विशेषताओं जैसे - शिक्षण अभिवृत्ति, आत्म प्रत्यय एवं जीवन मूल्यों को प्रशिक्षण कार्यक्रम ने किस सीमा तक प्रभावित किया है। इस हेतु प्रदत्त संकलन पूर्व परीक्षण एवं प्रश्चात परीक्षण के क्रम में किया गया है। इससे संबंधित प्राप्त निष्कर्षों को शोधकर्त्ता द्वारा निम्नांकित बिन्दुओं के क्रम में रखा गया है जिनका संक्षिप्त विवरण तालिका-3 में दिया गया है:

तालिका-3 में दर्शाये गये मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन से स्पष्ट होता है कि प्राशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृति एवं आत्मप्रत्यय के मध्य उच्च धनात्मक सम्बन्ध

तालिका-3

स्ववित्त पोषित संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की व्यक्तित्व से संबंधित विशेषताओं पर प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव की प्रशिक्षण पूर्व एवं पश्चात की तुलनात्मक स्थिति

अध्ययन में प्रयुक्त चर	प्रशिक्षण पूर्व स्थिति		प्रशिक्षण पश्चात स्थिति	
	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन
शिक्षण अभिवृत्ति (मूल परीक्षण)	22.68	4.22	22.64	4.00
शिक्षण अभिवृत्ति (पूरक परीक्षण)	19.88	3.56	18.18	3.48
आत्म प्रत्यय (मूल परीक्षण)	25.76	4.11	26.33	4.32
आत्म प्रत्यय (पूरक परीक्षण)	34.79	5.44	37.36	5.28
जीवन मूल्य				
1. ज्ञानात्मक	4.70	1.82	4.32	1.71
2. आर्थिक	1.73	1.33	1.56	1.38
3. सौन्दर्यात्मक	2.10	1.11	2.12	1.23
4. देशभक्ति	6.00	1.73	7.34	1.76
5. स्वास्थ्य	3.46	1.64	3.26	1.67
6. सामाजिक	4.74	1.39	4.96	1.30
7. शक्ति सामर्थ्य	5.12	1.74	5.36	1.96
8. धार्मिक	4.99	1.48	5.33	1.92

दृष्टिगत हुआ है। इसका अभिप्राय यह है कि प्रशिक्षण पूर्व की तुलना में प्रशिक्षण पश्चात की स्थिति में प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव से स्ववित्तपोषित सस्थाओं के

तालिका-4

अनुभव बुद्धि एवं शिक्षण रूचि के परिप्रेक्ष्य में स्ववित्त पोषित अध्यापक शिक्षा-संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति पर प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव की प्रशिक्षण पूर्व एवं पश्चात की तुलनात्मक स्थिति

अध्यन में प्रयुक्त चर	प्रशिक्षणार्थियों की श्रेणी	प्रशिक्षण पूर्व शिक्षण अभिवृति की स्थिति		परीक्षण के पश्चात शिक्षण अभिवृत्ति की स्थिति	
		शिक्षण अभिवृत्ति के क्रम मध्यमान	प्रमाणिक विचलन S.D.	शिक्षण अभिवृत्ति के क्रम मध्यमान	प्रमाणिक विचलन S.D.
अनुभव	शिक्षण अनुभव युक्त प्रशिक्षणार्थी	25.46	4.11	23.79	3.99
	शिक्षण अनुभव रहित प्रशिक्षणार्थी	24.64	4.00	23.64	3.56
बुद्धि	अधिक बुद्धिमान प्रशिक्षणार्थी	24.88	4.34	24.12	4.02
	औसत बुद्धिमान प्रशिक्षणार्थी	23.84	3.78	23.53	3.23
	कम बुद्धिमान प्रशिक्षणार्थी	22.34	3.12	22.94	3.48
शिक्षण रुचि	शिक्षण रुचि से युक्त प्रशिक्षणार्थी	23.32	3.22	23.00	3.01
	शिक्षण रुचि से रहित प्रशिक्षणार्थी	23.82	3.46	23.64	3.37
लैंगिक	पुरुष प्रशिक्षणार्थी	23.56	3.48	25.66	4.27
	महिला प्रशिक्षणार्थी	23.67	3.37	24.75	3.88

तालिका-5

अनुभव बुद्धि एवं शिक्षण रूचि के परिप्रेक्ष्य में स्ववित्त संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की आत्मप्रत्यय पर प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव की प्रशिक्षण पूर्व एवं पश्चात की तुलनात्मक स्थिति

अध्यन में प्रयुक्त चर	प्रशिक्षणार्थियों की श्रेणी	प्रशिक्षण पूर्व शिक्षण अभिवृति की स्थिति		परीक्षण के पश्चात शिक्षण अभिवृत्ति की स्थिति	
		शिक्षण अभिवृत्ति के क्रम मध्यमान	प्रमाणिक विचलन S.D.	शिक्षण अभिवृत्ति के क्रम मध्यमान	प्रमाणिक विचलन S.D.
शिक्षण अनुभव	शिक्षण अनुभव युक्त प्रशिक्षणार्थी	26.38	5.00	27.31	5.27
	शिक्षण अनुभव रहित प्रशिक्षणार्थी	25.41	4.27	26.96	4.48
बुद्धि	अधिक बुद्धिमान प्रशिक्षणार्थी	26.77	5.11	27.74	5.46
	औसत बुद्धिमान प्रशिक्षणार्थी	26.13	5.03	27.18	5.18
शिक्षण रूचि	शिक्षण रुचि से युक्त प्रशिक्षणार्थी	23.61	4.01	25.28	4.17
	शिक्षण रुचि से रहित प्रशिक्षणार्थी	25.16	4.27	26.34	5.23
लैंगिक	पुरुष प्रशिक्षणार्थी	26.39	5.36	35.47	7.12
	महिला प्रशिक्षणार्थी	23.28	4.21	32.88	6098

प्रशिक्षणार्थिओं की शिक्षण अभिवृत्ति एवं आत्म प्रत्यय में अधिक मात्रा में वृद्धि हुई है। इसके साथ ही उक्त तालिका में दर्शाये गये प्रशिक्षणार्थियों के जीवन मूल्यों से सम्बन्धित मध्यमान एवं मानक विचलनों को जाँच करने पर ज्ञात होता है कि प्रशिक्षण के प्रभाव से ज्ञानात्मक एवं देशभक्ति जैसे मूल्यों की तुलना में सामाजिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मक, स्वास्थ्य, भक्ति सामर्थ्य एवं धार्मिक मूल्यों में अधिक वृद्धि हुई है।

तालिका-4 में दर्शाये गये मध्यमानों एवं मानक विचलन से विदित होता है कि ऐसे प्रशिक्षणार्थी जिन्हें प्रशिक्षण से पूर्व अध्यापन का अनुभव है उनमे शिक्षण अभिवृत्ति अधिक मात्रा में सकारात्मक पाई गई, इसके विपरित ऐसे प्रशिक्षणार्थी जिन्हें प्रशिक्षण से पूर्व कोई शिक्षण अनुभव नहीं है अथवा शिक्षण व्यवसाय के प्रति रूचि नहीं रखते, उनमें सकारात्मक शिक्षण अभिवृत्ति कम मात्रा में पाई गई। बुद्धि के परिप्रेक्ष्य में आंकड़ों की जाँच से पता चला है कि अधिक बुद्धि से युक्त प्रशिक्षणार्थियों की तुलना में सामान्य एवं कम बुद्धि से युक्त प्रशिक्षणार्थियों में सकारात्मक शिक्षण अभिवृत्ति अधिक मात्रा में दृष्टिगत हुई। लिंग की दृष्टि से प्रदत्तों का विश्लेषण करने से विदित हुआ कि पुरुषों की तुलना में महिला प्रशिक्षणार्थियों में सकारात्मक शिक्षण अभिवृत्ति अधिक मात्रा में पाई गई।

उक्त तालिका-5 में दर्शाये गये मध्यमान एवं मानक विचलनों से संकेत मिलता है कि अनुभवी प्रशिक्षणार्थियों का आत्मप्रत्यय अनुभव रहित प्रशिक्षणार्थियों की तुलना में अधिक पाया गया। बुद्धि के प्ररिप्रेक्ष्य में औसत एवं कम बुद्धिमान प्रशिक्षणार्थियों की तुलना में प्रतिभाशाली प्रशिक्षणार्थियों का आत्मप्रत्यय अधिक ऊँचा था, किन्तु महिला प्रशिक्षणार्थियों की तुलना में पुरुष प्रशिक्षणार्थियों में आत्म प्रत्यय अधिक मात्रा में पाया गया।

सुझाव

इस शोध अध्ययन से हमें अपने शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम को प्रभावी बनाने हेतु वांछित परिवर्तन के कुछ संकेत मिलते हैं, जो निम्न प्रकार हैं :

1. प्रशिक्षणार्थियों का बी.एड. प्रशिक्षण में प्रवेश हेतु दो वर्ष के शिक्षण अनुभव अनिवार्य बनाया जाये तो प्रशिक्षण के प्रभाव से प्रशिक्षणार्थियों को प्रभावी शिक्षक बनाया जा सकता है।
2. प्रशिक्षणर्थीयों में रूचियों के क्रम में पाठ्यसहगामी क्रियाकलाप, कार्य अनुभव एवं शिक्षण कौशल का विकास करके उन्हें निष्ठावान शिक्षक बनाया जा सकता है।

3. प्रशिक्षणार्थीयों को उनकी आवश्यकता के अनुसार नवीव विचारों, विश्वासों धारणाओं व शिक्षण कौशलों का परीक्षण प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया जाये।
4. प्रशिक्षणर्थियों को वैकल्पिक कार्य प्रणालियों में से स्वेच्छानुसार कार्य प्रणाली का चयन करने तदनुसार शिक्षण में प्रवृत्त होने का अवसर प्रदान किया जाये।
5 प्रशिक्षणार्थियों को स्वेच्छनुसार नवीन शिक्षण तकनीकी, सहायक सामग्री एवं विधाओं को सीखकर प्रभावी शिक्षक बनने का अवसर प्रदान किया जाये।

उपर्युक्त सुझावों को ध्यान में रखकर प्रशिक्षणार्थियों को ऐसा प्रेरणादायी, सृजनात्मक एवं प्रभावी प्रशिक्षण प्रदान किया जा सकता है जो न केवल प्रशिक्षणार्थियों को औपचारिक प्रणाली द्वारा प्रशिक्षण प्रमाण पत्र दिलाने में सहायक होगा अपितु समाज की आवश्यकता सफल अध्यापकों के निर्माण में श्रेयस्कर होगा।

संदर्भ

वसू, रूमकी (1995), ''फाइनेंसिंग इन हायर एजुक्शेन इन इण्डिया'', सम रिलवेण्ट ईश्यूज फॉर एजुकेशनल पालिसी, सोश्ल पर्सपेक्टिव वाल्यूम-3 पृ.सं. 2-3।

चीअरमन, डी.वी,, ''न्यू वे इन प्रैक्टिस टीचिंग एजूकेशन'', जनवरी 1969, नई दिल्ली, इंडिया इंडियन एसोशिएशन आफ टीचर एजुकेशन

देशाई, के.जी. (1967), ''इवाल्यूशन ऑफ स्टूडेन्ट टीचिंग'', पब्लिशड् इन द बुकलेट, स्टूडेंट टीचिंग एंड एजुकेशन पब्लिशड् बाई द डवलपमेंट आफ टीचर एजुकेशन (एनसीईआरटी) इन 1967, नई दिल्ली, डी.टी.ई. (एनसीईआरटी)

डी.टी.ई. ''डिपार्टमेंट आफ टीचर एजूकेशन (1969) सेकण्ड नेशनल सर्वे आफ सेकेण्ड्री टीचर एजुकेशन इन इंडिया'', नई दिल्ली, डिपार्टमेंट ऑफ टीचर एजुकेशन (एनसीईआरटी)

कुमार, ए. (2000), ''सेल्फ फाइनेन्स एजुकेशन प्रोग्राम इन यूनीवर्सिटी सिस्टम'', यूनीवर्सिटी न्यूज, 38(24) पृ. सं. 3.5

लूला, बी.पी. (1968), ''न्यू कनसैप्ट ऑफ स्टूडेंट टीचिंग इट्स इम्प्लीकेशन'', टीचर एजूकेशन वाल्यूम-ii, नं. 4, पी.25-39

मजूमदार, एच.बी., ''प्रैक्टिस टीचिंग : टीचर एजूकेशन'', जनवरी, 67, न्यू इंडियन एसोशिएशन ऑफ टीचर एजूकेटर्स

एन.ए.टी.ई., ''नेशनल एसासिएशन आफ टीचर एजूकेटर्स'', द बी.एड. प्रोग्राम, दिल्ली, (1966) पीपी-3

नवी अहमद एवं मो. आवीद सिद्दकी (2003), प्राईवेटाइजेशन ऑफ हायर एजुकेशन, इन अप्रेजल, यूनीवर्सिटी न्यूज, 41(07) ए.आई.यू., नई दिल्ली

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

शोध टिप्पणी/संवाद

विद्यालयी हिंसा का सम्प्रत्यात्मक विश्लेषण एवं अपेक्षित समाधान

दीपा मेहता* और अरुण कुमार**

प्रथम दुनिया के देशों के विद्यालयों में हिंसा विविध रूप में देखने को मिलती है जिसकी दर बहुत तीव्र पायी जाती है। संयुक्त राष्ट्र महासचिव (2006) ने इस पर गहरा खेद व्यक्त किया है। बालकों के अधिगम एवं विद्यालय त्याग पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। भारतीय विद्यालयों में हिंसा की वह तीव्रता नहीं पायी जाती है पर चूँकि इसका संबंध बालक के संवेग से है इसलिए भारतीय विद्यालयों में भी विद्यालयी हिंसा के लक्षण देखे जा सकते हैं। प्रस्तुत लेख में विद्यालयी हिंसा के विभिन्न बिन्दुओं जैसे परिभाषा, सम्प्रत्यय, प्रकार, कारण, दुष्परिणाम एवं सुझाव पर प्रकाश डाला गया है।

वर्तमान युग ज्ञान क्रांति की अवस्था में है। विश्व के समस्त देश शिक्षा के विकास की राह पर अनवरत अग्रसर हैं। इसलिए सभी देश नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा हेतु कई कार्यक्रम चला रहे हैं। प्रथम दुनिया के देशों की साक्षरता लगभग शत् प्रतिशत है वही भारत की साक्षरता दर 64.84 प्रतिशत ही है। ब्राजील जैसे विकासशील देश की साक्षरता दर 89 प्रतिशत, रूस 99 प्रतिशत दक्षिणी अफ्रीका 82 प्रतिशत, अमेरिका तथा ब्रिटेन की 99 प्रतिशत है जो भारत से कहीं बेहतर है। विभिन्न देशों की साक्षरता दर में इस भिन्नता के कई कारण हैं– जैसे गरीबी, जागरूकता का अभाव, संसाधनों का अभाव, शिक्षकों, कर्मचारियों में कर्मनिष्ठता की कमी निचले स्तर पर सुविधाओं का न पहुँच पाना आदि। इसमें विद्यालयी हिंसा भी इसका महत्वपूर्ण कारण है। सामान्यत: छात्रों/छात्राओं के साथ होने वाली हिंसा विद्यालयी परिवेश (कक्षा के अन्दर या बाहर)

* वरिष्ठ प्रवक्ता, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश
** शोध छात्र, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

विद्यालय के बाहर समस्त स्थानों पर दिखती है। छात्रों में हथियार लेकर विद्यालय आने की परम्परा लगातार बढ़ती जा रही है। छात्रों में आन्दोलन, मारपीट, उदण्डता, आगजनी, हत्या आदि जैसी घटनाएं आम हो गयी हैं।

पूरे विश्व में विद्यालयी हिंसा की दर बहुत तीव्र गति से बढ़ रही है (लखनऊ,1997)। अमेरिका एवं पूर्वी यूरोप में यह दर सर्वाधिक है (अकीबा,2002) जो विद्यालयों में शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, लैंगिक हिसां के रूप से स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। एडमास (2000); एर्डसन (1998); लोकवोड, (1997); वैलस (2000) आदि ने विद्यालयी हिंसा को ''महामहरी की संज्ञा दी है। यह बालकों के शाला त्याग के प्रमुख कारणों में से एक है। विद्यालयी हिंसा की वजह से समाज का एक बहुत बड़ा भाग शिक्षा से वंचित रह जाता है, जिससे सिर्फ बालक का ही नहीं बल्कि समाज एवं राज्य की भी क्षति होती है क्योंकि समाज या राष्ट्र का विकास व्यक्ति के विकास पर ही निर्भर करता है। विद्यालयी हिंसा के कारण विद्यालयों में छात्र उपस्थिति की दर में कमी देखी गयी है।

विद्यालयी हिंसा बालकों के अपूर्ण सामाजीकरण का द्योतक है। ''सामाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने पर्यावरण के साथ अनुकूलन करता है और इस प्रकार वह उस समाज का मान्य सहयोगी एवं कुशल सदस्य बन जाता है'' (ड्रेरवर, 1917)। सामाजिक मूल्यों की स्थापना से पूर्व बालक की दशा पूर्णत: प्राकृतिक होती है। समाज के सम्पर्क में आने के बाद ही उसका समाजीकरण होता है। शिक्षा का भी यही कार्य है। दुरखीम के शब्दों में 'शिक्षा का तात्पर्य बालक का सामाजीकरण है।' परन्तु समाज के सम्पर्क में आने के बाद भी बालक पूर्णत: सामाजिक नही हो पाता हैं, उसमें कुछ प्राकृतिक संवेग विद्यमान रहते हैं जो उचित अवसर प्राप्त होते ही प्रकट हो जाते हैं। क्रोध, भय, खुशी, आपसी संघर्ष, अपनी आवश्यकता की पूर्ति हेतु दूसरे पर बल प्रयोग आदि बालक के कुछ संवेगात्मक गुण कहे जा सकते हैं। गैलडर (1863) ने 'संवेगों को क्रियाओं का उत्तेजक बताया है, मोरिश (1979) के अनुसार ''संवेग एक ऐसी जटिल भावनात्मक अनुभूति है, जिसमें आन्तरिक रूप से व्यक्ति को शारीरिक परिर्वनों से गुजरना पड़ता है तथा जिसकी वाह्य अभिव्यक्ति विशेष व्यवहार प्रतिमानों या लक्षणों के रूप में होती है।'' संवेगों के कारण व्यक्ति कभी-कभी हिंसा पर इस कदर उतर जाता है कि वह अपने प्रतिद्वन्दी की हत्या तक कर देता है। आत्मनिष्ट भाव से प्रेरित व्यक्ति ऋणात्मक अभिव्यंजन व्यवहार का प्रदर्शन जब परिवार के सदस्यों पर करता है तो वह पारिवारिक हिंसा (फैमली वोलैंस) कहलाती है। यही क्रियाएं जब

विद्यालयी परिवेश में घटित होती है तो विद्यालयी हिंसा कहलाती है। फुरूलोंग एंड मोरसन (2000) ने विद्यालयी हिंसा को निम्न शब्दों में व्यक्त किया है-''विद्यालयी हिंसा वह बहु आयामी सम्प्रत्यय है जिसमें विद्यालय में की गई आपराधिक एवं क्रोध पूर्ण गतिविधियाँ सम्मिलित है जो विद्यालय परिवेश को नुकसान पहुँचाने के साथ-साथ समस्त विकास एवं अधिगम प्रक्रिया को रोकती है।''

हजलर होवर एंड ओलीवर (1996) ने अपने अध्ययन में पाया कि विद्यालय में अध्ययनरत् तीन-चौथाई छात्र इस प्राकर की हिंसा के शिकार होते हैं। पी.एच.एम.डी. एफ.जी रीपोर्ट (2006) : जिसमें 1300 छात्रों पर विद्यालयी हिंसा का अध्ययन किया गया, इसके अनुसार 9 प्रतिशत छात्रों ने विद्यालयों में अपने आप को कभी-कभी (यूजली) असुरक्षित बताया तथा 1.4 छात्रों ने पूर्णत: असुक्षित बताया। इसी अध्ययन में 66.7 प्रतिशत छात्रों ने विद्यालय जाने की इच्छा जताई वहीं 8.6 प्रतिशत ने कभी-कभी एवं .5 प्रतिशत ने विद्यालय जाने में पूर्णत: अनिच्छा जातई।

विद्यालयी हिंसा की परिभाषा

डोरसी (2000) ने विद्यालयी हिंसा को निम्न शब्दों में परिभाषित किया है-''ऐसा किसी प्रकार का नकारात्मक कार्य जो विद्यालयी सामाजिक परिवेश को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है, विद्यालयी हिंसा है।'' दूसरे शब्दों में विद्यालयी हिंसा का तात्पर्य किसी विद्यार्थी, स्टाफ के द्वारा किसी छात्र को, या छात्र/छात्रा समूह द्वारा किसी शिक्षक या स्टाफ को दिये जाने वाले, शारीरिक, मनोवैज्ञानिक एवं लैंगिक पीड़ा से है।

विद्यालयी हिंसा का सम्प्रत्यय

विद्यालयी हिंसा का सम्प्रत्यय स्पष्ट करना सम्भव नहीं है (फुरलोंग एंड मोरसन; 2007) विद्यालयी परिवेश में छात्रों की कुछ ऐसी असामाजिक गतिविधियां, जो विद्यालयी नियमों एवं सामाजिक मूल्य के रूप में अस्वीकार्य होती है विद्यालयी हिंसा के अन्तर्गत आती है, जैसे विद्यालय में हथियार लेकर आना, तोड़फोड़, आगजनी, मारपीट, हत्या आदि। विद्यालयों में हिंसा कई प्रकारों में अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग रूप में दृष्टिगोचर होती है। दो छात्रों का आपस में मारपीट करना, एक या अनेक छात्रों को गुट बनाकर पीटना या कष्ट देना, किसी छात्र को बार-बार उपेक्षित करना, एक या अनेक छात्रों को गुट बनाकर पीटना या कष्ट देना, किसी छात्र को बार-बार उपेक्षित करना, कद-काठी, बनावट, रंगरूप के आधार पर द्वेष रखना, बाल पकड़कर खींचना,

अन्य प्रकार से शारीरिक चोट पहुँचाना, चिढ़ाना, धक्का देना, चिकोटी काटना आदि इसमें शामिल है। विद्यालयी हिंसा वही नहीं है जो प्रत्यक्ष: दिखाई दे वरन इसके अन्तर्गत कुछ हिंसात्मक गतिविधियां बड़ी चतुराई से की जाती हैं (डोसरी, 2000)। इसके अन्तगर्त, बालक को डराना, धमकाना जातिगत, क्षेत्रगत, भाषागत, धर्मगत भाषागत, धर्मगत भावना से प्रेरित होकर तिरस्कृत करना आदि भी शामिल है। इसके अन्तर्गत सबल छात्रों या शिक्षकों द्वारा निर्बल छात्रों को शारीरिक, मानसिक रूप से उत्पीड़ित करना ही शामिल नहीं है बल्कि इसमें विद्यालयी स्टाफ द्वारा छात्रों को उत्पीड़ित करना और छात्रों द्वारा शिक्षकों एवं विद्यालयी स्टाफ को शारीरिक और मानसिक रूप से स्पष्ट होता है कि इसमें विद्यालयी परिवेश के साथ ही साथ विद्यालय से बाहर ही हिंसात्मक गतिविधियां भी सम्मिलित है, जैसे विद्यालय आते-जाते रास्ते में छात्रों को दल बनाकर घेराव करना, मारपीट करना, चलते समय पैरों में ठोकर मारना, किसी छात्र/छात्रा पर कंकण-पत्थर फेंककर अपमानित करना, छात्राओं के साथ अशिष्ट व्यवहार करना आदि। हिंसा की घृणित घटनाएं कभी-कभी विद्यालय में अध्यापकों द्वारा भी कार्यन्वित होती हैं। आदर्शवादी कथन ''छड़ी छूटी कि बालक बिगड़ा'' से प्रभावित शिक्षक बालकों को दण्डित करके सुधारने में विश्वास रखते हैं। अध्यापक द्वारा जातिगत्, ध र्मगत्, अर्थगत् भावना से ग्रसित होकर किसी छात्र को उपेक्षित या दण्डित करना भी विद्यालय हिंसा में सम्मिलित है जो तत्कालीन शिक्षा प्रणाली, मानवता, नैतिकता के बिल्कुल विपरीत है। रैगिंग की घटनाएं विद्यालयी हिंसा का ही एक रूप है।

विद्यालयी हिंसा के प्रकार

विद्यालयी हिंसा पर यू.एन.एम.सी.ई.एफ के सहयोग से जार्जिया में किये गये राष्ट्रीय अध्ययन, पी.एच.डी.एफ.जी रिपोर्ट (2006) में विद्यालयी हिंसा के निम्न तीन प्रकारों का वर्णन किया गया है-

1. शारीरिक हिंसा
2. मानसिक हिंसा
3. लैगिक हिंसा

शरीरिक हिंसा : शारीरिक हिंसा उस प्रकार की हिंसा को कहा जाता है, जिसमें एक पक्ष दूसरे पक्ष को शारीरिक रूप से कष्ट पहुँचाता है। उदाहरणार्थ - हत्या करना, थप्पड़ मारना, लाठी/डंडे से पीटना, अंग भंग करना, हाथ पकड़कर ऐंठना, बाल पकड़कर घुमाना, सिर पर बार-बार ठोकना, पत्थर फेंकना, चिकोटी काटना,

धक्का देना, अध्ययन के समय कोई नुकीली वस्तु चुभाना, रबर, चाक, कागज, पुस्तक, पेंसिल, कटर आदि वस्तुएं फेंककर मारना आदि।

2. *मनोवैज्ञानिक हिंसा* : मनोवैज्ञानिक हिंसा में शारीरिक दण्ड अनुपस्थित होता है। इसमें एक पक्ष का उद्देश्य दूसरे पक्ष (विपक्ष) को मानसिक पीड़ा पहुँचाना होता है। कक्षाकक्ष, पुस्कालय, खेल के मैदान, प्रयोगशाला, प्रार्थना अर्थात विद्यालय परिसर में या परिसर के बाहर सबल पक्ष के द्वारा ऐसा व्यवहार प्रदर्शित किया जाता है, जिससे पीड़ित व्यक्ति को मानसिक पीड़ा पहुँचे। उदाहरणार्थ- कक्ष में/कक्ष से बाहर, शिक्षक या छात्र/छात्रों द्वारा किसी कमजोर छात्र को धर्म/जाति/रंग-रूप/क्षेत्र की भावना से ग्रसित होकर बार-बार उपेक्षित करना/डराना/धामकाना, शिक्षकों को छात्रों द्वारा डराना/धमाकाना/शार्मिंदा करना आदि। विद्यालय में आर्थिक रूप से शक्तिशाली छात्र अपने सहपाठियों को शाब्दिक/अशाब्दिक रूप से दम्भ दिखाते या शर्मिंदा करते प्राय: देखे जा सकते हैं। छात्रवासों में रैंगिग के रूप से ऐसी घटनाएं प्राय: देखने को मिलती है, जिस कारण छात्र कभी-कभी आत्महत्या तक कर लेते हैं।

3. *लैंगिक हिंसा* : लैंगिक हिंसा की घटना प्राय: छात्राओं से जुड़ी है। इसके अन्तर्गत, छात्राओं को देखकर सीटी बजाना, उन्हें गुमराह करना, घृणित रूप से छूना, छेड़छाड़ करना, पुस्तकों, कापियों, ई-मेल, मोबाइल आदि के मध्यम से अभद्र बातें करना, जोर जबरदस्ती करना, रेप आदि घटनाएं आती हैं। भारत में इस तरह की घटनाएं समाचार पत्रों में हमेशा प्रकाशित होती रहती हैं। दा नैश्नल सैंटर ऑन एडीकैशन एब्यूज एट कोलंबिया यूनिवर्सिटी (2007) के अनुसार सर्वाधिक लैंगिक हिंसा का शिकार 8-22 वर्ष की छात्राएं होती हैं। इसी अध्ययन में बताया गया कि 17 प्रतिशत हाई स्कूल की छात्राएं शारीरिक हिंसा तथा 12 प्रतिशत छात्राएं लैंगिक हिंसा का शिकार हुईं।

विद्यालयी हिंसा के कारण

विद्यालय हिंसा का कोई निश्चित कारण बताना सम्भव नहीं है। भारतीय सन्दर्भ में विद्यालयी हिंसा के निम्नलिखित कारण बताए जा सकते हैं:

1 *स्वाभिमान/अस्तित्व के लिए संघर्ष*- डारवीन से 6 वर्ष पूर्व ही स्पैनसर (1891) ने अपनी पुस्तक 'Principal of Ethics' में बताया है कि पृथ्वी का हर जीव

अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करता है और अपने स्वाभिमान को ऊँचा रखकर जीना चाहता है यह उसका प्राकृतिक गुण है। विद्यालय में अस्तित्व/स्वाभिमान को लेकर हमेशा हिंसा होती रहती है।

2. *छात्रों का हिंसात्मक स्वभाव*– किशोरावस्था ऐसी अवस्था होती है जिसमें छात्रों का स्वभाव ऐसा बन जाता है कि वह कुछ न कुछ ऐसी गतिविधियां करते रहते हैं जो हिंसा को प्रेरित करती है।
3. *शारीरिक बल*– कुछ छात्र शारीरिक रूप से शक्तिशाली होते हैं। वे अपने समक्ष दूसरों को तुच्छ समझते हैं।
4. *आर्थिक कारण*– आर्थिक रूप से मजबूत परिवार के बच्चे विद्यालय में अपना आर्थिक दम्भ दिखाते हैं और हिंसा को बढ़ावा देते हैं। आर्थिक रूप से कमजोर छात्र येनकेन प्रकारेण अपनी आवश्यकता की पूर्ति हेतु हिंसा को महत्व देते हैं।
5. *विषमलिंगी आकर्षण*– विषमलिंगी आकर्षण भी विद्यालय हिंसा का महत्वपूर्ण कारण है। इस कारण भी छात्र आपस में लड़ते रहते हैं।
6. *धार्मिक कारण*– हर व्यक्ति परमपिता परमेश्वर में आस्था रखता है और उसकी पूजा अपनी पूजा पद्धति के अनुसार करता है। वैचारिक मतभेद के कारण अलग–अलग धर्म से जुड़े छात्र आपस में द्वेष रखते हैं और हिंसा प्रस्फुटित होती है।
7. *सामाजिक संरचना/ व्यवस्था*– भारतीय सामाजिक संरचना ऐसी है कि यहां लोग कई वर्णों एवं जातियों में बंटे हुए हैं तथा कभी–कभी किन्ही कारणवश एक दूसरे से आंतरिक रूप से ईर्ष्या रखते हैं जो विद्यालयी हिंसा का कारण बनती है।
8. *वर्तमान शिक्षा प्रणाली*– वर्तमान शिक्षा प्रणाली जीवन की प्रणाली से जुड़ी नहीं है। पाठ्यक्रम आधुनिक होने के बावजूद भी पूर्णतः संतोषजनक नहीं हैं। सिर्फ डिग्री के इच्छुक छात्र येनकेन प्रकारेण इसे प्राप्त करना चाहते हैं भले ही उन्हें हिंसक रूख अख्तियार करना पड़े।
9. *विद्यालय प्रशासन*– लचर एवं अप्रशिक्षित कुशासन भी विद्यालय हिंसा को बढ़ावा देने के लिए जिम्मेदार होते हैं।
10. *छात्र राजनीति एवं गुटबंदी*– ऐसा माना जाता है कि विद्यालय छात्र राजनीति प्रशिक्षण की अच्छी संस्था है। इसीलिए गजेन्द्र गडकर समिति (1971) ने विश्वविद्यालय स्तर पर छात्र संघ को स्थान दिया है पर इसके कुछ दुष्परिणाम भी है इससे छात्रों में गुटबाजी, मारपीट आदि कृत्यों को बढ़ावा मिलता है।

11. *अध्यापकों का अपने कर्त्तव्य से विमुख होना*– कभी–कभी अध्यापकों द्वारा भी एक छात्र या गुट को तोड़ने के लिए दूसरे गुट को हिंसा के लिए प्रेरित किया जाता है।

12. *मद्यपान एवं ड्रग्स*– आजकल मादक द्रव्य का प्रयोग करके विद्यालय आने वाले छात्रों की संख्या बढ़ती जा रही है, ये मानसिक रूप से अचेत और सामाजिक मूल्यों से दूर होते हैं और विद्यालयी हिंसा को प्रेरित करते हैं।

13. *पारिवारिक परिवेश एवं सदस्य संख्या*– अनौपचारिक रूप से परिवार के सदस्यों का बालक के व्यक्तित्व एवं संवेग पर गहरा प्रभाव पड़ता है। परिवार में झूठ, चोरी, हत्या, तानाशाही, असहिष्णुता आदि शीलगुण विद्यमान हो तो इसका प्रभाव बालक पर प्रत्यक्षत: पड़ता है। बालक के हिंसात्मक संवेगिक विकास में पारिवारिक सदस्य संख्या का भी प्रभाव पड़ता है। यादव (2010) ने परिवार की सदस्य संख्या एवं उनके हिंसात्मक प्रवृत्ति में धनात्मक सहसंबंध पाया । अधिक संख्या होने से परिवार में कलह बढ़ती है और लोगों में तनाव व्याप्त होता है, जिसका प्रभाव विद्यालयी हिंसा पर भी पड़ता है।

14. आधुनिक संचार माध्यम– आधुनिकता के प्रसार व प्रचार का दूरदर्शन, ई–मेल, सिनेमा बालक हिंसा हेतु प्रेरित होते हैं। TV: Blood bath:Violence on prime Time Broadcast TV: A PTC State of the Television Industry Report."parents Television Council, (2003) के अध्ययन से प्रकट हुआ है कि औसतन 18 वर्ष के बालक जो एक सप्ताह में 25 घंटे टेलीविजन देखते हैं और हिंसात्मक क्रियाएं करते हैं।

विद्यालयी हिंसा का दुष्परिणाम

विद्यालयी हिंसा के भयंकर दुष्परिणाम देखने को मिलते हैं जो निम्नवत हैं:

1. विद्यालयी परिवेश में किये जाने वाले हिंसात्मक व्यवहार से उपेक्षित छात्र अध्यापकों या प्रभावशाली छात्रों से डर कर कक्षा में चुप–चाप कुंठित होकर बैठे रहते हैं और अपने अधिगम उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर पाते (Gollfredson 1989) हैं। Carrol (1962) ने कुण्ठा को किसी भी अभिप्रेरक की संतुष्टि में आने वाली बाधा के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाली स्थिति या परिस्थिति के रूप में स्वीकार किया है।

2. विद्यालय हिंसा (जैसे रैगिंग) से ग्रसित छात्र आत्महत्या तक कर लेते हैं।
3. विद्यालय हिंसा से ग्रसित छात्र परीक्षा में बार-बार फेल हो जाते हैं। इससे वे दु:खी होकर खुद अध्ययन छोड़ देते हैं या उनके अभिभावक विद्यालय जाना बंद करवा देते हैं।
4. लैंगिक हिंसा के कारण अभिभावक/माता-पिता अपने बच्चों (मुख्यत: छात्राओं) की पढ़ाई बीच में ही बंद कर देते हैं।
5. विद्यालय हिंसा से ग्रसित छात्र/छात्रा विद्यालय की पाठ्यक्रम सहभागी क्रियाओं में पूर्ण मनोयोग से भाग नहीं ले पाते हैं और पिछड़ जाते हैं।
6. विद्यालय छोड़ने से साक्षरता दर में कमी दृष्टिगोचर होती है।
7. विद्यालय हिंसा से विद्यार्थियों के शारीरिक स्वास्थ्य में अवनति होती है।
8. विद्यालय हिंसा से छात्रों के बौद्धिक स्तर में गिरावट आती है जिससे, समाज एवं देश का समग्र विकास बाधित होता है।
9. विद्यालय हिंसा में लिप्त लोगों का नैतिक स्तर बहुत निम्न होता है। उनके प्रभाव में आने वाले छात्र/छात्राओं की नैतिकता पर भी इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
10. विद्यालयी हिंसा छात्र/छात्राओं को सामाजिक मूल्यों से दूर, प्राकृतिक मूल्य की तरफ ले जाने वाली धारणा का विकास करती है, जो समाज में अव्यवस्था उत्पन्न करने हेतु जिम्मेदार हैं।

सुझाव

हिंसा को पूर्णत: समाप्त किया जाना संभव नहीं है क्योंकि यह छात्रों के संवेग का हिस्सा है और संवेग जन्मजात होते हैं। Crow & Crow (1973) के अनुसार ''संवेग व्यक्ति के व्यवहार की दिशा निश्चित करते हैं। जो जीवन की किसी भी परिस्थिति में उत्पन्न होते हैं।'' तात्पर्य यह है कि मानव की उत्पत्ति से ही हिंसा की उत्पत्ति का अनुमान लगाया जा सकता है। हिंसा भी अपना रूप बदलकर व्यक्ति के साथ लगी रही। विद्यालय हिंसा विद्यालय में होने वाली ऐसी ही एक सांवेगिक घटना है जिसे समाप्त भले ही न किया जा सके पर इसके कारणों को खोजकर मानवीय प्रयासों से इसे कम किया जा सकता है। Watson (1914) जैसे व्यवहारवादी विद्वान के अनुसार "Men are built non born". बालकों के व्यवहार को निर्मित करने का कार्य विद्यालयों में होता

है। इसके लिए मूल्यपरक शिक्षण उद्देश्य का निर्माण करते हुए, उपयुक्त पाठ्यक्रम का निर्माण करके शिक्षा को रोजगारपरक (Dr.Trigunsen Committee, 1966-67) बनाकर छात्रों को उचित दिशा में मोड़ा जा सकता है। बालकों के व्यवहार परिवर्तन की दिशा नैतिकता की तरफ हो इसके लिए एन.सी.सी., एन.एस.एस., स्काउड एण्ड गाइड, सेमिनार, कार्यशाला का आयोजन लाभप्रद हो सकते हैं।

विद्यालयी प्रशासन को सुधार करके उपर्युक्त वैधानिक प्रावधानों के माधयम से विद्यालयी हिंसा में कमी लायी जा सकती है (Diwan Anand Kumar Committee, 1958)। यह प्रावधान ऐसे न हो कि उनका सांवेगिक विकास अवरूद्ध हो जाय। Jersild (1968) के अनुसार ''विद्यार्थी की बौद्धिक संभावनाएं अभिन्न रूप से उसके संवेगों के साथ संबद्ध होती है। यदि उसके संवेग जंजीरों में जकड़े होगें तो उनकी बुद्धि भी स्वतंत्र नहीं होगी।'' किशोरावस्था पलायन एवं प्रत्याक्रमण का काल होता है। ''प्रारंभिक किशोरावस्था उथल-पुथल का काल है, यह माता-पिता अध्यापकों या मित्रों से अनेक मतभेदों का काल है'' (Hurlock, 1972)। इस समय छात्रों के साथ माता- पिता, शिक्षकों को स्नेहपूर्ण व्यवहार करके उनका मार्गदर्शन करना चाहिए। विद्यालय में विषमता को दूर करने के लिए समतामूलक व्यवहार का प्रदर्शन करना चाहिए जैसे, समान परिधान, विद्यालय की गतिविधियों में सभी छात्रों को समान अवसर प्रदान करना आदि। विद्यालयी हिंसा में परिवार के संस्कार का गहरा प्रभाव पड़ता है। माता-पिता को चाहिए कि वह बालक को इतना आर्थिक सहयोग न दे कि छात्र, अपने को छात्र न समझकर अभिभावक समझें। विद्यालय में हथियार लाने, मद्यपान एवं ड्रग का सेवन करके आने पर वैधानिक प्रतिबंध होना चाहिए। सब मिलाकर हमें विद्यालय में आदर्शवादी अनुशासन को बनाकर रखने की आवश्यकता है। विद्यालय एवं परिवार का वातावरण ऐसा बना दिया जाए कि छात्रों को सही रास्ते से भटकने की गुंजाइस ही न हो। Wooeworth & Marquis (1948)ब के अनुसार ''वातावरण में वे सभी तत्व आ जाते हैं, जो व्यक्ति को जीवन प्रारंभ करने के समय से ही प्रभावित करता है।'' विद्यालय में होने वाली छोटी-छोटी हिंसात्मक गतिविधियों पर विद्यालय प्रशासन कठोर नियम बनाकर रोक सकता है तथा छात्राओं के साथ होने वाली लैंगिक हिंसा में कमी लाने हेतु छात्राओं के लिए एकल विद्यालय की व्यवस्था की जा सकती है। अन्ततः विद्यालयी हिंसा पर प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित करने के लिए बालकों में आंतरिक, मूल्यपरक परिवर्तन का रास्ता ही अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना का उद्धरण देते हुए Lulla (1969) ने लिखा- ''सबसे महत्वपूर्ण संकेत

संविधान की प्रस्तावना से मिलता है जिसके द्वारा नागरिकों को हर प्रकार का न्याय, विचार तथा कार्य स्वतंत्र समानता और भ्रातृत्व प्राप्त होगा''। संयुक्त राष्ट्र महासचिव (2006) ने विद्यालयी हिंसा से मुक्ति हेतु सुझाव देते हुए कहा है- ''समस्त विद्यार्थियों को हिंसा से मुक्त रहना सिखाना, विद्यालयों को सुरक्षित तथा छात्र अनुकूल स्थान बनाना, अधिकार आधारित पाठ्यक्रम का विकास करना तथा विद्यालय द्वारा ऐसे पर्यावरण की व्यवस्था करना जो हिंसा एवं पक्षपात को रोक सके एवं अहिंसक मूल्यों को बढ़ावा दे सके, आवश्यक है'' (Pinheiro, 2006)।

उपसंहार

शिक्षा का सामाजिक सरोकार से संबंध अनेक विद्वानों द्वारा सिद्ध किया जा चुका है। चूंकि किसी भी शैक्षिक सुधार के केंद्र पर शिक्षक विद्यमान है। अतः विद्यालयी हिंसा के निराकरण में समाज की भावी पीढ़ी का भविष्य भी शिक्षक की दूरदर्शिता पर निर्भर करता है। शिक्षक औपचारिक रूप से विद्यालय में बालकों के भविष्य एवं राष्ट्र का निर्माण करता है। विद्यालय हिंसा के कारण आज विद्यालय ही असुरक्षित हो गये हैं तो इसमें अध्ययनरत विद्यार्थियों की दशा और दिशा क्या होगी, बहुत सरलता से अनुमान लगाया जा सकता है। समाज/राष्ट्र निर्माण में विद्यालय की अहम भूमिका होती है, विद्यालय हिंसा इसमें बहुत बड़ी बाधा है। बुद्ध, महावीर, गांधी का यह देश अपने मूल्य के लिए विश्व प्रसिद्ध है। इनके मूल्यपरक सिद्धांतों को बालकों के पाठ्यक्रम में एकीकरण, विद्यालयी परिवेश में सुधार, अभिभावकों के सहयोग से बालकों के व्यवहार में परिवर्तन, आदि उपायों द्वारा विद्यार्थियों को नैतिक दिशा दी जा सकती है। इस हेतु शिक्षा द्वारा अपने विषय के साथ-साथ छात्रों में सत्य, अहिंसा, धैर्य, सहिष्णुता, मृदुता, करूणा, अभय, स्वावलम्बन, कर्त्तव्यनिष्ठा, लोकतंत्र जैसे मूल्यों का समावेश करना विद्यालयी हिंसा की दर में मनोनुकूल कमी लाने हेतु आवश्यक है।

संदर्भ

एड्म्स टी. (2000) दि स्टेटस ऑफ स्कूल डिसिप्लीन एंड वायलेंस एनल्स आफ दि अमेरिकन एकेडेमी आफ पालिटिकल एंड सोशल साइंस, 567, पीपी 140-156

अकीबा, एम. (2002) स्टूडेंट विक्टमाइजेशन : नेशनल एंड स्कूल्स सिस्टम इफैक्ट आन स्कूल वाइलेंस इन 37 नेशन्स. अमेरिकन एजुकेशनल रिसर्च जर्नल, 39(4): 829-84

एंडरसन, डी.सी. (1998), करीकुलम, कल्चर एंड कम्युनिटी : दि चैंलेज आफ स्कूल्स वाइलेंस इन एम. टॉनरी एंड एम. मूर (एडी.) यूथ वाइलेंस शिकागो: युनिवर्सिटी

आफ शिकागो प्रैस, पीपी. 317-363

कैलकुलेट फ्रॉम डाटा रिपोर्ट इन सेंटर फार डिजिजेज कन्ट्रोल एंड प्रवेन्शन यूथ 2001 ऑनलाइन कम्पेयर रिजल्ट फ्रॉम विथइन अलोकेशन ओवरटाइम

करौल एच.ए. (1967) मेन्टल हाइजीन-दि डायनामिक्स आफ एडजसमेंट, न्यू जर्सी: प्रेन्टिस हॉल

क्रो, एल.डी. एंड क्रो, ए. (1973) एजुकेशनल फिजियोलॉजी (थर्ड इंडियन रिप्रिंट), नई दिल्ली:यूरेशिया पब्लिशिंग हाउस

डर्विन, सी. (1965), दि एक्प्रैशन ऑफ दि इमोशन्स इन मैन एंड एनीमल्स (रिप्रिंट) शिकागो: शिकागो युनिवर्सिटी प्रैस

डोसरी, जे. (2000) इंस्टीटयूट टू ईन्ड स्कूल वायलेंस. रिट्रीव्ड फ्राम http:/ www.endschoolviolence.com/strategy/on May 2002

दैनिक जागरण (2010, फरवरी 21), डेली हिन्दी न्यूजपेपर, वाराणसी

ड्रेवर, जे. (1917) इस्टिक्ट इन मैन. कैमब्रिज: कैमब्रिज युनिवर्सिटी प्रैस

डरखीम, ई. इन किरन, सी. (2004) शिक्षा, समाज और विकास, नई दिल्ली कनिष्क पब्लिशर्ज डिस्ट्रीब्यूटर्स, पीपी. 19-34

डा. त्रिगुणसेन कमिटी, रिपोर्ट (1966-67) इन भटनागर, एस. (2005) मॉडर्न इंडियन एजुकेशन एंड इट्स प्रॉब्लम. मेरठ: आर. लाल बुक डिपो

दिवान आनंद कुमार कमिटी, रिपोर्ट (1958) इन भटनागर, एस. (2005) मॉडर्न इंडियन एजुकेशन एंड इट्स प्राब्लम मेरठ: आर. लाल बुक डिपो।

फ्लंग, एम. एंड मोरीसन जी. (2000) दि स्कूल इन स्कूल वायलेंस : डैफिनिशन एंड फैक्ट जर्नल आफ इमोशन एंड बिहेवियर डिस्ऑर्डर, 8:71-81

गजेन्द्र गड़कर कमीटी, रिपोर्ट (1971) इन भटनागर, एस. (2005), मॉडर्न इंडियन एजुकेशन एंड इट्स प्राब्लम, मेरठ: आर. लाल बुक डिपो

गैलडर्ड, 1963), फंडामेंटल आफ साइकोलॉजी (द्वितीय संस्करण) नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास, पीपी. 622

गॉल्फर्डेसन, डी. (1989) डवलपमेंट इफैक्टिव आर्गेनाइजेशन टू रिडूस स्कूल डिस्ऑर्डर, इन ओ. मोल्स (एड), स्ट्रेजीज टू रिडूस स्टूडेंट मिसहेवियन (पीपी. 87-104) वाशिंगटन, डी.सी.: ऑफिस ऑफ द एजुकेशनल रिसर्च एंड इम्प्रूवमेंट (एरिस डॉक्युमेंट रिप्रोडक्शन सर्विस नं. एड. 311608)

गुप्ता, एस.पी. (2001) हिस्ट्री, डवलपमेंट एंड प्राब्लम ऑफ इंडियन एजुकेशन, इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन

हजलर, आर.जे.; हूवर, जे.एच. एंड ओलिवर, आर.एल. (1996) स्टूडेंट परसैप्शन ऑफ विक्टीमाइजेशन बाई बुलीज इन स्कूल्स दि जर्नल आफ ह्यूमिनिस्टिक एजुकेशन एंड डवलपमेंट, 29, 143–150

हरलक, ई.बी. (1972), चाइल्ड डवलपमेंट, न्यूयार्कः मैकमिलन कं.

जरशिल्ड, ए.टी., इन स्केनर, सी.ई. (1968) इसैनशियल ऑफ एजुकेशनल साइकोलॉजी (एड), न्यू जर्सीः प्रेन्टिस–हॉल इन्सैन

ल्युकेनबिल, डेविट एफ. (1977) क्रीमिनल होमिसिड एज ए सिचुएटेड ट्रांजेक्शन सोशल प्राब्लम, 25, 176–86

लूला, वी.वी. (1969) भारतीय संविधान के शैक्षिक सूत्र इन भटनागर, एस. (2005), मॉडर्न इंडियन एजुकेशन एंड इट्स प्राब्लम, मेरठः आर. लाल बुक डिपो, पीपी 434–35

मोरिस चार्ल्स जी. (1979) साइकोलॉजी (थर्ड एड.) एंगलवुड क्लीफ्स, न्यू जर्सी : प्रेन्टिस हॉल

पीएचएमडीएफजी रिपोर्ट (2006) नेशनल स्टडी आन स्कूल वायलेंस इन जार्जिया, जार्जिया यूनिसेफ

पिन्हैरो, पी.एस. (2006), वर्ल्ड रिपोर्ट आन वायलेंस अगेन्स्ट चिल्ड्रन, जेनेवा, स्वीटजरलैंडः यू.एन.

स्पेंसर, एच. (1891) प्रिंसिपल आफ एथिक, इन शर्मा, पी.डी. (2006), हिस्ट्री ऑफ पालिटिकल थॉट, बैन्थम टू प्रजैंट डे, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर

''टीवी ब्लड बाथः वायलेंस आन प्राइम टायम ब्राडकॉस्ट टीवीः ए पीटीसी स्टेट ऑफ दि टेलीविजन इंडस्ट्री रिपोर्ट'' पेरेंट टेलीविजन काउंसिल (2003) http//www.parentstv.org/ptc/publications/reports/stateindustryviolence/reportOnViolence.pdf

वाटसन, जे.बी. (1914) बिहेवियरः एन इंट्रोडक्शन टू कम्परेटिव साइकोलॉजी, न्यूयार्कः हेनरी हॉल्ट एंड कं.

वॉल्श, डब्ल्यू (2000), दि इफैक्ट ऑफ स्कूल क्लाइमेट ऑन स्कूल डिस्ऑर्डर, एनिमल्स ऑफ दि अमेरिकन अकादमी ऑफ पॉलिटिकल एंड सोशल साइंस, 567, 88–107

वुडवर्थ, आर.एस. एंड मार्किस, डी.जी. (1948) साइकोलॉजी, न्यूयार्कः हेनरी हॉल्ट एंड कं. पीपी. 156

यादव, अनामिका (2010) ए स्टडी आफ बलिंग इन एलिमैंट्री स्कूल स्टूडेंट, अनपब्लिस्ड एम. एड. डिर्जटेशन, फैकल्टी ऑफ एजुकेशन, बी.एच.यू. वाराणसी

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

शोध टिप्पणी/संवाद

भारतीय परिप्रेक्ष्य में शांति शिक्षा का स्वरूप

नृपेन्द्र वीर सिंह* और रेनू राय**

तनाव, हिंसा व अशांति के इस सहस्त्राब्दि ने निरंतर शिक्षित हो रहे आवाम को दी जाने वाली तालीम पर निश्चय ही गंभीर सवाल खड़ा कर दिया है। तालीम में दिमाग को जरूर तरजीह दी जा रही है लेकिन समाज के लिए सर्वाधिक आवश्यक हृदय के विकास की घोर उपेक्षा हो रही है। ऐसे में सामाजिक अन्तर्विरोधों, आपसी द्वन्द्वों व अन्य विखण्डनकारी प्रवृत्तियों के रूप में वर्तमान सहस्त्राब्दि की प्रमुख चुनौतियों का सामना करने के लिए शांति शिक्षा अनिवार्य है। इसे एक विषय के रूप में नहीं वरन् सभी विषयों में अन्तर्निहित सूक्ष्म व गुप्त पाठ्यक्रम के रूप नयी पीढ़ी के समक्ष प्रस्तुत किया जाये तथा इसके लिए आवश्यक शिक्षण योजनाओं, व्यूहरचनाओं, तकनीकियों व युक्तियों का भरपूर प्रयोग किया जाय ताकि हमारा भविष्य सुरक्षित व सुखमय हो सके।

सूचना प्रौद्योगिकी तथा ज्ञान क्षेत्र में हुई क्रान्ति ने मानव को विकास और समृद्धि के अप्रतिम युग में पहुचां दिया है। इस युग में चातुर्दिक विकास और समृद्धि के नित्य नये कीर्तिमान स्थापित हो रहे हैं। परन्तु आवश्यकता से अधिक भौतिकता, अभिलाषा व अमानवीय कामनाओं के कारण आज मानव नित्य नैतिक, सामाजिक व मानवीय वर्जनाओं को भंग कर रहा है। मानव के इन कृत्यों ने उसे पुनः असभ्य और बर्बर की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया है। इसका स्पष्ट चित्रण समाचार पत्रों तथा समाचार चैनलों की खबरों में देखने को मिलता है जिसमें आतंकवादी घटनाओं एवं गुटीय दंगों, चोरी, हत्या, लुट, बलात्कार, जातिगत व वर्गगत उन्माद, नस्लवाद, साम्प्रदायिकता आदि की बहुलता रहती हैं। ये खबरें हमें निरन्तर याद दिलाती है कि हम अशान्त युग में रहते हैं।

---

* शोधार्थी, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश।
****** शोधार्थी, (जे.आर.एफ.) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

अशान्ति की समस्या सम्भवत: अनादि काल से चली आ रही है जिसने वर्तमान युग में अत्यन्त विकराल रूप धारण कर लिया है। प्रारम्भ में शिक्षा प्रसार के अभाव को अशान्ति का जनक माना जाता था किन्तु आज तो शिक्षा का प्रसार न केवल शहरों अपितु छोटे-छोटे गांवों तक हो चुका है; फिर भी अशान्ति में कमी की बजाय वृद्धि ही हो रही है। जिस शिक्षा पद्धति से सभ्य सुसंस्कृत एवं मानवीय गुणों से सुशोभित नागरिकों का विकास होना चाहिए उसी के द्वारा असभ्य, अपराधी, स्वार्थी व अमानवीय दुर्गुणों से युक्त लंपट तैयार हो रहे हैं। वर्तमान सामाजिक परिदृश्य इस बात/तथ्य का सूचक है कि सामाजिक आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा पद्धति व पाठ्यक्रम में परिवर्तन आवश्यक है। परिवर्तन की यह आवश्यकता शांति शिक्षा को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किये जाने पर बल देती है। शांति शिक्षा की विषय-वस्तु एवं सहगामी क्रियाओं का क्रियान्वयन ही नागरिकों में मानवता के प्रति प्रेम, अहिंसा, स्नेह, दया, करूणा, विश्वास, सहयोग, आदर, भाईचारा, सहनशीलता आदि गुणों का विकास कर सकता है।

अशांति की समस्या न केवल भारतीय सीमाओं तक सीमित है अपितु इसका स्वरूप वैश्विक है। आज प्रत्येक राष्ट्र शांति शिक्षा की आवश्यकता महसूस कर रहा है तथा इस ओर प्रयासरत भी है।

विश्व स्तर पर शांति शिक्षा के क्षेत्र हो रहे प्रयास

विश्व स्तर पर विभिन्न देशों में शांति शिक्षा के पाठ्क्रम का विकास किया गया है। विभिन्न देशों के शांति शिक्षा का पाठ्क्रम मुख्यत: तीन पक्षों पर केंद्रित है संचार, सहयोग व समस्या समाधान। बुरूडी (1994), क्रोशिया व लाइबेरिया (1993) में इन पाठ्यक्रमों के क्रियान्वयन व शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के लिए निर्देशन पुस्तिकाओं (Mannuals) को तैयार किया गया है। इसी प्रकार की निर्देशन पुस्तिकाओं का उपयोग श्रीलंका में किया जा रहा है जो इस बात पर बल देता है कि विद्यालयों के मूल विषयों के साथ शांति शिक्षा को समन्वित करके शिक्षण कार्यक्रम हो। सुडान में खेलकूद, कला व विज्ञान प्रोजेक्ट के माध्यम से विद्यार्थियों में सहयोग व सम्मान की भावना का विकास किया गया है। रवांडा, ईजिप्ट, ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, लेबनान, श्रीलंका व अन्य कई देशों में शांति के संदर्भ में द्वन्द वियोजन क्रियाओं व सामुदायिक सेवाओं आदि कार्यक्रमों को चलाया जा रहा है (फाउन्टेन,1999, पृ. 17)।

भारत में शांति शिक्षा का विकास

यूनेस्को की 'Word Directory of Peace Research and Training Institu-

tions (1994) की रिर्पोट के अनुसार भारत में शांति शिक्षा के क्षेत्र में 25 ऐसे संस्थान है जो शांति शिक्षा से संबंधित शोध कार्य व शैक्षणिक कार्यक्रमों का क्रियान्वयन कर रहे है (प्रसाद, 1998, पृ. 06)।

इस क्रम में सबसे पहले 1959 में गाँधी शांति प्रतिष्ठान की स्थापना नई दिल्ली में की गई। इसी तरह के कई अन्य संस्थान जैसे Gandhi Institute of Studies, वाराणसी (1961), The Center for Gandhion Studies and Peace Research, दिल्ली विश्वविद्यालय, Institute for Defence Studies & Analysis, Peace Research (1971), गुजरात विद्यापीठ (प्रसाद,1998, पृ. 06) और हॉल ही में मालवीय सेंटर फॉर पीस रिसर्च (2009) की स्थापना बी.एच.यू., वाराणसी में की गयी है। इसी क्रम में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद ने अपने नेशनल कॅरीकुलम फ्रेमवर्क, 2005 में स्कूलों के लिए शांति से संबंधित गतिविधियों (हैन्डिल विद् केयर, शेयरिंग फीलिंग्स, बी ए पीसफुल लायर) में सक्रियता से भाग लेने पर बल दिया (NCF-2005,p. 61)। एन.सी.ई.आर.टी. (NCERT) में शांति शिक्ष के लिए सभी विषयों में एक-एक अध्याय जोड़ने का विचार है। (गुप्ता, 2008, पृ. 575)।

अब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या शांति शिक्षा एक अलग विषय के रूप में लागू हो? या सभी विषयों में शांति शिक्षा का एक-एक अध्याय जोड़ दिया जाए? या सभी विषयों में समाहित विषय-वस्तु का शिक्षण शांति शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में हो? जहां तक शांति शिक्षा को अलग विषय के रूप में लागू करने का प्रश्न है यह किसी भी दृष्टिकोण से व्यावहारिक व तार्किक नहीं है क्योंकि विद्यालयों में पूर्व से ही विषयों की संख्या की अधिकता है। दूसरी बात शांति शिक्षा को अलग विषय के रूप में लागू कर देने मात्र से समस्या का समाधान नहीं हो सकता है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण पर्यावरण शिक्षा हो सकता है।

शांति शिक्षा का सभी विद्यालयी विषयों मे एक-एक अध्याय जोड़ना कुछ सीमा तक व्यावहारिक प्रतीत होता है किन्तु सभी विषयों में एक-एक अध्याय की वृद्धि शिक्षकों और विद्यार्थियों के लिए अधिभार ही होगी। दूसरी बात एक-एक अध्याय के अध्ययन मात्र से विद्यार्थियों के व्यवहार तथा कृत्यों में आपेक्षित परिवर्तन प्राप्त कर पाना संभव नहीं है। हमारी दृष्टि से सबसे तार्किक व उपयुक्त समाधान यह होगा कि सभी विद्यालयी विषयों में समाहित विषय-सामग्री/वस्तु का अध्ययन-अध्यापन शांति शिक्षा के संदर्भ में हो। इससे विद्यालयी समय-सारणी शिक्षकों व विद्यार्थियों के ऊपर कोई अतिरिक्त भार नहीं पड़ेगा। पर प्रश्न यह उठता है कि सभी विद्यालीय विषयों में समाहित

विषय–सामग्री/वस्तु का शिक्षण शांति शिक्षा के प्ररिप्रेक्ष्य में कैसे होगा तथा शांति शिक्षा का स्वरूप/प्रारूप कैसा होगा?

शांति शिक्षा का स्वरूप

सामान्य किसी भी विषय को दो भागों में तैयार किया जाता है। एक सैद्धान्तिक भाग तथा दूसरा व्यावहारिक/प्रायोगिक भाग शांति शिक्षा के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक भाग में किस प्रकार के ज्ञान व क्रियाओं का शामिल किया जाए? इसके लिए सीमा निर्धारक बिन्दुओं का होना आवश्यक है। शांति शिक्षा के ज्ञान व क्रियाओं के निर्धारण के लिए यूनिसेफ द्वारा निर्धारित किए गए सीमा निर्धारक बिन्दु सबसे उपयुक्त होगें। इन्हें निम्न चित्र के माध्यम से प्रदर्शित किया जा सकता है।

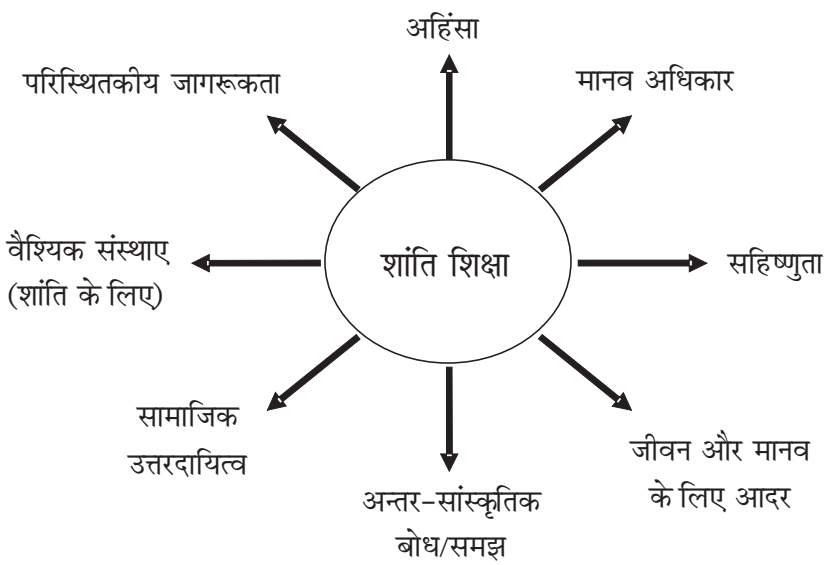

यूनिसेफ द्वारा निर्धारित किए गए इन सीमा निर्धारकों को ध्यान में रखते हुए शांति शिक्षा के सैद्धान्तिक तथा व्यावहरिक पक्ष में निम्न ज्ञान व क्रियाओं को सम्मिलित किया जा सकता है।

शांति शिक्षा के सैद्धान्तिक पक्ष में निम्न विषय–वस्तु को समाहित किया जा सकता है:

- शांति दूत के रूप में प्रसिद्ध महापुरूषों के जीवन–चरित्र व शांति तथा मानवता के लिए किये गये कार्यों का विवरण (पिल्लई,1991, पृ.128)। जैसे– जीसस क्राइस्ट, गौतम बुद्ध, महावीर स्वामी, मोहम्मद साहब, गुरू नानक, सन्त कबीर,

महात्मा गांधी, मदर टेरेसा, नेल्सन मंडेला, आंग शान सू की आदि।

- वैश्विक शांति स्थापना हेतु प्रयासरत विभिन्न संस्थाओं के ऐतिहासिक उद्भवों के कारणों व कार्यों का तार्किक विवरण। जैसे- संयुक्त राष्ट्र संघ, यूनिसेफ आदि।
- अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध व अन्तर सांस्कृतिक विविधता व समझ को बढ़ावा देने वाली संस्थाओं की महत्ता एवं कार्यों का विवरण। जैसे- यूनेस्कों, यूनिसेफ आदि।
- मानव अधिकारों एवं कर्तव्यों की समझ से संबंधित विषय।
- सामाजिक ऊारदायित्वों से संबंधित विषय एवं सामाजिक समस्याओं के उद्भव के कारणों व उनके समाधान में मानव की भूमिका के महत्व संबंधित विषय जैसे- नस्लवाद, क्षेत्रवाद, जातिवाद, साम्प्रदायिकता आदि।
- अहिंसा, सहिष्णुता व जीवन की महत्ता से संबंधित विषय।
- पारिस्थितकीय जागरूकता से संबंधित विषय। जैसे पर्यावरण प्रदूषण आदि।

शांति शिक्षा के व्यावहरिक/प्रायोगिक भाग के अन्तर्गत निम्न क्रियाएं समाहित की जा सकती है-

- प्रत्येक विद्यालय में पीस क्लब बनाया जाए। इसके अन्तर्गत पीस डायरी, शांति पत्रिका का प्रकाशन, शांति जागरूकता संबंधी कार्यक्रम, महत्वपूर्ण व्यक्तियों से अन्तः क्रिया कार्यक्रम,सामाजिक समस्याओं पर स्वस्थ वार्ताओं आदि कार्यक्रमों को करवाया जा सकता है।
- रोल प्लेइंग गेम इसके अन्तर्गत महापुरूषों के जीवन-चरित्र पर आधारित अभिनय कार्यक्रम करवाये जा सकते है।
- ध्यान, योग व प्राणायाम संबंधी कार्यक्रम का आयोजन विषय विशेषज्ञों द्वारा करवाया जा सकता है।
- सामुदायिक सेवाओं का आयोजन करवाया जा सकता है।
- मनोवैज्ञानिक कार्यशालाओं व निर्देशन संबंधी कार्यक्रमों का आयोजन।

अब यहां पर प्रश्न उठता है कि शांति शिक्षा के अमुख प्रारूप को किस स्तर से लागू किया जाये एवं शांति शिक्षा के प्रारूप को कैसे विद्यालय विषयों व पाठ्-सहगामी क्रियाओं के साथ समाहित किया जाए? हमारे दृष्टिकोण में प्राथमिक पाठशाला से ही शांति शिक्षा लागू की जानी चाहिए। क्योंकि प्रारम्भिक काल में दी गई शिक्षा व संस्कारों

का विद्यार्थियों के जीवन में अमिट प्रभाव रहता है। अब प्रश्न आता है शांति शिक्षा को विद्यालय विषयों व पाठ् सहगामी क्रियाओं के साथ समाहित करने का। यह सर्वविदित है कि शांति के सैद्धान्तिक पक्ष में समहित विषय-सामग्री प्रत्यक्षयत: विद्यालीय विषयों से सहसंबंधित है। केवल शिक्षकों को शिक्षण कला एवं शिक्षण शैली में अपेक्षित परिवर्तन करने की आवश्यकता है। शांति शिक्षा के सैद्धान्तिक पक्ष को निम्न प्रकार से विद्यालयी विषयों से संबंधित करके अध्ययन-अध्यापन किया जा सकता है:

- शांति दूत के रूप में स्थापित महापुरूषों का जीवन चरित्र व कार्यों का विवरण इतिहास विषय में समाहित रहता है। इन महापुरूषों के विषय में शिक्षण करते समय शिक्षक इनके कार्यों व सन्देशों को तार्किक व प्रासंगिकता उस कासौटी में बांधे जोकि विद्यार्थियों में शांति, सहिष्णुता, समभाव, सहयोग व भाईचारे आदि के गुणों का संचार कर सके। विद्यार्थियों में यह भावना जाग्रत की जाए कि वह महापुरूषों की शिक्षा व सन्देशों को अपने आचरण में उतार कर ही मानवता का कल्याण कर सकते है। इन विषयों पर किया जाने वाले शिक्षण का स्तर चिन्तन स्तर का होना चाहिए।
- राष्ट्रीय व अन्तर्राट्रीय स्तर पर शांति स्थापना हेतु प्रयासरत विभिन्न संस्थाओं जैसे संयुक्त राष्ट्र संघ, यूनिसेफ, न्यायपालिका आदि विषय नागरिकशास्त्र में समाहित रहता है। इन संस्थाओं पर शिक्षण करते समय इनके उद्भव के कारणों, कार्यों व वर्तमान में इनकी प्रासंगिकता का तार्किक व व्यवहारिक विवेचन किया जाय। साथ ही साथ अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध तथा अन्तर-सांस्कृतिक विविधता व समझ कों बढ़ावा देने वाली संस्थाओं (यूनेस्को आदि) के महत्व व कार्यों का शिक्षण इनके उल्लेखनीय योगदानों व भूमिकाओं के संदर्भ मे किया जाना चाहिए।
- नागरिकशास्त्र विषय में मानव अधिकार व कर्तव्य एवं जीवन के प्रति सम्मान की भावना आदि से संबंधित विषय समाहित रहते है। इन विषयों पर शिक्षण करते समय विद्याथियों में इस मनोवृत्ति का विकास किया जाना चाहिए कि वह अपने अधिकारों के प्रति सजग व कर्तव्यों के प्रति निष्ठावान हो सके तथा दूसरे के अधिकारों का सम्मान कर सके। साथ ही साथ विद्यार्थियों को प्राकृतिक अधिकारों के प्रति सजग निष्ठावान बनाने का प्रयत्न किया जाय।
- सामाजिक विज्ञान विषय के अन्तर्गत सामाजिक समस्याओं जैसे- क्षेत्रवाद, सम्प्रदायवाद जातिवाद आदि को रखा जा सकता है। इन सामाजिक समस्याओं की उत्पत्ति कारणों व समाधानों का शिक्षण शांति स्थापना के परिप्रेक्ष्य में किया

जाये। विद्यार्थियों को उन तथ्यों से अवगत कराया जाय जोकि मानव से संबंधित व सामाजिक समस्याओं की उत्पति के कारक है। शिक्षण के द्वारा विद्यार्थियों में इस मनोभावना का विकास किया जाय कि वे प्रत्येक सामाजिक समस्या का समाधान करने में सक्षम है। यदि वह प्रयास न्यायोचित व मानवतावादी दृष्टिकोण पर आधारित है।

- विज्ञान और भूगोल विषय के अन्तर्गत जैविकीय विविधता तथा पारिस्थितिकीय जागरूकता से संबंधित विषयों का अध्यापन किया जा सकता है। पर्यावरणीय प्रदूषण और पारिस्थितिकीय असन्तुलन से जुड़े मानवीय कारकों से विद्यार्थियों को अवश्य अवगत कराया जाये। उन्हें यह भी बताया जाये कि मानव की स्वार्थवादी मानसिकता व अमानवीय लोलुपता से जैव विविधता तथा पर्यावरण को क्या हानि हुई और क्या और होने की संभावना है एवं इसका मानव जीवन पर क्या दुष्परिणाम हो सकता है? विद्यार्थियों को उन क्रियाओं व कार्यों के प्रति अवश्य सजग किया जाय, जोकि उनकी अनभिज्ञता के कारण पर्यावरण के लिए क्षतिकारक होते है। शिक्षण के द्वारा विद्यार्थियों में इस भावना का संचार किया जाय कि वह इन समस्याओं का समाधान करने में वह सक्षम है।
- भाषा में समाहित कविताओं व कहानियों का शिक्षण सामाजिक वास्तविकता के धरातल पर किया जाय। कविताओं व कहानियों में समाहित शांति, भाईचारे समरसता आदि के प्रंसगों का भावप्रधान व अर्थपूर्ण चित्रण प्रस्तुत किया जाय।

यह सर्वविदित है कि प्रत्येक विद्यालय में पाठ्सहगामी क्रियाओं का आयोजन होता है। शान्ति शिक्षा के व्यावहारिक पक्ष से संबंधित विभिन्न कार्यक्रमों तथा क्रियाओं को सरलता से विद्यालय की पाठ्-सहगामी क्रियाओं में समन्वित किया जा सकता है। इन्हें विद्यालीय समय-सारणी में निम्न प्रकार से लागू किया जा सकता है:

- विद्यालयों में प्रतिदिन प्रार्थना सभा होती है। प्रार्थना सभा में प्रतिदिन अलग-अलग धर्मो की कोई एक प्रार्थना होनी चाहिए। विद्यार्थियों से प्रार्थना सभा में प्रत्येक धर्म से जुड़े नीति वाक्यों व प्रेरक प्रंसगों को बुलवाया जाये। शिक्षक प्रतिदिन किसी एक सम सामयिक घटना के संदर्भ में विद्यार्थियों के विचारों को सुने। यदि नकारात्मकता के भाव विद्यार्थियों के विचारों में समाहित हो तो उसका तत्काल सकारात्मक व मानवीय समाधान शिक्षक द्वारा बताया जाय। इस कार्यक्रम के द्वारा विद्यार्थियों में सर्वधर्म समभाव, भाईचारा, सहिष्णुता व मानवीय नैतिकता का विकास होगा।

- प्रत्येक विद्यालय में पीस क्लब बनाया जाय। इसके अन्तर्गत एक पीस डायरी बनवायी जाए। जिसमें विभिन्न धर्मो के पवित्र कथनों, शान्ति स्थापना से जुड़े किसी एक विषय का विवरण, सम-सामायिक घटनाओं पर उनके विचार तथा शान्ति के लिए उनके द्वारा किए गए प्रयास आदि का विवरण समय और दिनांक के साथ नोट करवाया जाय। इससे विद्यार्थियों में शान्ति के प्रति जागरूकता, समभाव व कर्तव्यनिष्ठा के गुणों का विकास होगा।
- शिक्षक विद्यार्थियों के सहयोग से वर्ष में एक बार प्रत्येक कक्षा से शान्ति पत्रिका का प्रकाशन करवाये। शिक्षक शक्ति स्थापन से जुड़े सम-सामायिक विषयों का निर्धारण कर विद्यार्थियों को लेख व कहानी लिख कर लाने को कहे। यह प्रत्येक विद्यार्थी के लिए अनिवार्य हो। पत्रिका के निर्देशक-मण्डल में विद्यार्थियों की सहभागिता अवश्य रखी जाय। इसके द्वारा विद्यार्थियों में आत्मनिर्भरता सहयोग, जागरूकता (शान्ति के संदर्भ) आदि गुणों का विकास होगा।
- सामुदायिक सेवाओं एवं जागरूकता रैलियों का आयोजन समय-समय पर विद्यालय में करवाया जाना चाहिए। इन कार्यक्रमों में समाज सेवी व प्रतिष्ठित व्यक्तियों को आमंत्रित किया जाय। सामुदायिक सेवाओं व जागरूकता कार्यक्रम के विषय व आयोजन की तैयारी विद्यार्थियों से ही करवाई जाए। इससे उनमें समुदायिकता, सहयोग, आत्मनिर्भरता आदि गुणों का विकास होगा।
- विद्यालयों में रोल प्लेइंग गेम का आयोजन सांस्कृतिक कार्यक्रमों के साथ करवाया जाये। इसके अन्तर्गत महापुरूषों के जीवन चरित्रों पर आधारित अभिनय कार्यक्रम आयोजित किये जा सकते है। इससे विद्यार्थियों में नैतिक एवं चारित्रिक गुणों का विकास होगा।
- विद्यालय ध्यान योग व प्राणायाम संबंधी कार्यक्रमों का आयोजन विषय विशेषज्ञों द्वारा करवा सकता है। इन कार्यक्रमों के द्वारा मानसिक आध्यात्मिक शान्ति के गुणों का विकास होगा। ये सभी क्रियाएं मन को नियंत्रित करने में सहायक होती है। इस संदर्भ में गौतम बुद्ध के निम्न विचार महत्वपूर्ण हैं:

''सभी दुष्कर्म मन के कारण उपजते है। यदि मन रूपांतरित हो जाए, तो क्या दुष्कर्म बने रह सकते हैं?''(उप्पल,2007, पृ. 129)

- विद्यालयों में मनोवैज्ञानिकों के सहयोग से कार्यशालाओं व निर्देशन कार्यक्रमों का आयोजन करवाया जाये। कार्यशालाओं में द्वन्द्व वियोजन संबंधी कार्यक्रम व

द्वन्द्वात्मक परिस्थितियों में निर्णय लेने की क्षमता का विकास करने संबंधी कार्यक्रम करवाये जाये। इन कार्यक्रमों के द्वारा विद्यार्थियों में यह क्षमता विकसित की जाए कि वह विषय परिस्थितियों में लिए गए निर्णयों को शांति के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित कर सके। इन कार्यक्रमों के माध्यम से विद्यार्थी द्वन्द्व को वियोजित कर सकेगें व विषय परिस्थितियों में उचित, सकारात्मक व शान्तिमय निर्णय लेने की क्षमता विकसित कर सकेगें।

शान्ति शिक्षा के सफल क्रियान्वयन हेतु शिक्षकों को प्रशिक्षण देने एवं शिक्षकों, विद्यार्थियों व अभिभावकों के लिए निर्देशन पुस्तिका (Manuals) तैयार करने की आवश्यकता है। इन निर्देशन पुस्तिकाओं के माध्यम से शान्ति की सैद्धान्तिक जानकारी को व्यावहारिक रूप के क्रियाकलापों में एकीकृत करने में सहायता मिल सकेगी। इसके लिए प्रशिक्षिण कार्यक्रम, गोष्ठियों व कार्यशालाओं आदि के आयोजन के साथ-साथ ई-लर्निंग व संचार के अन्य माध्यमों का भी उपयोग किया जा सकता है। शांति शिक्षा विशेषज्ञों, अनुसंधानकर्ताओं और शिक्षकों के सहयोग से शांति शिक्षा का संदेश देने वाले कार्यक्रमों का विकास किया जाय व इनका प्रसारण दूरदर्शन व रेडियों जैसे संचार माध्यमों से किया जाये।

निष्कर्ष

शान्ति शिक्षा लम्बे समय से विद्वानों और शैक्षिक संस्थाओं में परिचर्चा का विषय रहा है। इस क्रम में एन.सी.ई.आर.टी. ने नेशनल कॅरीकुलम फ्रेमवर्क 2005 शान्ति शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया एवं इस संदर्भ में कुछ क्रियाओं का उल्लेख भी किया है किन्तु इसका आधारभूत स्वरूप अभी तक निर्धारित नहीं हो सका। प्रस्तुत पत्र शान्ति शिक्षा के स्वरूप और इसको विद्यालयीय विषयों में समावेशित करने के आधार बिन्दुओं पर केन्द्रित है। शान्ति शिक्षा का उपरोक्त प्रारूप अर्थात सैद्धान्तिक तथा प्रायोगिक पक्ष वर्तमान सामाजिक परिदृश्य में परिलक्षित एवं व्याप्त मानव कर्मजनित समस्याओं का समाधान करने में सक्षम है। शान्ति शिक्षा के इस प्रारूप में अन्तर्निहित शान्ति के क्रियाकलापों में सद्भावनापूर्ण सामाजिक संबंधों के सृजन और संवर्द्धन के अविचल प्रयास शामिल हैं, जो मानव कल्याण और सामाजिक खुशहाली से संबंधित है। शान्ति शिक्षा के द्वारा यद्यपि अशान्ति की समस्या की पूर्ण समाधान संभव नही है, किन्तु इसके द्वारा मानव आचरण व प्रवृत्ति में सामाजिक सद्भाव व भाईचारा सहिष्णुता, अहिंसा आदि मानवीय गुणों का अवश्य पल्लवन किया जा सकता है। इसकी प्राप्ति के लिए

दीर्घकालिक मानवीय व सामाजिक प्रयास आवश्यक हैं और तभी हम यह कामना कर सकेंगें कि –

''ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष गुं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्व गुं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधिः।।''

(तिवारी, 2008, पृ. 212)

सन्दर्भ

एन.सी.ई.आर.टी. (2007), 'राजनीतिक सिद्धांत', नई दिल्ली, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 129।

गाल्टुंग जोहान (1996) 'पीस बाई पीसफुल मीन्स' लंदन–नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन।

गुप्ता, एस.पी. और गुप्ता, अलका (2008), 'भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्यायें' इलहाबाद, शारदा पुस्तक भवन, पृ. 575।

तिवारी, पी.के. (2008), 'वैदिक संहिताओं में पर्यावरणीय आचारशास्त्रीय शिक्षा का स्वरूप' इन राठौर (संपा.) समाज एवं पर्यावरणीय आचार वाराणसी एल्यूमनी एसोशिएशन बी.एच. यू., पृ. 212

नेशनल कॅरीकुलम फ्रेमवर्क (2005), नई दिल्ली, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 61।

पिल्लई, के.एस. (इडिट बाई, 1991) 'रिलेवेन्स ऑफ पीस एजुकेशन', अम्बाला कैन्ट, दी एसोसिएट पब्लिशर्स , पृ. 128।

प्रसाद, एस.एन. (1998) 'डेवलेपमेन्ट ऑफ पीस एजुकेशन इन इण्डिया (सिन्स इण्डिपेन्डेन्स), पीस एजुकेशन मिनीप्रिंट्स नं0 95 पृ. – 06 From www.eric.ed.gov

फाउण्टेन, एस. (1999), 'पीस एजुकेशन इन यूनिसेफ' वर्किंग पेपर एजुकेशन सेक्शन, न्यूयार्क, प्रोग्राम डिवीजन यूनिसेफ, पृ. 17 From www.unicef.org

मारिया मोनटोसरी (1972), 'एजुकेशेन एण्ड पीस' रेजेन्सी; यूनिवर्सिटी ऑफ मिसिगन डिजीटाइज्ड।

सोलोमन और नेवो (2002), पीस एजुकेशन : द कानसेप्ट प्रेन्सिपलस एण्ड प्रेक्टिस एराउण्ड द वर्ल्ड, लन्दन; लॉरिइंस ईरलबम एसोसिएटस।

हेन्डरसन जार्ज (2006) 'ऐजुकेशन फार पीस : फोकस आन मैनकाईन्ड' असोसिएशन फार सुपरवीशन एण्ड करिकुलम डेवलेपमेंट, मीचिगन।

हैरिस ईआन, मारिसन मैरी (2003), 'पीस ऐजुकेशन, लंदन, मैकफारलैंड।

हेन्डरसन जार्ज (2006) 'ऐजुकेशन फार पीस : फोकस आन मैनकाईन्ड' असोसिएशन फार सुपरवीशन एण्ड करिकुलम डेवलेपमेंट, मीचिगन।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

शोध टिप्पणी/संवाद

छत्तीसगढ़ के भुंजिया एवं कमार जनजाति समुदाय के बालक-बालिकाओं की सामाजिक स्थिति का अध्ययन

सौम्या नैयर*

प्रस्तावना

मानव एक सामाजिक प्राणी है। यह समाज में ही जन्म लेता है तथा समस्त सामाजिक क्रिया-कलाप करते हुए वहीं पर मृत्यु को प्राप्त होता है। मनुष्य अपने स्वतंत्र अस्तित्व के साथ समाज के हित को ध्यान में रखते हुए एक साथ जीवन-यापन कर मानवता का परिचय देता है। कोई भी समाज तभी तक संगठित रहता है जब तक की उस समाज में सामाजिक व्यवस्था बनी रहती है। चूंकि समाज के विकास हेतु उस समाज कि सामाजिक स्थिति को जानना अति आवश्यक है। उस समाज की सामाजिक स्तर को पहचान कर उसको ऊंचा उठाने हेतु शिक्षा एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप में कार्य करता है। क्योंकि समाज में फैला अंधविश्वास एवं रूढ़िवादी विचारधारा विकास के मार्ग में रूकावट पैदा करती हैं। समाज की वर्तमान परिस्थितियों को देखकर उनमें सुधार लाया जा सकता है। छत्तीसगढ़ के जनजातीय क्षेत्रों की सामाजिक संरचना एवं स्थिति जानकर उनके जीवन को खुशहाल एवं बेहतर बनाया जा सकता है।

शोध का क्षेत्र

प्रस्तुत शोध अध्ययन में छत्तीसगढ़ के गरियाबंद ब्लाक के कमार एवं भुंजिया जनजाति समुदाय का अध्ययन किया गया है।

शोध का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र में कमार एवं भुंजिया जनजाति की सामाजिक स्थिति ज्ञात करने हेतु निम्नलिखित उद्देश्यों का निर्माण किया गया है:

* सहायक अध्यापक, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, (छत्तीसगढ़)

शोध की विधि

1. कमार एवं भुंजिया जनजाति समुदाय के शैक्षिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. कमार एवं भुंजिया जनजाति के समुदाय की सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना।

प्रस्तुत शोधपत्र के उद्देश्यों की प्रकृति के आधार पर सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया है।

न्यादर्श चयन

प्रस्तुत शोध अध्ययन में छत्तीसगढ़ के जनजाति बहुल गरियाबंद ब्लाक के 20 विद्यालयों का चयन उद्देश्यपूर्ण न्यादर्श विधि के माध्यम से किया गया है। तथा इन विद्यालयों में से 94 बालक एवं बालिकाओं का चयन यादृच्छिकी न्यादर्श विधि के माध्यम से किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत शोध में प्रदत्तों के संकलन हेतु स्वयं निर्मित प्रश्नावली का प्रयोग गया है जिसमें कमार एवं भुंजिया जनजाति की सामाजिक स्थिति से जुड़े 20 प्रश्न रखे गये हैं।

सांख्यिकी अभिप्रयोग

प्रदत्तों का संकलन कर उनके विश्लेषण हेतु सांख्यिकी की प्रतिशत विधि का उपयोग कर निष्कर्ष प्राप्त किये गये हैं।

प्रदत्तों की व्याख्या एवं विश्लेषण

गरियाबंद ब्लाक के 20 विद्यालयों में 94 विद्यार्थियों का सर्वे प्रश्नावली के माध्यम से किया गया है।

1. कमार व भुंजिया जनजाति समुदाय के बालक-बालिकाओं की शैक्षित स्थिति का अध्ययन करना।

तालिका-1 के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कमार जनजाति के 77.14 प्रतिशत बालक एवं 91.67 प्रतिशत बालिकायें तथा भुंजिया के 86.67 प्रतिशत बालक एवं 88. 24 प्रतिशत बालिकायें नियमित रूप से विद्यालय जाते हैं। इसी प्रकार 100 प्रतिशत कमार एवं भुंजिया जनजाति के बालक एवं बालिकाओं को अध्ययन के साथ घरेलू कार्य भी करने पड़ते हैं। सरकारी तंत्र द्वारा सुविधाओं का लाभ 51.43 प्रतिशत बालक एवं 33.33 प्रतिशत कमार बालिकायें उठाती हैं। इसी प्रकार भुंजिया के 36.67 प्रतिशत बालक एवं 47.06 प्रतिशत बालिकायें लाभ उठाती हैं। 100 प्रतिशत कमार एवं भुंजिया विद्यार्थी सरकार द्वारा प्रदत्त छात्रवृत्ति का उपभोग करते हैं। तथा 100 प्रतिशत इन

तालिका-1

कमार एवं भुंजिया जनजाति समुदाय की शैक्षिक स्थिति (प्रतिशत में)

पूछे गये प्रश्न	कमार				भुंजिया			
	बालक		बालिकायें		बालक		बालिकायें	
	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं
क्या आप नियमित रूप से विद्यालय जाते हैं?	77.14	22.86	91.67	8.33	86.67	13.33	88.24	11.76
क्या आपको अध्यापन के साथ घरेलू कार्य भी करने पड़ते हैं?	100	–	100	–	100	–	100	–
क्या आपको सरकार द्वारा दी जाने वाली शैक्षणिक सुविधाएं प्राप्त होती हैं?	57.43	48.57	33.33	66.67	36.67	63.33	47.06	32.94
क्या आपको सरकार द्वारा प्रदत्त छात्रवृत्ति मिलती है?	100	–	100	–	100	–	100	–
क्या आप उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं?	100	–	100	–	100	–	100	–

जनजातियों के बालक उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु उत्सुक पाये गये।

तालिका-2 के अनुसार सामाजिक स्थिति का विश्लेषण करने से यह स्पष्ट होता है कि कमार जनजाति के 82.86 प्रतिशत बालक एवं 91.67 प्रतिशत बालिकाओं तथा भुंजिया जनजाति के 90 प्रतिशत बालक एवं 88.24 प्रतिशत बालिकाओं के अनुसार पंचायत सुविधा प्रदान की जाती है। इसी तरह 100 प्रतिशत कमार एवं भुंजिया जनजाति के बालक-बालिकाओं को समाज के नियमों की जानकारी है एवं वे उनका पालन भी करते हैं। इसी तरह (शादी की आयु लड़कों की 21 एवं लड़कियों की 18) के संदर्भ में कमार के 45.72 प्रतिशत बालक एवं 33 प्रतिशत बालिकाओं का मत हां था। उसी प्रकार भुंजिया जनजाति के बालक-बालिकाओं का मत क्रमशः 46.66 प्रतिशत एवं 47.06 प्रतिशत पाया गया। भाषा के प्रयोग के संदर्भ में 100 प्रतिशत कमार बालक-बालिकाएं

तालिका–2

कमार एवं भुंजिया जनजाति की सामाजिक स्थिति (प्रतिशत में)

पूछे गये प्रश्न	कमार				भुंजिया			
	बालक		बालिकायें		बालक		बालिकायें	
	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं
क्या आपके समुदाय को पंचायत की सुविधा प्राप्त होती हैं?	82.86	17.14	91.67	8.33	90	10	88.24	11.76
क्या आप अपने समाज के नियमों से परिचित हैं?	100	–	100	–	100	–	100	–
क्या आप समाज के नियमों का पालन करते हैं?	100	–	100	–	100	–	100	–
क्या आपके समाज में विवाह की उम्र (लड़को की 21 एवं लड़कियों की 18 वर्ष) है?	45.72	54.28	33%	67	46.66	53.34	47.06	52.9
आप कौन सी भाषा का प्रयोग करते हैं?								
1. हिंदी	100	–	100	–	100	–	100	–
2. छत्तीसगढ़ी	100	–	100	–	100	–	100	–
3. कमार	100	–	100	–	–	–	–	–
4. भुंजिया	–	–	–	–	100	–	100	–

छत्तीसगढ़ी, हिंदी व कमार भाषा का प्रयोग करते हैं। उसी प्रकार 100 प्रतिशत भुंजिया बालक–बालिकाएं हिंदी, छत्तीसगढ़ी एवं भुंजिया भाषा का प्रयोग करते हैं।

तालिका–3 के अनुसार सामाजिक स्थिति का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि 100 प्रतिशत कमार एवं भुंजिया जनजाति के बालक–बालिकाओं में विवाह अपने ही समाज में करते हैं। तथा इन समुदायों में दहेज प्रथा नहीं पाई जाती है। ऐसा इन बालक–बालिकाओं का मत है। इस प्रकार कमार के 31.43 प्रतिशत बालक एवं 41.67 प्रतिशत बालिकाओं का मत है कि समाज में बहुपत्निक विवाह पाया जाता है। जबकि भुंजिया जनजाति के 100 प्रतिशत बालक–बालिकाओं के अनुसार नहीं पाया

तालिका-3

कमार एवं भुंजिया जनजाति की सामाजिक स्थिति (प्रतिशत में)

पूछे गये प्रश्न	कमार				भुंजिया			
	बालक		बालिकायें		बालक		बालिकायें	
	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं
क्या आप विवाह अपने समाज में ही करते हैं?	100	–	100	–	100	–	100	–
क्या आपके समाज में दहेज प्रथा प्रचलित है?	–	100	–	100	–	100	–	100
क्या आपके समाज में बहुपत्निक प्रथा है?	31.43	68.57	41.67	58.33	–	100	–	100
आपके समाज में किस प्रकार के विवाह की								
मान्यता दी जाती है?								
(अ) विवाह-सेवा	100	–	100	–	100	–	100	–
(ब) विवाह-अपहरण	–	–	–	–	–	–	–	–
(स) विवाह-गंधर्व	–	–	–	–	–	–	–	–
(द) विवाह-हठ	–	–	–	–	–	–	–	–
(इ) विवाह-परीक्षा	–	–	–	–	–	–	–	–
क्या आप बड़े बुजुर्गों की सलाह का पालन करते हैं?	100	–	100	–	100	–	100	–

तालिका-4

कमार एवं भुंजिया जनजाति की सामाजिक स्थिति (प्रतिशत में)

पूछे गये प्रश्न	कमार				भुंजिया			
	बालक		बालिकायें		बालक		बालिकायें	
	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं
धर्म से जुड़े निम्नलिखित संस्कार है?जन्म/मृत्यु/विवाह/अन्य	100	–	100	–	100	–	100	–
क्या आपके समुदाय में निम्नलिखत त्यौहार मनाये जाते हैं?								
(अ) नवाखाई	100	–	100	–	100	–	100	–
(ब) दशहरा	100	–	100	–	100	–	100	–
(स) दीपावली	100	–	100	–	100	–	100	–
(द) होली	100	–	100	–	100	–	100	–
क्या आपके समाज में जादू-टोने, अंधविश्वास आदि को मानते हैं?	100	–	100	–	100	–	100	–
क्या आपके समाज में बलि प्रथा का प्रचलन है?	100	–	100	–	100	–	100	–
क्या आपके समुदाय में निम्नलिखित वस्तुएं एवं पशुओं की बलि दी जाती है	100	–	100	–	100	–	100	–
(अ) नारियल	100	–	100	–	100	–	100	–
(ब) बकरा	71	29	66.67	33.33	90	10	44.12	5.88
(स) मुर्गी	71.14	22.81	83.33	16.67	73.33	26.67	82.35	17.65
(द) सुअर	40	60	41.67	58.33	30	70	35.29	64.71
(इ) भेड़	40	60	58.33	41.67	56.67	43.33	64.71	35.29

जाता। दोनों समुदाय में विवाह-सेवा है, इसकी मान्यता दी गई है। दोनों ही समुदाय का 100 प्रतिशत मत है कि हम अपने बुजुर्गों की सलाह का पालन करते हैं।

तालिका-4 से स्पष्ट होता है कि 100 प्रतिशत कमार एवं भुंजिया समुदाय के विद्यार्थियों का मत है कि जन्म/मृत्यु/विवाह आदि संस्कार पाये जाते हैं। दोनों समुदाय के 100 प्रतिशत बालक एवं बालिकाओं का मत है कि हर तरह के त्योहार जैसे नवाखाई, दशहरा, होली, दीपावली आदि मनाए जाते हैं। इन समाजों में जादू-टोना, अंधविश्वास, बलिप्रथा का प्रचलन है। 100 प्रतिशत विद्यार्थियों में यह मत पाया गया। इसी तरह कमार एवं भुंजिया जनजाति के बालक-बालिकाओं का मत है कि समुदाय में नारियल, बकरा, मुर्गी, सुअर और भेड़ की बलि दी जाती है।

निष्कर्ष

प्रदत्तों के विश्लेषण के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष पाए गए:

1. कमार एवं भुंजिया जनजाति के बालक-बालिकायें नियमित रूप से विद्यालय जाते हैं। साथ ही विद्यालय में नियमित रूप से पढ़ाई व अन्य गतिविधियां भी कराई जाती हैं। इन समुदाय के बच्चों में यह भी पाया गया कि ये पढ़ाई के साथ घर का भी काम करते हैं। सरकार द्वारा इन्हें शैक्षणिक सुविधाएं प्रदान की जाती हैं। जैसे- गणवेष, पुस्तक, भोजन, छात्रवृत्ति आदि। इनमें उच्च शिक्षा प्राप्त करने की उत्सुकता पाई गई। क्योंकि वे अन्य समुदाय के बराबर पहुंचना चाहते हैं।
2. इन दोनों समुदाय की सामाजिक स्थिति का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष पाया गया कि-
   (i) इनको पंचायत सुविधा प्राप्त होती है। इन समुदायों के बालिक-बालिकाएं सामाजिक नियमों से परिचित हैं एवं उनका पालन करते हैं। विवाह की उम्र (18 एवं 21 वर्ष) है। लगभग आधे प्रतिशत विद्यार्थी इसके पक्ष में पाये गए। इस समाज के लोग हिंदी, छत्तीसगढ़ी, कमार एवं भुंजिया भाषा का प्रयोग करते हैं।
   (ii) इन दोनों समुदाय का मत है कि ये विवाह अपने समाज में ही करते हैं। इनमें दहेज प्रथा प्रचलित नहीं है। कमार जनजाति में लगभग 25 प्रतिशत विद्यार्थियों का मत था कि बहुपत्निक विवाह पाये जाते हैं। जबकि भुंजिया जनजाति में शत्प्रतिशत विद्यार्थियों का मत है कि बहुपत्निक विवाह नहीं होते हैं। इन दोनों समुदाय में विवाह को, विवाह-सेवा के रूप में मान्यता दी गई है। इन दोनों समुदाय में बालक-बालिकाओं का शत्प्रतिशत मत है कि हम बड़े बुजुर्गों की

सलाह का पालन करते हैं।

(iii) कमार एवं भुंजिया जनजाति के बालक–बालिकाओं के आधार पर इनके धर्म में जन्म/मृत्यु/विवाह तथा अन्य संस्कार होते हैं। साथ ही इन समाज के लोग विभिन्न त्यौहारों जैसे– नवाखाई, दशहरा, दीपावली एवं होली आदि सभी त्योहारों को मनाते हैं। इन समाज में जादू–टोने, अंधविश्वास, बलिप्रथा आदि कुरीतियां भी प्रचलित हैं।

अत: कमार एवं भुंजिया जनजाति की सामाजिक स्थिति का अध्ययन करने से मुख्य निष्कर्ष यह प्राप्त हुआ कि इनकी सामाजिक स्थिति औसत पाई गई। शिक्षा की कमी के कारण इन समुदाय के बड़े–बुजुर्गों द्वारा कई प्रकार की कुरीतियों, अंधविश्वासों का पालन किया जाता रहा है। इन गलत प्रथाओं को शिक्षा के माध्यम से दूर किया जा सकता है। अत: सरकार को चाहिए कि इनकी शैक्षिक स्थिति में सुधार लाया जाए। शैक्षिक सुविधाएं प्रदान किया जाए। इनकी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाया जाए जिससे ये प्रलोभित होकर शिक्षा प्राप्त कर, अज्ञानता को दूर कर अपना विकास कर सकें।

सुझाव

प्रस्तुत शोधपत्र के निष्कर्षों के आधार पर निम्नलिखित सुझाव दिये गये हैं:

1. कमार एवं भुंजिया जनजाति के बालक–बालिकाओं को अध्यापक द्वारा समय–समय पर दिशा निर्देश देने की आवश्यकता है जिससे इनका आत्मविश्वास बढ़े और वे शिक्षा प्राप्त करने हेतु अग्रसर हों।
2. सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने हेतु विद्यार्थियों को व्यवसाय संबंधी शिक्षा प्रदान की जाए।
3. सरकार द्वारा शैक्षिक एवं आर्थिक सुविधाएं प्रदान की जाएं जिससे इनका विकास हो सके और इनकी सामाजिक स्थिति मजबूत हो सके।
4. इन समुदाय के अभिभावकों एवं बुजुर्गों की रुढ़िवादी मानसिकता को दूर करने हेतु सभा, संगोष्ठियां, जनसंचार माध्यम, नुक्कड़–नाटकों आदि का आयोजन किया जाए।

संदर्भ

पाठक एवं त्यागी, शिक्षा के सामान्य सिद्धांत, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा.

डॉ. आर.ए. शर्मा, फन्डामेन्टल ऑफ एजुकेशन रिसर्च, लॉयल बुक डिपो, मेराठ.

पांच वर्षीय दीर्घकालीन (कमार एवं भुंजिया परियोजना), (2007), कमार एवं भुंजिया कमार एवं भुंजिया विकास अभिकरण, गरियाबंद.

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

दस्तावेज़

मैकाले का शिक्षा पर विवरण पत्र

वी के. राय*

चूँकि ऐसा प्रतीत होता है कि लोक शिक्षा समिति को निर्मित करने वाले कुछ सज्जनों का यह विचार है कि जिस कोर्स को उन्होंने अब तक जारी रखा है वह ब्रिटिश संसद द्वारा सन् 1813 में सख्ती से निर्धारित किया गया था, तथा मानो उनका विचार सही है। इसलिए एक वैज्ञानिक अधिनियम इसमें परिवर्तन लाने के लिए आवश्यक होगा। इसलिए अपने समक्ष उपस्थित प्रतिकूल कथनों की तैयारी में मैने भाग न लेने के लिए सही सोचा है तथा जिस बात को इस विषय के संदर्भ में मुझे कहना है उसको मैं सुरक्षित रखूंगा जब तक ये भारत के परिषद के एक सदस्य के रूप में मेरे समक्ष नहीं आता है।

मुझे ऐसा प्रतीत नहीं होता है कि किसी भी तरह से व्याख्या करने से संसद के कानून का वह अर्थ नहीं लगाया जा सकता है, जो लगाया गया है। इसमें अध्ययन की जाने वाली विशिष्ट भाषाओं तथा विज्ञानों की उपस्थिति नहीं है। साहित्य के पुनरूद्धार तथा उन्नति और ब्रिटिश राज क्षेत्र में रहने वाले भारतीय विद्वानों को प्रोत्साहन तथा भारतीयों में विज्ञान का प्रचार एवं प्रसार करने के लिए एक अलग धनराशि की व्यवस्था की गयी है। ऐसा तर्क दिया जाता है, तथा ऐसा मान लिया गया है कि, साहित्य से संसद का अभिप्राय संस्कृति तथा अरबी साहित्य से ही हो सकता है, तथा भारतीय विद्यान को सम्मानित उपाधि वे उनको नहीं देंगे जो मिल्टन की कविता, लॉक के तत्वमीमांसा तथा न्यूटन के भौतिकशास्त्र से परिचित होंगे। परंतु वे उस उपाधि को उन्हीं को प्रदान करेंगे जो हिंदुओं के पवित्र ग्रन्थों में कुश-घास के विविध उपयोगों तथा देवता में विलयन के रहस्यों के विषय में अध्ययन किया होगा। यह एक संतोषजनक विवरण नहीं प्रतीत होता

* रीडर एवं अध्यक्ष, शि.वि. श्री दुर्गा जी स्ना. मा. चण्डेश्वर, आजमगढ़, उत्तर प्रदेश

है। एक सामान्य उदाहरण के रूप में मान लिया गया कि मिस्र जो एक समय यूरोप के देशों में ज्ञान के क्षेत्र में श्रेष्ठ था, परंतु अब पतन के गर्त में है, राज्य को साहित्य के पुनरूद्धार तथा उन्नति के लिए एवं वहां के विद्वानों का प्रोत्साहन करने के लिए एक धनराशि को विनियोजित करना पड़े तो क्या कोई अनुमान लगा सकता है, कि इसका तात्पर्य अपने देश के युवकों को कई वर्षों तक चित्रलिपि का अध्ययन करने से है, जिससे मिस्र के सबसे बड़े देवता आसिरिस से संबंधित अस्पष्ट पौराणिक कथाओं के विषय में खोज की जा सके, तथा बिल्लियों एवं प्याजों से संबंधित संभावित सत्यता का निश्चयीकरण किया जा सके? क्या उसे समरसता से रहित होने का दोष लगाया जा सकता है। यदि वह संकेतचिन्हों को समझने के लिए अपने विद्यार्थियों को निर्देशित करने के लिए स्थान पर वह इनको आज्ञा दे कि सभी विद्वानों तथा इनके विषय प्रमुख कुंजी के रूप में प्रयुक्त होने वाली अंग्रेजी तथा फ्रेंच के विषय में निर्देश प्राप्त करें।

पुरानी व्यवस्था के समर्थक जिन वाक्यों पर निर्भर रह कर अपना तर्क प्रस्तुत करते हैं वे सत्य नहीं हैं, तथा इसके विपरीत के शब्द निर्णायक तथा सत्य है। मेरी मान्यता है कि एक लाख रुपया भारत के केवल साहित्य के पुनरूद्धार के लिए अलग नहीं रखा गया है, बल्कि भारतीयों को विज्ञानों के ज्ञान से परिचित एंव इनकी उन्नति के लिए भी ऐसा किया गया है। इन्हीं शब्दों से ही मेरे द्वारा वांछित परिवर्तन संभव हो सकेंगे।

यदि परिषद मेरे विचारों से सहमत है, तो किसी वैधानिक कानून की आवश्यकता नहीं है। यदि वे मुझसे असहमत हैं तो मैं 1813 की उस धारा को समाप्त करने के लिए एक छोटा सा कानून तैयार करूंगा जिससे कठिनाई उत्पन्न होती है।

मैं जिस तर्क को सोच रहा हूँ वह कार्यवाही के केवल आकार को प्रभावित करती है। लेकिन शिक्षा के प्राच्य व्यवस्था के समर्थकों के पास एक अन्य तर्क है, जिसको यदि हम स्वीकार करें तो सभी परिवर्तनों के खिलाफ निर्णायक सिद्ध होगा। वे सोचते हैं कि लोगों का विश्वास वर्तमान व्यवथा में ही निहित है,तथा किसी भी कोष के विनियोजन में किसी भी तरह का परिवर्तन, जिसको अरबी तथा संस्कृत अध्ययन के प्रोत्साहन के लिए किया गया है, पूर्ण रूप से नष्ट करने का कार्य होगा। यह समझना आसान नहीं है, कि तर्क की प्रक्रिया से वे, इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं।

साहित्य के प्रोत्साहन के लिए जो अनुदान लोगों की थैली से दिये जाते हैं वे उन अनुदानों से एकदम भिन्न नहीं होते हैं, जो वास्तविक या कथित वस्तुओं से संबंधित होते

हैं। उदाहरण के लिए हम एक आरोग्य निवास को एक स्थान पर प्राप्त करें तथा जिसको हम स्वास्थ्य के लिए लाभदायक मानते हैं। क्या हम आरोग्य निवास को उसी स्थान पर रखने के लिए प्रतीक्षा करेंगे। यदि इसका परिणाम हमारे आशाओं के अनुरूप प्राप्त नहीं होगा? हम एक खम्भे के निर्माण का कार्य आरंभ करते हैं। क्या कार्य बंद करना लोगों के विश्वास का उलंघन होगा, यदि बाद में इस तर्क को प्राप्त करते हैं, कि भवन का निर्माण निरर्थक होगा? सम्पति का अधिकार नि:संदेह पवित्र होता है, परंतु इन अधिकारों को सबसे अधिक संकट में उस समय डाला जाता है जब इसको असंबंधित चीजों से जोड़ा जाता है तथा कष्ट प्रदान करने वाली यह प्रथा आज सामान्य रूप से व्याप्त है। जो लोग सम्पति पवित्रता का दुरूपयोग करते हैं, वे वास्तव में सम्पति की संख्या के दुरूपयोग की कमजोरी तथा अलोकप्रियता को प्रदान करते हैं। यदि सरकार ने किसी व्यक्ति को औपचारिक रूप में कोई आश्वासन दिया है या संभव है कि सरकार ने किसी व्यक्ति के दिमाग में तार्किक आवाज को उत्तेजित किया हो कि वह संस्कृति या अरबी के एक शिक्षक या अधिगमकर्ता के रूप में कुछ आय प्राप्त करेगा, तो मैं उस व्यक्ति के आर्थिक हितों का सम्मान करूँगा। लोग विश्वास पर प्रश्न करने की संभावना के कष्ट के स्थान पर व्यक्ति के प्रति उदारता के संबंध में गलती करना पसंद करूँगा लेकिन यह बात करना कि सरकार ने कुछ भाषाओं तथा कुछ विद्वानों को पढ़ाने के लिए प्रतिज्ञा किया है, यद्यपि वे भाषायें निरर्थक हो सकती हैं, विज्ञान विस्फोटक हो सकते हैं, मुझे पूर्ण रूप से निरर्थक लगता है किसी भी लोक निर्देशों में एक भी ऐसा वाक्य नहीं है जिससे यह अनुमान लगाया जा सके कि भारतीय सरकार ने इस विषय के संदर्भ में कोई प्रतिज्ञाा किया है, या इन कोषों को अपरिवर्तनीय रूप से निश्चित दिशा के रूप में कभी सोचा है। परंतु यदि ऐसा हुआ रहता तो मैं अपने पूर्वाधिकारों की क्षमता को अस्वीकार करता, यदि इस विषय पर उन्होंने इस प्रकार की प्रतिज्ञा से बांध दिया होता। मान लिजिए कि एक सरकार ने पिछली शताब्दी में भव्य ढंग से एक कानून बनाया होता कि सभी लोगों को समय के अंत में चेचक के लिए टीका लगवाना चाहिए। क्या जेनर के खोज के बाद भी उस सरकार को इस प्रथा पर डटे रहने के लिए बाध्य रहना पड़ेगा। ये प्रतिज्ञायें, जिनको कार्यरूप देने के लिए कोई दावा नहीं करता तथा जिसे कोई भी व्यक्ति छुटकारा नहीं प्रदान करता, ये निहित अधिकार जो किसी में भी व्याप्त नहीं रहते हैं, यह एक ऐसी सम्पति है जिसका कोई स्वामी नहीं है,यह एक डकैती है जिसके प्रभाव से कोई और अधिक गरीब नहीं होता है। ये बातें उसी को समझ में आ सकती हैं जो मुझसे अधिक

उच्च शंकाओं से युक्त है। मैं समझता हूँ कि यह विचार निश्चित शब्दों का एक स्वरूप है जिसको इंग्लैण्ड तथा भारत दोनों में नियमित रूप से प्रत्येक दुरूपयोग की रक्षा के लिए किया जाता है, तथा जिसके लिए अन्य कोई विचार को निश्चित नहीं किया जा सकता है।

मैं कौंसिल के गवर्नर जनरल को सर्वोत्तम ढंग से भारत में अधिनियम की उन्नति के उद्देश्य के लिए एक लाख रुपये के खर्च के लिए अधिकारी मानता हूँ। मेरे मत से वायसराय को अरबी और संस्कृति शिक्षा पर व्यय होने से रोकने का उतना ही अधिकार है, जिताना मैसूर में चीता मारने वालों के पारितोषिक को कम करने का, या यह निर्देश दें कि धर्मपीठ में अलापने के लिए लोगों के धन को खर्च नहीं किया जायेगा।

अब हम विषयवस्तु के सारांश पर आते हैं। हम लोगों को एक कोष को विनियोजित करना है, क्योंकि इस देश के लोगों के मानसिक सुधार के लिए निर्देश देगी। साधारण प्रश्न यह है कि इस धन को विनियोजित करने का सबसे लाभदायक तरीका क्या है? सभी लोग एक बात पर सहमत हैं कि भारत के इस भाग में बोली जाने वाली भाषा के पास न तो साहित्य और न तो वैज्ञानिक सूचनायें हैं तथा ये इतनी अविकसित तथा गंवारू है, कि जब तक उनहें किसी वाह्य भंडार से संपन्न नहीं किया जाएगा, उनमें कोई महत्वपूर्ण ग्रंथ रचित नहीं हो सकते। अत: यह सर्वमान्य प्रतीत होता है कि, उच्च स्तर की शिक्षा द्वारा उस वर्ग का बौद्धिक सुधार जिनके पास इसके लिए साधन है, किसी ऐसी भाषा में ही संभव है, जो उनके बोल चाल की भाषा नहीं है।

वह भाषा कौन होगी? समिति का एक भाग चाहता है कि वह भाषा अंग्रेजी हो, तथा दूसरा संस्कृत तथा अरबी की वकालत करता है। मेरी समझ से प्रश्न यह है, कि कौन-सी भाषा अधिक सीखने योग्य है?

मेरे पास न तो संस्कृत, न तो अरबी का ज्ञान है। परंतु इसके महत्व के विषय में सही अनुमान के लिए मैने कुछ किया है। मैने प्रख्यात अरबी व संस्कृत कार्यों के अनुवाद को पढ़ा है। पूर्वी भाषाओं के प्रसिद्ध विद्वानों से यहां और अपने देश में बातचीत की है। मैं प्राच्यवादियों द्वारा ही प्राच्य अधिगम के विषय में निर्धारित महत्व को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ। मैने एक व्यक्ति को अस्वीकार करते नहीं पाया है, कि अच्छे पुस्तकालय की एक आलमारी मात्र अरब के संपूर्ण साहित्य के बराबर होगी। वास्तव में पश्चिमी साहित्य की मूलभूत श्रेष्ठता को स्वीकार, समिति के वे सदस्य ही करते हैं जो शिक्षा के

प्राच्य योजना को समर्थन करते हैं। इस पर कोई विवाद नहीं होगा कि साहित्य का यह भाग जिसमें पूर्वी लेखक सर्वश्रेष्ठ है, वह कविता है। मैं किसी प्राच्यवादी से नहीं मिला हूँ जिसने यह मानने का साहस किया है, कि महान यूरोप के देशों की कविताओं से अरबी व संस्कृत की कविताओं की तुलना की जा सकती है। अब हम कल्पना के कार्यों से ऐसे कार्यों की ओर गुजरते हैं जिसमें तथ्यों को रिकार्ड किया जाता है। सामान्य सिद्धांतों की खोज की जाती है तो यूरोप वालों की श्रेष्ठता पूर्ण रूप से अपमानीय हो जाती है। मुझे विश्वास है कि यह कथन अतिश्योक्तिपूर्ण नहीं है, कि एकांकित ऐतिहासिक सूचनायें इंग्लैण्ड के प्रारंभिक विद्यालयों में प्रयुक्त तुच्छ संक्षेपण से भी कम महत्वपूर्ण है। भौतिक तथा नैतिक दर्शन की प्रत्येक शाखा में दो देशों की सापेक्षिक स्थिति सामान्यतया एक ही जैसी है। मामले की स्थिति क्या है? हम लोगों को, ऐसे लोगों को शिक्षित करना है जो अपनी मातृ भाषा से शिक्षित नहीं हो सकते हैं हम लोगों को कोई विदेशी भाषा अवश्य पढ़ना चाहिए अपनी भाषा के दावे को दोहराने की आवश्यकता नहीं है। यह पश्चिम की भाषाओं में भी सर्वश्रेष्ठ है। यह काल्पनिक कार्यों से भरी हुई है। यह सर्वश्रेष्ठ भाषाओं से कम नहीं है, जिनको ग्रीक के लोगों में हमें विश्वास में दिया है। इसमें वाकपटुता के प्रत्येक किस्म के नमून हैं, ऐतिहासिक रचनायें हैं जिनको यदि केवल विवरणात्मक माना जाय तब भी अपराजित रही है। नीतिपरक तथा राजनीतिक निर्देशों के वाहन के रूप में इसकी कोई समानता नहीं है। यह मानव जीवन तथा मानव स्वभाव के लिए न्यायपूर्ण तथा सजीव चित्रण है। यह तत्व मीमांसा, आचार्य, शास्त्रों, सरकार, न्यायशास्त्र तथा व्यापार के लिए गूढ़ अनुमान है। इसमें पूर्ण तथा सत्य सूचनायें हैं, जिनसे प्रत्येक प्रयोगिक विज्ञान जो स्वास्थ्य का संरक्षण करता है, आराम को बढ़ाता है, तथा व्यक्ति मस्तिष्क को बढ़ाता है, का प्रतिनिधित्व होता है। जो भी इस भाषा को जानता है उसकी पहुँच उस विशाल मानसिक धन तक है, जिसको इस पृथ्वी के सबसे बुद्धिमान राष्ट्रों में 90 पीढ़ियों के दौरान निर्मित तथा संचालित किया है। विश्वास के साथ यह कहा जा सकता है कि, जो साहित्य इस भाषा में है वह 300 वर्ष पूर्व संसार के सभी भाषाओं में व्याप्त साहित्य से अधिक महत्व का है। यही सब कुछ नहीं है। भारत में अंग्रेजी भाषा शासकों के वर्ग की भाषा है, तथा राजधानियों के उच्च वर्ग के भारतीय भी इसे बोलते हैं। साथ ही यह संभावना है कि पूर्वी समुद्रों में यह व्यापार की भाषा बन जाय। आस्ट्रेलिया तथा अफ्रीका में उन्नतशील यूरोपियों की भाषा यही है जिनका संबंध दिन-प्रतिदिन भारत से बढ़ रहा है। अत: चाहें हम साहित्य के आंशिक मूल्य पर विचार

करें, अथवा देश की विशिश्ट स्थिति पर, हम देखेंगे कि भारतीयों के लिए अंग्रेजी ही सबसे हितकर भाषा होगी।

अब हमारे सम्मुख प्रश्न केवल यह है कि जब हम इस भाषा को पढ़ा सकते हैं तो क्या हम उन भाषाओं को पढ़ायेंगे जिनमें सर्वसम्मति से किसी भी विषय पर ऐसी पुस्तक नहीं है, जिनकी तुलना हमारे ग्रंथों से हो सके। जब हम यूरोपीय विज्ञान पढ़ा सकते हैं तो क्या हम ऐसे विज्ञान पढ़येंगे जो खराब हैं, जब हम सच्चा इतिहास तथा दर्शन पढ़ा सकते हैं तो क्या हम सरकारी रुपये में ऐसे चिकित्सा सिद्धांत पढ़ायेंगे, जिन पर अंग्रेजी के पशु चिकित्सकों तक को लाज आयेगी अथवा वह ज्योतिष जिस पर स्कूलों की अंग्रेजी बालिकायें हंस पड़ेंगी, इतिहास जिसमें 30 फुट लंबे राजा का वर्णन है, जिनके राज्य 30 हजार वर्ष तक चलते थे और ऐसा भूगोल जिसमें शीरे और मक्खन का वर्णन है।

हम लोग पथ प्रदर्शन के लिए अनुभव से रहित नहीं हैं। इतिहास अनेक अनुरूप उदाहरणों को प्रस्तुत करता है, और वे सभी एक ही पाठ को पढ़ाते हैं। वर्तमान समय में अधिक दूर जाने की आवश्यकता नहीं है, वो महत्वपूर्ण उदाहरण हैं, जिसे संपूर्ण समाज के मस्तिष्क की प्रेरणा मिली है, ज्ञान को बिखेरा गया है, कला एवं विज्ञानों को ऐसे देशों में रोपा गया है जो अब तक अनभिज्ञ एवं जंगली रहे हैं।

पहला उदाहरण जिसका मैं जिक्रकर रहा हूँ वह 15वीं शताब्दी के अंत में तथा 16वीं शताब्दी के प्रारंभ में हुए साहित्य के पुनरूद्धार से संबंधित है। उस समय पढ़ने योग्य सामग्री पुराने ग्रीक और रोमन के लेखों में व्याप्त थी। यदि हमारे पूर्वज वही कार्य किये होते, जिसको शिक्षा समिति ने अब तक किया है। क्या वे सिसरो तक टैसिटस की उपेक्षा किये होते? क्या वे अपने ध्यान को अपने देश की बोली तक सीमित किये होते, क्या वे किसी चीज को छापे नहीं होते तथा विश्वविद्यालय में पुराने इतिहास के अलावा कुछ नहीं पढ़ाये होते, तो क्या इंग्लैण्ड वहीं रहता जो आज है। मोरे और असकैम के समकालीनों के लिए ग्रीक और लैटिन भाषाओं का जो महत्व था, वही महत्व हमारी भाषा का भारत के लोगों के लिए है। इंग्लैण्ड का साहित्य शास्त्रीय पुराकाल से अधिक मूल्यवान है। कुछ विभागों में जैसे इतिहास में इसका महत्व कम है।

प्रस्तुत किया जाने वाला दूसरा उदाहरण हमारे आखों के सामने है। पिछले 120 वर्षों में वह राष्ट्र जो उसी तरह जंगली था, जैसे हमारे पूर्वज जिहाद के पूर्व थे, धीरे-धीरे

अनभिज्ञता से उठा, जिसमें डूबा हुआ था तथा आज सभ्य राष्ट्रों में अपना स्थान प्राप्त कर चुका है। मैं रूस के बारे में बोल रहा हूँ, उस देश में शिक्षितों के वर्ग का एक बड़ा समूह है। यह देश उन व्यक्तियों से भरपूर है जो राज्य की सेवा सर्वोच्च कार्यों से संपन्न करके कर सकते हैं, तथा किसी भी तरह पेरिस और लंदन परिमंडल को निर्मित करने वाले निपुण व्यक्तियों से कम नहीं हैं। यह आशा करने का कारण है कि यह विशाल साम्राजय जो हम लोगों के पितामह के समय पंजाब से भी पीछे था, वह पोती–पोतों के समय फ्रांस और इंग्लैण्ड के समीप जीवन के सुधार के संदर्भ में पहुंच जायेगा, और यह परिवर्तन कैसे संभव होगा, यह राष्ट्रीय पूर्वाग्रहों की चाटुकारिता से नहीं, युवक मुस्कोवाइट के दिमाग की बूढ़ी औरत की कहानियों से भर करके नहीं, जिन पर उसे गँवार पिता विश्वास करते थे, सेन्ट निकोलस के मस्तिष्क को झूठी पौराणिक कहानियों से भर करके नहीं, 13 सितंबर को इस संसार की रचना हुई थी या नहीं, से संबंधित महान प्रश्न का अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित करके नहीं, उसको देशी विद्वान पुकार करके नहीं, जब कि उसने ज्ञान के इन बिंदुओं की दक्षता हासिल कर लिया है, बल्कि उसको उन विदेशी भाषाओं को पढ़ा करके जिसमें सूचनाओं का बड़ा समूह व्याप्त है, तथा उन सूचनाओं को उसकी पहुंच तक सुनिश्चित करके पश्चिमी यूरोप की भाषाओं में रूस को सभ्य बनाया। इसमें मुझे संदेह नहीं है कि जो कार्य इन्होंने टार्टर जाति के लिए किया है, वहीं ये हिंदुओं के लिए कर सकती है।

और कोर्स के खिलाफ दिये जाने वाले तर्क क्या हैं जिसके लिए सिफारिश सिद्धांत और अनुभव के द्वारा की गयी है। यह कहा जाता है कि हमें देसी लोगों का सहयोग लेना चाहिए और इसको हम संस्कृत और अरबी को पढ़ाकर प्राप्त कर सकते हैं।

मैं नि:संदेह स्वीकार कर सकता हूँ कि जब एक उच्च उपलब्धि वाला राष्ट्र एक ऐसे राष्ट्र की शिक्षा का निरीक्षण करता है जो तुलनात्मक दृष्टि से अनभिज्ञ है, तो वहां के विद्यार्थियों के लिए एक ऐसे कोर्स को निर्धारित करना चाहिए जिसको अध्यापक पढ़ायेंगे। यहां पर इस विषय में कुछ कहना आवश्यक नहीं है। चूँकि यह अनुत्तरित प्रमाणों से सिद्ध किया गया है कि वर्तमान में हम देसी लोगों के सहयोग को प्राप्त नहीं कर रहे हैं। बौद्धिक स्वास्थ्य की कीमत पर बौद्धिक स्वाद के विषय में सलाह लेना खराब है। परंतु हम किसी भी पक्ष की सलाह नहीं ले रहे हैं। हम उनको सीखने से रोक रहे हैं जिसको प्राप्त करने के लिए वे ललक रहे हैं। उम उनके ऊपर दिखावटी अधिगम

को लाद रहे हैं जिससे उनमें अनिच्छा पैदा होती है।

यह इस तथ्य से सिद्ध किया जा सकता है कि हम अरबी एवं संस्कृत के विद्यार्थियों के भुगतान के लिए विवश है, जब कि अंग्रेजी पढ़ने वाले हम लोगों को भुगतान करने के लिए इच्छुक है।

इस विश्व में देसी लोगों को अपनी पवित्र भाषा के विषय में प्रेम और सम्मान से संबंधित भाषण, किसी निष्पक्ष व्यक्ति के दिमाग में, इस अविवादित तथ्य पर भारी नहीं पड़ेगा कि अपने इस विशाल साम्राज्य में हम एक भी विद्यार्थी नहीं प्राप्त कर सकते हैं जो उन लोगों को बिना उनकी भुगतान किये, उन भाषाओं को पढ़ाने नहीं देगा।

मेरे सम्मुख मदरसा का एक माह– दिसंबर 1833 का हिसाब है। अरबी विद्यार्थियों की संख्या 77 है, सभी सरकार से वजीफा प्राप्त करते हैं। भुगतान की गयी पूरी धनराशि प्रति माह 500 रुपये से अधिक है। हिसाब के दूसरी ओर यह पद है, गत मई, जून तथा जुलाई महीनों से धनराशि अंग्रेजी पढ़ने वाले छात्रों से 103 रुपये की धनराशि काट ली गयी।

मुझे बताया गया है कि केवल स्थानीय अनुभवों के अभाव के कारण इन तथ्यों पर मुझे आश्चर्य हो रहा है। भारत में विद्यार्थियों के लिए यह खोज नहीं है कि वे अपने खर्चों के आधार पर अध्ययन करें, इससे मेरे विचारों को पुष्टि मिलती है। इससे निश्चित कुछ भी नहीं है कि संसार के किसी भी कोने में लोगों को आनन्ददायक तथा लाभदायक कार्यों को करने के लिए भुगतान करना आवश्यक है। भारत इस नियम के लिए अपवाद नहीं है। भारत के लोगों को भूखे रहने पर चावल खाने के लिए तथा ठंडे मौसम में उन के कपड़ों को पहनने के लिए भुगतान की आवश्यकता नहीं है। हमारे समक्ष व्याप्त उदाहरण के समीप आने पर स्पष्ट है कि जो बच्चे अपनी भाषाओं और थोड़ा सा प्रारंभिक अंकगणित को अपने गांव के अध्यापक से पढ़ते हैं, वे अध्यापक के द्वारा भुगतान नहीं प्राप्त करते हैं। अध्यापक को शिक्षण के लिए भुगतान किया जाता है लोगों को संस्कृत और अरबी पढ़ने के लिए क्यों भुगतान किया जाता है? स्पष्ट रूप से यह सार्वभौमिक स्तर पर अनुभव किया जाता है कि संस्कृत और अरबी भाषायें हैं, जिनका ज्ञान ग्रहण करने की प्रक्रिया में उठाये गये कष्ट की क्षतिपूर्ति नहीं करता है। इन सभी विषयों के लिए बाजार की दशा निर्णायक परीक्षण है।

अन्य प्रभावों की कमी नहीं है यदि इनको प्राप्त करने की आवश्यकता का अनुभव किया जाता है। संस्कृत विद्यालय के अनेक भूतपूर्व विद्यार्थियों द्वारा एक याचिका प्रस्तुत की गयी है। याचिक दाखिला करने वालों का कहना है कि इन्होंने विद्यालय में 10 या 12 वर्षों तक अध्ययन किया है तथा उन्होंने हिंदी साहित्य और विज्ञान से अपने को अवगत कराया है। उन्होंने दक्षता का प्रमाण भी प्राप्त किया है, परंतु इन सभी का फल क्या है? उनका कहना है कि इन प्रमाण पत्रों के बावजूद कोई संभावना नहीं है। हम लोग अपने देशवासियों से जिस उदासीन भाव से देखे जाते हैं, उनसे सहायता तथा प्रोत्साहन की कोई आशा नहीं है। इसलिए वे प्रार्थना करते हैं कि सरकारी नौकरियों के लिए उनकी सिफारिश गर्वनर जनरल के यहां की जाय। वे उच्च सम्मान वाली नौकरियों तथा उच्च वेतन वाली नौकरियों की मांग नहीं कर रहे हैं बल्कि ऐसी नौकरियों को चाहते हैं जिससे उनका अस्तित्व बना रहे।

उनका कहना है कि वे ऐसे साधनों को चाहते हैं जिनसे शालीन जीवन व्यतीत कर सके, तथा प्रगतिशील सुधार को प्राप्त कर सके परंतु इनको बिना सरकारी सहायता के वे प्राप्त नहीं कर सकते हैं, जिसके सहयोग से वे बचपन से शिक्षित हुए हैं, तथा सुरक्षित हुए हैं। अत्यंत कारूणिक दृष्टि से निवेदन करते हुए उनका निष्कर्ष यह है कि वे विश्वस्त हैं कि अत्यंत उदारता के साथ शिक्षा ग्रहण करते समय सरकार ने उनके साथ व्यवहार किया है तथा वह सरकार उनको अंकिचनता एवं उपेक्षा में नहीं छोड़ेगी।

सरकार के समक्ष प्रस्तुत की जाने वाली याचिकाओं को क्षतिपूर्ति के लिए देखने का मैं आदी हूँ। अत्यंत अतार्किक याचिकाओं को सम्मिलित करते हुए मैं यह कह सकता हूँ कि सभी याचिकाएं इन मान्यता पर आगे बढ़ती हैं, कि कुछ हानि हुई तथा कुछ गलतियों से कष्ट हुआ है।

निश्चित रूप से यह पहले आवेदक हैं जिन्होंने मुफ्त में शिक्षित होने के कारण या बारह वर्षों तक सरकार के सहयोग से प्राप्त करने के बाद सुसज्जित साहित्य और विज्ञान की दुनिया में भेज दिये जाने के कारण क्षतिपूर्ति की मांग किया है। वे अपनी शिक्षा का प्रतिनिधित्व एक चोट के रूप में करते हैं, तथा चोट जो चोट सरकार की उनको हर्जाना देने के लिए दावा करने का अधिकार देती है तथा पीड़ा के समय दी जाने वाली वजीफा की राशि अपर्याप्त क्षतिपूर्ति के रूप में थी और मुझे संदेह नहीं है कि वे सही हैं। उन्होंने अपने जीवन का सर्वोत्तम समय उन चीजों को सीखने में व्यर्थ ढंग से खर्च किया है

जिससे न तो उनको रोटी मिलती है और न सम्मान। निश्चित रूप से हम लोगों ने कुछ लाभ के साथ इन व्यक्तियों को निर्धन तथा दुखी होने की लालच से बचा लिया होता। निश्चित रूप से लोगों का पालन पोषण लोगों को भार बनने के लिए तथा पड़ोसियों के तिरस्कार का पात्र बनने के लिए राज्य के छोटे अभियोग की कीमत पर किया जा सकता है। परंतु ऐसी ही हमारी नीति है। सत्य एवं असतय के संघर्ष में भी हम निष्पक्ष नहीं रहते हैं, हम देशवासियों को उनके वंशानुगत पूर्वाग्रहों के प्रभावों में छोड़ देने से भी संतुष्ट नहीं रहते हैं। पूरब के देशों में ठोस रूप से विज्ञान की प्रगति में होने वाली स्वभाविक कठिनाईयों में हम अपने द्वारा निर्मित कठिनाईयों को जोड़ रहे हैं।

उदार दानों तथा पुरस्कारों को जिनको सत्य के प्रचार में भी देना नहीं चाहिए था उनको हम झूठे स्वाद तथा झूठे दर्शन पर उदारतापूर्वक खर्च कर रहे हैं।

इस कार्य से हम उस बुराई को उत्पन्न कर रहे हैं जिससे हम डरते हैं। हम उस विरोध को तैयार कर रहे हैं जिसको हम नहीं प्राप्त करते हैं। जो हम अरबी और संस्कृत कालेजों पर खर्च कर रहे हैं वह सत्य के निर्मित पूर्ण रूप से हानि है, यह उदार दान अशुद्धियों के चैम्पियन तैयार करने के लिए दिया जाता है। इससे एक नि:सहाय शिकारियों का घोंसला ही केवल निर्मित नहीं होगा बल्कि धर्मान्धों का जन्म होगा जो आवेश एवं लाभ से प्रेरित होकर के शिक्षा की अच्छी योजना के खिलाफ आवाज उठा देंगे। यदि देशी भारतीयों में परिवर्तन के खिलाफ कोई विरोध होता है जिसको कि मैं सुझाव देता हूं तो यह विरोध अपनी व्यवस्था के प्रभाव के कारण होगा। इसका नेतृत्व उन लोगों के द्वारा होगा जिनका सहयोग हम लोगों के वजीफों से मिला है तथा जिनका प्रशिक्षण हम लोगों के कालेजों में हुआ है। जितनी देर तक हम अपनी व्यवस्था में दृढ़ रहेंगे उतना ही विरोध भयानक होगा। यह उन रंगरूटों द्वारा पुनर्वर्जित होगा जिनको हम भुगतान कर रहे हैं। यदि देशी समाज को अपने आप छोड़ दिया जाय तो जानकारी प्राप्त करने के लिए हम लोगों को कोई कठिनाई नहीं होगी, सारी मरमराहट प्राच्य लाभों से होगी जिनको हम लोगों ने बनावटी साधनों से निर्मित किया है तथा पालन पोषण करके शक्तिशाली बनाया है।

एक अन्य तथ्य यह है जो अकेले यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि देसी लोगों की भावना ऐसी नहीं है जिसे पुरानी व्यवस्था के समर्थक प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हैं। समिति ने एक लाख रुपये से अधिक धनराशि का व्यय अरबी तथा संस्कृत की

पुस्तकों को छापने का निश्चय किया है। इन पुस्तकों का कोई खरीदार नहीं है। पुस्तक की एक कापी शायद ही कभी बिक जाती है। तेइस हजार पुस्तकों को प्राय: पन्नों के रूप में है केवल पुस्तकालयों को भरने मात्र के लिए है अथवा इस समिति की इमारती लकड़ियों के कमरों को भरने के लिए ही हैं। समिति ने प्राच्य साहित्य से संबंधित कुछ पुस्तकों का मुफ्त में वितरण करने का उपाय सोचा है, परंतु जितनी तेजी से इनकी छपाई हो रही है उतनी तेजी से ये किसानों को वितरित नहीं कर पायेंगे।

निरर्थक कागजों के नये समूहों की वृद्धि के लिए प्रत्येक वर्ष 23 हजार रुपये का व्यय होता है जिसके विषय में मेरा विचार यह है कि संख्या पहले से ही अधिक है। विगत तीन वर्षों में 60 हजार रुपये का व्यय इस तरह से हुआ है। अरबी और संस्कृत की किताबों की बिक्री से एक हजार रुपये की भी प्राप्ति नहीं हुई है। इसी बीच विद्यालय किताब समाज प्रति वर्ष 7 या 8 हजार अंग्रेजी की पुस्तकों को बेच रहा है, तथा छपवाने का खर्च का ही केवल भुगतान नहीं हो रहा है बल्कि लागत पर 20 प्रतिशत का लाभ भी हो रहा है।

यह तथ्य कि हिंदू कानून प्रमुख रूप से संस्कृत की किताबों से तथा मुस्लिम कानून अरबी किताबों से सीखा जाना है, प्रश्नों के परिप्रेक्ष्य में वैध नहीं ठहरता। हम लोगों को संसद से निर्देश प्राप्त हुआ है कि हम भारत के कानूनों को क्रमबद्ध तरीकों से तैयार करें। कानून आयोग के सहयोग को इस उद्देश्य के लिए हम लोगों को प्रदान किया गया है। जैसे ही संहिता को जारी किया जाता है, शास्त्र एवं हृदय मुन्सिफ तथा सदर अमीन के लिए निरर्थक हो जायेंगे। मैं आशा करता हूं तथा विश्वास करता हूं कि जो विद्यार्थी अब मदरसों तथा संस्कृत विद्यालय में प्रवेश ले रहे हैं, उनके अध्ययन पूरा करने के पूर्व ही यह बड़ा कार्य पूर्ण हो जायेगा। यह स्पष्ट रूप से अनर्गल प्रतीत होता है कि उदीयमान पीढ़ी को पुरुषत्व प्राप्त करने के पूर्व ऐसी शिक्षा दी जाए जिससे हम लोग बदलना चाहते हैं।

लेकिन यहां यह तर्क है जो तर्क संगत नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि संस्कृत और अरबी ऐसी भाषायें हैं जिनमें सैकड़ों लाखों लोगों के लिए पवित्र पुस्तकों को लिखा गया है इसलिए ये विशेष प्रोतसाहन के लिए पात्र हैं। निश्चित रूप से भारत वर्ष की ब्रिटिश सरकार का कर्तव्य है कि वह न केवल सभी धार्मिक प्रश्नों के संदर्भ में सहनशील रहे बल्कि निष्पक्ष रहे। परंतु कम आंतरिक मूल्य वाले साहित्य के अध्ययन को प्रोत्साहन

देना क्योंकि ऐसा साहित्य महत्वपूर्ण विषयों के संदर्भ में अशुद्धियों को उत्पन्न करता है, उचित नहीं है। यह बात तर्क नैतिकता तथा पवित्र रूप से सुरक्षित की जाने वाली निष्पक्षता से मेल नहीं रखती है। इसको स्वीकार किया जाता है कि यह भाषा उपयोगी ज्ञान के संदर्भ में बंजर है इसको हमें इसलिए पढ़ाना है कि यह निरर्थक अंधविश्वास के लिए उपयोगी है, हमें झूठा इतिहास, झूठी ज्योतिष तथा झूठा चिकित्सा शास्त्र इसलिए पढ़ाने होंगे क्योंकि उनका समिश्रण एक झूठे धर्म से हो रहा है। हम धर्म के विषय में तटस्थ हैं, तथा मुझे विश्वास है कि सदा तटस्थ रहेंगे और धर्म परिवर्तन करने वाले इसाईयों को कभी खुले रूप में प्रोत्साहन नहीं देंगे। जब हमारा व्यवहार इस प्रकार का होगा तो क्या हम राज कोष में से लोगों को रिश्वत देकर इस बात को सीखने में उनकी युवावस्था नष्ट हो जाने देंगे कि गदहे के छू जाने पर किस तरह शरीर पवित्र करना चाहिए अथवा बकरी के मारने पर पाप– प्रछालन के लिए कौन से वेद श्लोकों का जाप करना चाहिए।

प्राच्य अधिगम के समर्थकों द्वारा ऐसा निश्चित तौर पर माना जाता है कि देसी लोग अंग्रेजी के अनुपालन से अधिक की उपलब्धि नहीं प्राप्त कर सकते हैं। इस बात को सिद्ध करने का प्रयास वे नहीं करते हैं, परंतु हमेशा वे इसके विषय में संकेत देते हैं। वे इस शिक्षा को स्पेलिंग, पुस्तक शिक्षा के रूप में मनोनीत करते हैं। वे इस मान्यता को स्वीकार करते हैं कि यह प्रश्न एक ओर हिंदी और अरबी साहित्य तथा विज्ञान के गूढ़ ज्ञान और बनावटी अंग्रेजी के प्रारंभिक ज्ञान के बीच का है। यह बात केवल मान्यता पर ही आधारित नहीं है, बल्कि सभी तर्क एवं अनुभव के विपरीत हैं। हम जानते हैं कि सभी देशों के विदेशी हमारी भाषा को पर्याप्त रूप में सीखते हैं जिससे इसमें व्याप्त गूढ़ ज्ञानको वे प्राप्त कर लें। तथा मुहावरों से युक्त लेखकों द्वारा लिखे गये विषय सामग्री तथा उत्तम और लालित्य से भरी हुई साहित्य का स्वाद ले सकें। इसी कस्बे में देशी लोग हैं जो अंग्रेजी भाषा में राजनैतिक अथवा वैज्ञानिक प्रश्नों को प्रभावकारी व सूक्ष्मता क साथ विवेचना करने में दक्ष हैं। मैने इसी प्रश्न को सुना है जिस पर लिख रहा हूँ तथा जिसके विषय में विवेचना मैने देशी सज्जनों के साथ उदारता और बुद्धिमानी के साथ किया है तथा जो लोग शिक्षा समिति के किसी सदस्य को ख्याति प्रदान करेगा।

इस महाद्वीप के साहित्य समूह में किसी विदेशी को प्राप्त करना अस्वाभाविक है जो अनेक हिंदुओं के समान निपुणता और परिशुद्धता से अंग्रेजी में अपने विचारों से

व्यक्त कर सके। इस बात को कोई और अस्वीकार नहीं करेगा कि हिंदू के लिए अंग्रेजी इतना कठिन है जितना अंग्रेज के लिए ग्रीक भाषा फिर भी एक अंग्रेज युवक संस्कृत पाठशालाओं में उत्तीर्ण होने वाले अभागे विद्यार्थियों से कम समय में ही ग्रीक लेखकों के संयोजन को पढ लेता है, आनन्द प्राप्त करता है तथा आसानी से अनुकरण करने लगता है।

एक अंग्रेज युवक को हिरोडोट्स व सोफेकल्स के द्वारा लिखी गयी विषय सामग्री को पढ़ने में जितना समय लगता है उससे आधे समय में हिंदू ह्यूम तथा मिल्टन के द्वारा लिखे लेखों को पढ़ लेगा। सारांश के रूप में जो मैने कहा है उसके आधार पर मैं सोचता हूं कि स्पष्ट रूप से 1813 में संसद के कानून के व्यक्त या अंतर निहित प्रतिज्ञाओं से बंधे नहीं है।

हम अपने कोष को अपनी इच्छा से खर्च के लिए स्वतंत्र हैं। हमें इसका उपयोग उस शिक्षण में करना चाहिए जो जानने योग्य है। संस्कृत व अरबी भाषा जानने से अंग्रेजी की जानकारी ज्यादी अच्छी है। इस देश में लोग संस्कृत व अरबी भाषाओं में पढ़ाये जाने के लिए इच्छुक हैं। कानून की भाषा तथा धर्म की भाषाओं के रूप में संस्कृत तथा अरबी का कोई विशिष्ट अधिकार हमें वचनबद्ध करने के लिए नहीं है। इस देश के लोगों को अंग्रेजी का अच्छा विद्वान बनाना संभव है तथा इस दिशा में हमारा प्रयास निर्देशित होना चाहिए।

उन सज्जनों की बात मैं पूर्ण रूप से मानता हूं जिनके विचारों का मैं विरोध करता हूं। मैं मानता हूं कि सीमित साधनों के बल पर सभी लोगों को शिक्षित करना असंभव है। हम सर्वोत्तम यह कर सकते हैं कि एक ऐसा वर्ग निर्मित करें जो हमारी ओर से उन लाखों लोगों के बीच व्याख्या कर सके। हम ऐसा वर्ग तैयार करना चाहते हैं जो रक्त तथा रंग में भारतीय हो परंतु स्वाद, विचारों, नैतिकता तथा बुद्धि में अंग्रेज हो। इस वर्ग के द्वारा इस देश की भाषाओं को परिष्कृत करने, पश्चिमी नामावली से वैज्ञानिक शब्दों को लेकर भाषाओं को सम्पन्न करने की, तथा अनेक लोगों को ज्ञान प्रदान करने के लिए उचित माध्यम बनाने की जिम्मेदारी होगी।

मैं वर्तमान हितों का सम्मान करता हूं। मैं उन व्यक्तियों के साथ उदारता के साथ व्यवहार करूँगा जो आर्थिक व्यवस्था के लिए आशा करते हैं परंतु मैं उस शिक्षा व्यवस्था को नष्ट करूँगा जो हम लोगों द्वारा पोषित किया गया है। मैं अरबी एवं संस्कृत

में पुस्तकों की छपाई को तुरंत बंद कर दूंगा। मैं कलकत्ता के मदरसा और संस्कृत कालेज को समाप्त कर दूंगा। बनारस ब्राह्मणी अधिगम का बड़ा केंद्र है तथा देलही अरब अधिगम का। यदि हम बनारस के संस्कृत कालेज तथा दिल्ली के अरबी कालेज को सुरक्षित रखते हैं तो हम पूरब की भाषाओं के लिए पर्याप्त योगदान करेंगे। मैं सुझाव दूँगा कि विद्यार्थियों को कोई वजीफा नहीं दिया जाना चाहिए तथा लोगों को स्वतंत्र छोड़ देना चाहिए जिससे वे प्रतिद्वन्दी शिक्षा की व्यवस्थाओं में अपना चुनाव कर सकें। इसमें हमें उन्हें उस चीज का अध्ययन करने के लिए घूस नहीं देना चाहिए जिसका अध्ययन वे नहीं करना चाहते हैं। कोष, जिस पर हम लोगों का अधिकार होगा, उसको कलकत्ता के हिंदू कालेज तथा फोर्ट विलियम्स के महाप्रांतों और आगरा के विद्यालयों के प्रोत्साहन का कार्य आसान हो जायेगा तथा इन विद्यालयों में अंग्रेजी भाषा की दशा अच्छी होगी तथा इसको सही ढंग से पढ़ाया जा सकेगा।

यदि परिषद के अध्यक्ष का निर्णय इस तरह का होता है तो मैं अनुमान लगाता हूं कि मैं अपने कार्यों को अधिकतम उत्साह और तत्परता से करूँगा यदि ऐसा नहीं होता है तथा वर्तमान व्यवस्था में कोई परिवत्रन नहीं होता है तो मैं समिति के अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दूँगा। मैं अनुभव करता हूं, मैं उस स्थिति में कम उपयोग का रह जाऊँगा तथा मुझको अपना समर्थन उसको देना होगा जिसको मैं भ्रमित मानता हूं। मेरा विश्वास है कि वर्तमान व्यवस्था सत्य की प्रगति को बढ़ाती नहीं है परंतु समाप्त हो रही अशुद्धियों के संदर्भ में रोक लगाती है। मैं सोचता हूं कि सम्मानित लोक शिक्षा समिति में हमारा कोई अधिकार नहीं है। इस बोर्ड में सरकारी धन का व्यय उन किताबों की छपाई में व्यय होता है जो निरर्थक होती हैं तथा जिनसे निरर्थक इतिहास, निरर्थक मीमांसा, निरर्थक भौतिक शास्त्र तथा निरर्थक भौतिक विज्ञान को प्रोत्साहन मिलता है और इनसे ऐसे विद्वानों का समूह उत्पन्न होता है जो विद्वता को बाधा और दगा के रूप में प्राप्त करते हैं। ये विद्वान शिक्षा–यापन करते समय सरकार पर निर्भर रहते हैं तथा इनकी शिक्षा पूर्ण रूप से इतनी निरर्थक होती है कि जीवन भर वे भूखे रहते हैं तथा सरकार पर निर्भर रहते हैं। यदि इसकी कार्यवाही में परिवर्तन नहीं होता है तो मैं इसमें भाग नहीं लूंगा तथा अपनी जिम्मेदारियों को नही निभा पाऊँगा। मैं इस दशा को न केवल निरर्थक मानता हूं बल्कि इसे सकारात्मक ढंग से हानिकारक स्वीकार करता हूँ।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 17, अंक 1, अप्रैल 2010

चिंतक और चिंतन

भारतीय शैक्षिक पुनर्जागरण में स्वामी विवेकानन्द का योगदान

संजीव शुक्ला*

भारत के स्वाधीनता संघर्ष मे 19वीं शताब्दी के धार्मिक, सामाजिक एवं शैक्षिक सुधार आन्दोलनों का प्रमुख योगदान रहा है। इन्हें 'आधुनिक भारतीय नवजागरण का प्रतीक' कहा जा सकता है। अनेक विचारकों का मानना है कि भारत के राष्ट्रीय चेतना की जागृति में इन आन्दोलनों की प्रमुख भूमिका रही है।

डॉ.जकारिया ने अपनी पुस्तक 'रिनांसा इण्डिया' में स्पष्ट किया है कि भारत की पुनर्जागृति मुख्यत: आध्यात्मिक थी तथा एक राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप धारण करने के पूर्व इसने अनेक सामाजिक-धार्मिक आन्दोलनों का सूत्रपात किया। इन सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलनों के कारण जो सांस्कृतिक, वैचारिक संघर्ष चला, उसने राष्ट्रीय चेतना को जन्म देने और उसके विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

इस संघर्ष ने जो बौद्धिक, सांस्कृतिक चेतना जागृत की उससे लोगों को भविष्य के प्रति नयी दृष्टि मिली। यद्यपि इन आन्दोलनों का अधिक जोर धार्मिक, सामाजिक एवं शैक्षिक सुधारों की तरफ ही था, किन्तु इनकी कोख से भारतीय राष्ट्रवाद का जन्म हुआ, जिसकी परिणति आगे चलकर भारतीय स्वतंत्रता में हुयी।

भारतीय पुनर्जागरण की बात मुख्यत: भारत की सामसिक संस्कृति के पुनर्जागरण के सन्दर्भ में किया जा सकती है। वस्तुत: भारतीय इतिहास में धार्मिक सहिष्णुता ने ही भारत के राष्ट्रीय संस्कृति का स्वरूप निर्धारित किया है, वहीं इस देश की विविध उपलब्धियों के मूल में सर्जनात्मक शक्ति का काम करता रहा है, उसी ने वह नैतिक मानदंड, वह

* प्रवक्ता (बी.एड. विभाग), श्री गांधी परास्नातक एवं प्रशिक्षण महाविद्यालय, सिधौली, सीतापुर, उत्तर प्रदेश

सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और गरिमामय रंगमंच तैयार किया है, जिस पर भारत के इतिहास का नाटक अभिनीत हुआ है। धार्मिक सुधार आन्दोलनों के साथ ही नवजागरण का आरम्भ हुआ, जो बाद में राजनीतिक मुक्ति की दिशा में दुर्दभ वेग से अग्रसर हुआ।

श्री अरविंद ने एक स्थान पर लिखा है– ''भारतीय जीवन के सभी महान आन्दोलनों का उदय नयी आध्यात्मिक विचारधारा और प्रायः नये धार्मिक कर्मकांड से हुआ है। उन्नीसवीं सदी में हुये भारतीय पुनर्जागरण के बारे में यह सूक्ति निःसन्देह सच है। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि गहन परिवर्तन का प्रबलतम हेतु वह परिपुष्ट दार्शनिक प्रवृति या धार्मिक भावना हो सकती है, जो भारत की भारतीयता का ऐसा अभिन्न अंग है कि यदि उसका लोप हो जाये, तो इस देश की महान आत्मा ही निर्जीव हो जाये।

इन आन्दोलनों के कार्यों के परिणामस्वरूप भारत अपनी प्राचीन धार्मिक एवं सांस्कृतिक गरिमा की ओर सचेत हुआ ओर विदेशी सत्ता के प्रभुत्व के परिणामस्वरूप उत्पन्न निराशा, विपन्नता और दयनीयता की भावनाओं का परित्याग कर शक्तिशाली चरण बढ़ाने की ओर अग्रसर हुआ। भारत ने एक नये युग में पदार्पण किया और भारतवासी पूर्ण स्वतंत्रता और निर्भीकता के साथ स्वयं को अभिव्यक्त करने का प्रयास करने लगा। भारत में एक ऐसी शक्तिशाली लहर फैल गयी, जिसने जीवन में एक नवीन स्पंदन और गति उत्पन्न कर दी। भारत सामाजिक, धार्मिक, शैक्षिक एवं राजनैतिक जीवन में एक क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ।

आधुनिक पाश्चात्य संस्कृति के संघात ने भी भारतीय समाज में नवजीवन का संचार किया क्योंकि उसके द्वारा तर्कसंगत तथा उदार विचारधारा को प्रोत्साहन मिला, जिसके परिणाम स्वरूप देश में वर्तमान काल के विस्मयजनक पुनर्जागरण का उदय हुआ।

19वीं शताब्दी में जिन धर्म एवं समाज सुधार आन्दोलनों का प्रादुर्भाव हुआ, वे भारतीय संस्कृतिक की महिमा तथा श्रेष्ठता से प्रेरित थे तथा इसे देश के धार्मिक, सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन में पुनर्वासित करना चाहते थे जीवन के अन्य क्षेत्रों के अतिरिक्त शिक्षा के क्षेत्र में भी इन आन्दोलनों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन आन्दोलनों से भारतीय कुंभकर्णी निद्रा भंग हुई और उनके अंग–प्रत्यंग में जागरण के चिन्ह प्रकट होने लगे।

इस जागृति का अभिव्यक्तिकरण उन अनेक आन्दोलनों द्वारा हुआ, जो थोड़े–थोड़े अन्तर पर उत्पन्न हुये। 19वीं सदी के प्रारम्भिक दशकों में धार्मिक और सामाजिक सुधार

की प्रक्रिया का श्रीगणेश हो गया था, किन्तु शताब्दी के उत्तरार्द्ध में यह महान धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनों के रूप में प्रस्फुटित हुयी।

19वीं शताब्दी में भारत में जितने धार्मिक और सामाजिक पुनर्जागरण आन्दोलन हुए उनकी मौलिक विशेषता यह थी कि वे भौतिकवाद के विपरीत अध्यात्मवाद पर आधारित थे। उन आन्दोलनों के समस्त नेतागण जैसे– राजाराम मोहन राय, केशवचन्द्र सेन, गोविन्द रानाडे, महर्षि दयानन्द सरस्वती, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, श्रीमती एनी बेसेंट आदि ने बुद्धि पर आधारित धर्म का समर्थन किया और ईश्वरीय सत्ता को स्वीकार्य किया। इन महापुरुषों ने भारतीयों को भारतीय संस्कृति के शाश्वत आदर्शों की ओर प्रेरित किया, क्योंकि उनका विश्वास था कि जब तक भारतीय धर्म व संस्कृति पर छाई काई को दूर नहीं किया जायेगा, तब तक भारतीयों का वैयक्तिक, सामाजिक शैक्षिक और सांस्कृतिक जीवन निर्मल व स्वस्थ नहीं हो सकता। इस प्रकार इनका लक्ष्य आदर्श भारतीय संस्कृति का उत्थान करना था। धार्मिक और सामाजिक क्षेत्रों में इन आन्दोलनों के नेताओं ने रूढ़िवाद, अन्धविश्वास, कर्मकांड, पाखण्ड का तीव्र खण्डन किया। अधिकांश नेताओं ने मूर्तिपूजा का विरोध किया, बहुदेववाद पर प्रहार किया व महन्तशाही तथा पुजारीवाद और कर्मकांड की आलोचना की।

19वीं. शताब्दी में जो सामाजिक और धार्मिक आन्दोलन, बौद्धिक पुनर्जागरण की भावना को लेकर धर्मगत रूढ़ियों, मान्यताओं तथा सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने के लिये विकसित हुये। उनमें ब्रह्म समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन, थियोसोफिकल सोसायटी उल्लेखनीय हैं। इस सुधार आन्दोलनों के अन्तर्गत मुख्यत: राजाराम मोहन राय, महर्षि दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, तथा श्रीमती एनीबेसेंट के धार्मिक, सामाजिक एवं शैक्षिक विचारों ने 19वीं शताब्दी के पुनर्जागरण आन्दोलन का नेतृत्व किया।

यह आवश्यक था कि मानव धर्म का वास्तविक आधारभूत पुनरुज्जीवन उसके परम्परागत ढाँचे के भीतर से उद्‌भूत हो। यह कार्य विश्व के धार्मिक इतिहास के दो उज्ज्वलतम नवरत्नों स्वामी रामकृष्ण और स्वामी विवेकानन्द के हाथों होना था। इन उज्जवलतम आध्यात्मिक पुरुषों के जीवन और उपदेश आधुनिक भारतीय विचारधारा के इतिहास के प्रेरणास्रोत बने। दक्षिणेश्वर के सन्त और उनके महान शिष्य ने समकालीन भारत के मानस पर अमिट प्रभाव डाला और स्वामी विवेकानन्द के निधन के एक शताब्दी बाद भी इस प्रभावशक्ति और गम्भीरता में रंचमात्र भी कमी नहीं आयी है। दोनों

विभूतियों पर विरचित साहित्य भी विपुल परिणाम में उपलब्ध हैं।

दक्षिणेश्वर (कोलकाता) में रहते हुए काली के अनन्य भक्त के रूप में रामकृष्ण को अपने भीतर आध्यात्मिक शक्ति के प्रभूत विकास का अनुभव होने लगा और उन्होंने आध्यात्मिक साधनाओं और सिद्धियों का विस्मयकारी जीवन आरमी कियां आत्म-विभोरता, दिव्य-दर्शन, समाधि आदि उनके जीवन के नित्य कर्म हो गये थें भगवान का प्रत्यक्ष दर्शन पाने की उनकी उत्कट अभिलाषा अंतत: सफल हुयी और वह अनेक आध्यात्मिक गुरुओं के निर्देशन में हिन्दू धर्म ग्रन्थों में वर्णित गूढ़ संबंधों का अनुभव प्राप्त करने की दिशा में प्रवृत्त हो गये। भक्तिभाव की प्रबलतम आत्मविभोरता से लेकर वेदान्त के अन्तिम लक्ष्य अव्यक्त परमब्रह्म के साथ तादाम्य स्थापित करने वाली निर्विकल्प समाधि ा की परम उदात्त शक्ति तक का अद्‌भुत अनुभव वह प्राप्त करने लगे। इसके बाद उन्होंने इस्लाम धर्म और इसाई धर्म की आध्यात्मिक प्रक्रियाओं का पालन शुरु किया और दोनों ही में उनको सुखद आध्यात्मिक अनुभूति हुयी। इन सभी असाधारण अनुभवों का समन्वित परिणाम बहुत बड़ा था। उनको यह प्रत्यक्ष और अविभूतकारी अनुभूति हुयी कि हिन्दू धर्म और इतर धर्मों के आध्यात्मिक मार्गों का ठीक तरह से अनुसरण किया जाए, तो वे सभी एक ही लक्ष्य पर पहुँचते हैं।

सभी धर्म मानव को एक ही ईश्वर की ओर ले जाने वाले हैं। ईश्वर के अनेक रूप हैं, वह अल्लाह है या खुदा, राम है या कृष्ण, ईसा है या बुद्ध सभी में उसी ईश्वर के तत्व समाहित हैं। अत: विभिन्न धर्मावलम्बियों का परस्पर झगड़ा व्यर्थ है, आत्मा और परमात्मा एक दूसरे के अभिन्न अंग हैं। उनके अनुसार ज्ञान और शक्ति दोनों ही मार्गों से ब्रह्म की प्राप्ति का मार्ग अपनाया।

स्वामी रामतीर्थ एक दिव्य पुरुष थे। दक्षिणेश्वर में शान्त जीवन बिताते हुये भी श्रीरामकृष्ण ने एक आध्यात्मिक दीप-स्तंभ की तरह हिन्दू समाज में नवजीवन की तीव्र प्रकाश-किरणें फैला दीं। जाति-सम्प्रदायों, थोथे संस्कारों और कर्मकाण्डों में उनका विश्वास न था। वह दिव्य अनुभूति के दूत थे। वह उन दुर्लभ महापुरुषों में से एक थे, जो समय-समय पर प्रकट होकर आध्यात्मिक क्रान्ति का बीजारोपण करते हैं।

उनकी ख्याति चतुर्दिक फैल गयी और उनके पास कोटि-कोटि, जन समुदाय खिंचा चले आने लगा। उनके पास आने वाले लोगों में बंगाल के समकालीन साहित्य और संस्कृति के अग्रणी व्यक्ति भी थे। इनके साथ-साथ अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त युवक भी उनकी

ओर आकृष्ट हुये। इन शिष्यों में नरेन्द्र नाथ दत्त भी थे, जो बाद में स्वामी विवेकानन्द के नाम से विश्वविख्यात हुए।

अपनी मृत्यु के कुछ क्षण पहले श्री रामकृष्ण ने स्वामी विवेकानन्द को अपना आध्यात्मिक उत्तराधिकारी घोषित किया। सन् 1886 में अपने गुरुदेव के स्वर्गवासी होने पर विवेकानन्द ने शिष्यों का एक समन्वित और गुरु समर्पित संघ बनाने का भार स्वयं संभाला। विवेकानन्द में ऊर्जा शारीरिक बल और अपूर्व बुद्धि वैभाव का अद्‌भुत समन्वय था। वे शरीर, स्वभाव, शिक्षा, बुद्धि आदि सभी बातों में अपने गुरु से भिन्न थे, पर उनके प्रभाव में आ गये। इस प्रकार सुकरात और प्लेटो के बाद पहली बार उन्होंने गुरु–शिष्य संबंध का अद्‌भुत दृष्टांत प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने गुरु के आदर्शों को सम्पूर्ण सभ्य संसार में फैलाया।

विवेकानन्द सत्रह वर्ष की आयु में परमहंस श्री रामकृष्ण के मंत्र से अनुप्राणित हुये और पच्चीस वर्ष की आयु में परिव्रज्जा ग्रहण कर समग्र भारत की यात्रा पर निकल पड़े। जिस समाज के कष्टों से व्याकुल होकर उन्होंने यह मार्ग ग्रहण किया था उस समाज को सर्वप्रथम निकट से देखना बहुत आवश्यक था। वह सदैव यही आग्रह किया करते थे कि यदि हमें देश की समस्या का सही निदान ढूँढना है तो सर्वप्रथम इस देश को देखना होगा और समझना होगा। इस कल्याण व्रत की साधना के लिये केवल स्वार्थ त्याग ही नहीं, बल्कि सर्वस्व त्यागा करना होगा। अपनी इस यात्रा में उन्होंने जनता के वास्तविक स्वरूप को देखा। भारत माता के इस स्वरूप को देखकर वह व्याकुल हो उठे और उससे प्रेरित उन्होंने भारतीय युवकों को एक संदेश दिया– ''आगामी पचास वर्षों तक तुम लोग अपनी जननी जन्म–भूमि की अराधना करो। इन वर्षों में दूसरे देवताओं को भूल जाने में कोई हानि नहीं है। इस समय तुम्हारा एक मात्र देवता है तुम्हारा राष्ट्र।'' अपनी इस यात्रा में स्वामी जी ने धर्म के अवनतिमूलक रूढ़िगत विश्वासों का स्थान–स्थान पर खण्डन किया।

इसी समय सन् 1893 में शिकागो के विश्व मेले में आयोजित होने वाली धार्मिक सभा का समाचार मिला। घोषित किया गया था कि पृथ्वी के सभी धर्म सम्प्रदायों के प्रतिनिधि व्याख्याताओं के रूप में सभी में सम्मिलित हो सकेंगे। स्वामी जी के कुछ उत्साही दक्षिण भारतीय शिष्यों ने उन्हें हिन्दू धर्म के प्रतिनिधि के रूप में अमेरिका भेजने का संकल्प किया। इस कार्य में उन्हें कुछ कठिनाई तो अवश्य हुयी, पर वे अमेरिका

की यात्रा-व्यवस्था करने में सफल हो गये। एक अज्ञात और ख्यातिहीन भारतीय होते हुए भी उन्होंने अपने व्यक्तित्व की शक्ति से उस सभी में अपनी धाक जमाने में सफलता प्राप्त की। उनके पहले दिन के भाषण ने, जिसमें उन्होंने सदस्यों को 'अमेरिका के भाइयों और बहनों' कहकर सम्बोधित किया, उस बड़ी सभी में सनसनी फैला दी और उसके बाद के भाषणों से एक अपूर्व धर्म-प्रचारक की प्रतिष्ठा मिल गयी। न्यूयार्क हेराल्ड ने लिखा कि वह पार्लियामेंट ऑफ रिलीजन्स (धर्म सभा) में आने वाले सदस्यों में नि:संदेह सबसे महान व्यक्ति थे। इस पत्र में यह भी लिखा है कि 'उनके भाषण सुनने के बाद हम समझते हैं कि भारत जैसे सुशिक्षित देश में धर्म-प्रचारक भेजना हमारी मूर्खता है। अंग्रेजों ने सारे संसार में यह प्रसिद्ध कर रखा था कि भारत अर्द्ध-सभ्य कुलियों का देश है। यहाँ के लोग दार्शनिक और वैचारिक ज्ञान से शून्य, अन्धविश्वास के अन्धकार में डूबे हुए हैं। किन्तु स्वामी विवेकानन्द की अमेरिका यात्रा ने संसार के सम्मुख भारत का वह चित्र उपस्थित किया, जिसे देखकर सारा संसार चकित रह गया। विवेकानन्द पश्चिम में सच्चे हिन्दू धर्म का संदेश लेकर गये और उन्हें अध्यात्म-तत्व का वास्तविक सार दिया। कर्मकाण्ड, आडम्बर और पाखंड हिन्दू धर्म नहीं है। उन्होंने वहाँ वेदान्त के उदात्त सिद्धांतों को परिष्कृत और प्रवाहमयी वाणी में अभिव्यक्त किया।

अमेरिका और इंगलैण्ड की दिग्विजय के पश्चात् वह सन् 1817 में भारत लौट आये यहाँ उन्हें एक वीर सेनानी जैसा सत्कार और सम्मान मिला। उनके विदेश प्रवास की अवधि में उनके विजय के अनेक समाचार भारत पहुँचते रहे, जिसे फलस्वरूप देशवासियों में आध्यात्मिक परम्परा के प्रति एक नया स्वाभिमान जागृत हुआ। स्वामी विवेकानन्द की विलक्षण यात्रा ने सिद्ध कर दिया कि आध्यात्मिकता के क्षेत्र में भारत शाश्वत और सनातन जगतगुरु है।

राष्ट्र को अनूठी धार्मिक चेतना प्रदान करने वाले स्वामी विवेकानन्द का स्मरण केवल इस उद्धरण के साथ करना पर्याप्त नहीं हैं कि उन्होंने शिकागो में अपने ओजस्वी भाषण से सम्पूर्ण विश्व को चमत्कृत कर दिया था। फिर कौन सा तथ्य है जो इन्हें महत्वपूर्ण बनाता है? व्यक्तिगत विकास के साथ आस्था और अध्यात्म की वैज्ञानिक व्याख्या, यही बिंदु है, जो नरेन्द्र जैसे साधारण पुरुष का विवेकानन्द के रूप में कायान्तरण करता है और उन्हें स्थापित करता है- अमिट स्मृति वाले महापुरुष के रूप में।

भारत लौटने पर स्वमी जी ने कन्याकुमारी से कश्मीर तक की यात्रा की। यह यात्रा

एक परिव्राजक संन्यासी की यात्रा नहीं थी। यह एक आध्यात्मिक गुरू का विजय अभियान था। इस यात्रा में उनके द्वारा दिये गये भाषणों में वाक्पटुता के साथ भारत और उसकी जनता के प्रति अगाध प्रेम व्यक्त किया गया था। उन्होंने बताया। कि एक विशिष्ट सांस्कृतिक परम्परा होते हुये भी भारत की विशाल जनता सामाजिक व आर्थिक दुर्व्यवस्था की शिकार है। हिन्दु जनता के विरूद्ध, हिन्दू धर्म के नाम पर किये जाने वाले प्रबल पाखंडो के विरूद्ध भारत माता के पवित्र नाम को कंलकित करने वाले, कठिन जाति बंधनों के विरूद्ध, और स्त्रियों पर किये जाने वाले अत्यचारों के विरूद्ध, उन्होंने बारंबार सिहंनाद किया। एक आधुनिक समीक्षक ने लिखा है कि स्वामी जी ने दूषित और पतित दुरावस्था के कृत्रिम आवरण से आच्छन्न और अंत:स्थल में निगूढ़ भारतीय जनमानस के अनंत सामर्थ्य का उद्घाटन और भारत के जाज्वल्यमान और प्रतापी भविष्य की गरिमा का उदात्त चित्र उपस्थित किया।

वास्तव में आधुनिक परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुरूप हिन्दू धर्म की पुर्नव्याख्या और पुन:प्रतिष्ठा विवेकानन्द की साधना थी। उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त नवयुवकों को अपने प्राचीन धर्म की प्रबल शक्ति और अपने चतुर्दिक विद्यमान आध्यात्मिक सम्पदा का ज्ञान कराया, जिससे उनमें नयी आशा और प्रेरणा का संचार हुआ। कोलकाता के बेलूर में उन्होंने 1897 में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। उस दिन से आज तक यह मिशन स्वामी रामकृष्ण और उनके शिष्य स्वामी विवेकानन्द के ज्ञानपूर्ण और प्रेरणाप्रद सिद्धांतों का प्रचार करता हुआ अनेक शाखाओं के माध्यम से भारत और संसार के कोने-कोने में फैल गया।

39 वर्ष की अल्पायु में 1902 में स्वामी विवेकानन्द का निधन हो गया, किन्तु अपनी मृत्यु से पूर्व वह एक वास्तविक क्रान्ति को जन्म दे चुके थे। भारत के पुनरूद्धार की आवश्यकताओं को अनुभव करते हुये उन्होंने शिक्षा के प्रसार की आवश्यकताओं को सर्वोपरि रखा। उनकी सबसे बड़ी विशेषता उनकी मानवतावादी विचारधारा है। उनका कहना था कि यदि आप ईश्वर को पाना चाहते हैं तो मानव की सेवा कीजिये। वे इस बात को भली-भाँति समझते थे कि भारत के करोड़ों लोगों की प्रमुख आवश्यकता धर्म नहीं वरन् रोटी है। शिकागो धर्म सभा में भाषण देते समय उन्होंने स्पष्ट घोषित किया कि ''वे हमसे रोटी चाहते हैं और हम उन्हें पत्थर देते हैं, एक भूखे व्यक्ति को तत्व मीमांसा पढ़ाना उसका अपमान करना है। एक सच्चे राष्ट्रवादी की भाँति उन्होंने कहा

कि ''जब तक मेरे देश का एक कुत्ता भी भूखा है, मेरे पूरे धर्म का उद्देश्य उसे भोजन देना होगा।'' हीरेन्द्र नाथ मुखर्जी के अनुसार- ''विवेकानन्द के दर्शन की मुख्य बात यह है कि आत्मा का तादात्म्य ईश्वर से स्वार्थ रहित कार्यों द्वारा ही हो सकता है'' उन्होंने भारतवासियों का आह्वान किया कि ''गर्व से बोलो कि मैं भारतवासी हूँ और प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है, मेरे प्राण है। भारत का समाज मेरी शिशु सज्जा, मेरे यौवन का उपवन और मेरे वार्द्धव्य की वाराणसी है। भारत की मिट्टी मेरा स्वर्ग है, भारत के कल्याण में मेरा कल्याण है।

स्वामी जी के राष्ट्रवादी विचाराधारा के व्यापक क्षेत्र में भारतीय समाज की सभी प्रमुख समस्यायें- निरक्षरता का अन्त, ग्रामीण पुनर्रचना, आर्थिक उत्थान, छुआछूत को दूर करना, शिक्षा प्रसार स्वास्थ्य तथा राहत सम्बन्धी कार्य सम्मिलित हैं। शिक्षा को उन्होंने जनसाधारण में जागृति उत्पन्न करने का सर्वोत्तम साधन माना। इस संदर्भ में उनका कहना था कि शिक्षा से मेरा तात्पर्य आधुनिक प्रणाली की शिक्षा से नहीं वरन् ऐसी शिक्षा से है, जिससे स्वाभिमान और श्रद्धा का भाव जाग्रत हो। उन्होंने भारतीय जनता को पिछड़े होने के कारण अज्ञानता माना। उन्होंने तत्कालीन शिक्षा प्रणाली को लिपिक उत्पन्न करने की सर्वोत्तम मशीन कहा और उसकी आलोचना की। उस समय की प्रचलित शिक्षा को उन्होंने देश की आवश्यकताओं के प्रतिकूल बताया और उसे नकारात्मक ज्ञान की संज्ञा दी।

शिक्षा के संबंध में स्वामी विवेकानन्द जी का कहना था कि ज्ञान मनुष्य में निहित है, वह कहीं बाहर से नहीं आता। उन्हीं के शब्दों में- ''शिक्षा मनुष्य में अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति मात्र है। उन्होंने अन्यत्र कहा है कि ''सब ज्ञान मनुष्य के मस्तिष्क से उत्पन्न होता है, पुस्तकालय का अनन्त पुस्तकालय आपके मस्तिष्क में ही है। इसका अर्थ है कि ज्ञान का बीज मनुष्य के मस्तिष्क में पहले से ही रहता है। शिक्षक का कार्य केवल उसका पोषण करना होता है, ताकि वह अंकुरित हो सके और बढ़ सके। बाह्य तत्व, जैसे कि अध्यापक और पाठ्यपुस्तक, केवल उसे वह पृष्ठभूमि प्रदान करते हैं, जिसके सहारे ज्ञान का बीज, जो पहले से ही मस्तिष्क में छिपा है, बढ़ता है।

स्त्री शिक्षा के संबंध में स्वामी विवेकानन्द जी का कहना था कि- ''स्त्रियों को उचित आदर देकर ही सभी राष्ट्रों ने महानता प्राप्त की है। जो राष्ट्र स्त्रियों का आदर नहीं करते वे कभी महान नहीं बन सकते। मनु का उद्धरण देते हुए कहते हैं- ''पुत्रियों

की शिक्षा उतनी सावधानी से होनी चाहिए जितनी पुत्रों की। वे चाहते थे कि भारतीय स्त्रियाँ सीता के आदर्श को अपने समक्ष रखें।

स्वामी विवेकानन्द के हृदय में जन साधारण के प्रति असाधारण सहानुभूति थी। उन्होंने कहा है कि ''जब करोड़ों लोग भूख और अज्ञानता का जीवन व्यतीत करते हैं, मैं प्रत्येक व्यक्ति को देशद्रोही समझता हूँ, जो उन्हीं के मूल्य पर शिक्षित होकर उनकी और किंचित भी ध्यान नहीं देता। स्वामी विवेकानन्द ने भारतीयों के अन्दर अद्‌भुत साहस एवं कर्मठता की भावना उत्पन्न करके, भारतीय जनता की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक और राजनीतिज्ञ आकांक्षाओं को जागृत करके, सामाजिक समानता, राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रीय स्वतंत्रता का परोक्ष या अपरोक्ष रूप से विश्वास जागृत करके उनके राष्ट्रीय स्वाभिमान के भाव को उच्च स्तर पर पहुँचाकर तथा भारत को इंग्लैण्ड के समक्ष समान स्तर पर खड़ा होना सिखाकर आधुनिक भातर के पुनर्जागरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

स्वामी विवेकानन्द के अधूरे काम को उनके शिष्यों ने रामकृष्ण मिशन के माध्यम से आगे बढ़ाया। सम्पूर्ण देश में अनेक शिक्षण संस्थाओं का संचालन कर रामकृष्ण मिशन ने शिक्षा के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया है। उनके द्वारा संचालित प्रमुख संस्थायें हैं– रामकृष्ण शारदा पीठ, बेलूर; रामकृष्ण विवेकानन्द कॉलेज, मद्रास; रामकृष्ण मिशन विद्यालय, कोयम्बटूर; रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ, देवघर; रामकृष्ण मिशन ब्वायज होम, रहरा, रामकृष्ण मिशन सिस्टर निवेदिता स्कूल, कोलकाता; रामकृष्ण मिशन स्कूल ऑफ कल्चर, कोलकाता; आदि। इन शिक्षण संस्थाओं के अतिरिक्त रामकृष्ण मिशन द्वारा देश के विभिन्न भागों में लड़कों और लड़कियों के लिये अनेक विद्यालय चलाये जा रहे हैं।

इसप्रकार मिशन के शैक्षणिक और सामाजिक सेवा कार्यों से भारतवासियों में पारस्परिक सहयोग और त्याग की भावना आयी और उनमें आत्म गौरव और राष्ट्र गौरव का भाव जाग्रत हुआ।

संदर्भ

डॉ. एच जकरिया: रेनांसा इंडिया, पृ. 14–24

डॉ. अनिला जोशी : भारत के स्वतंत्रता संघर्ष में धार्मिक, सामाजिक आन्दोलन, पृ. 3

डॉ. कर्ण सिंह : भारतीय राष्ट्रीयता का अग्रदूत, पृ. 14–15

श्री अरविन्द : दि रेनांसा इन इण्डिया, पृ. 44

डॉ. कर्ण सिंह : भारतीय राष्ट्रीयता का अग्रदूत, पृ. 16
शम्भूशरण दीक्षित : राष्ट्रीयता तथा भारतीय शिक्षा, पृ. 25
शम्भूशरण दीक्षित : राष्ट्रीयता तथा भारतीय शिक्षा, पृ. 12
डॉ. कर्ण सिंह : भारतीय राष्ट्रीयता का अग्रदूत, पृ. 18
शम्भूशरण दीक्षित : राष्ट्रीयता तथा भारतीय शिक्षा, पृ. 25
डॉ. अनिला जोशी : भारत के स्वतंत्रता संघर्ष में धार्मिक, सामाजिक आन्दोलन, पृ. 18
डॉ. कर्ण सिंह : भारतीय राष्ट्रीयता का अग्रदूत, पृ. 23-24,
डॉ. वीरेन्द्र शर्मा : भारत के पुनर्निर्माण में गाँधी जी का योगदान, पृ. 30
डॉ. कर्ण सिंह : भारतीय राष्ट्रीयता का अग्रदूत, पृ. 26-27
डॉ. महीप सिंह : भारतीयता के अद्‌भुत महानायक, दैनिक जागरण, लखनऊ,
9 फरवरी, 2006,पृ. 6
डॉ. कर्ण सिंह : भारतीय राष्ट्रीयता का अग्रदूत, पृ. 28
डॉ. महीप सिंह : भारतीयता के अद्‌भुत महानायक, दैनिक जागरण, लखनऊ,
9 फरवरी, 2006) पृ. 6
चण्डी दत्त शुक्त : अध्यात्म के वैज्ञानिक व्याख्याकार स्वामी विवेकानन्द, दैनिक जागरण, लखनऊ,
9 जनवरी, 2007
स्वामी निर्वेदानन्द : श्री रामकृष्ण एण्ड स्पिरिचुअल रेनांसा (दि कल्चर हेरिटेज ऑफ इंडिया, भाग-4)
डॉ. कर्ण सिंह : भारतीय राष्ट्रीयता का अग्रदूत, पृ. 30
स्वामी विवेकानन्द : माई लाइफ एण्ड मिशन, पृ. 134
हीरेन्द्रनाथ मुखर्जी : इण्डिया स्ट्रगल फार फ्रीडम, पृ. 81
डॉ. अनिला जोशी : भारत के स्वतंत्रता संघर्ष में धार्मिक, सामाजिक आन्दोलन, पृ. 74
शम्भूशरण दीक्षित : राष्ट्रीयता तथा भारतीय शिक्षा, पृ. 101
दि कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द : खण्ड-1, पृ. 304
दि कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द, पृ. 27
दि कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द : खण्ड-5, पृ. 41
दि कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द : खण्ड-5, पृ. 22
दि कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द : खण्ड-7, पृ. 213
दि कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द : खण्ड-5, पृ. 45
डॉ. अनिला जोशी : भारत के स्वतंत्रता संघर्ष में धार्मिक, सामाजिक आन्दोलन, पृ. 79-80
शम्भूशरण दीक्षित : राष्ट्रीयता तथा भारतीय शिक्षा, पृ. 110-112